मानव सृजन की सभी अभिव्यक्तियाँ उनके लिए अमूल्य थीं, सारा जीवन उनके लिए एक अनवरत सृजन था, लोगों के हित में निज नये मूल्यों के निर्माण की प्रक्रिया था, और उन्हें हर तरह का श्रम प्रिय था — चाहे वह साहित्यकार का हो, या खरादी का, या चित्रकार का, या बढ़ई का। आदमी के काम के मुताबिक ही वह उसकी कद्र करते थे।

—मिखाइल स्लोनीम्स्की



परिकल्पना ISBN 81-87425-47-4

माक्सिम गोर्की

बेकरी का मालिक



बेकरी का मालिक

मक्सिम गोर्की

अनुवादक:
नूरनबी अब्बासी



परिकल्पना
69 बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006

प्रथम संस्करण : जनवरी, 2002
द्वितीय संस्करण : मार्च, 2005

ISBN 81-87425-33-4 (Paper Back)
ISBN 81-87425-34-2 (Hard Bound)

परिकल्पना प्रकाशन
69 बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड,निशातगंज
लखनऊ-226006 द्वारा प्रकाशित

वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ द्वारा मुद्रित
मूल्य: रु.25.00(पेपर बैक)
रु.50.00(सजिल्द)

आवरण-परिकल्पना एवं संयोजन-**रामबाबू**

Bakeri Ka Maalik
by Maxim Gorky

इस पुस्तक के बारे में

मक्सिम गोर्की का यह उपन्यास रूसी भाषा में पहली बार मार्च, 1913 में बर्लिन से *'मालिक'* (*'द मास्टर'*) नाम से प्रकाशित हुआ था।

कुछ वर्षों बाद इसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ। अंग्रेजी से इसका हिन्दी अनुवाद प्रतिष्ठित अनुवादक **नूर नबी अब्बासी** ने किया था जो लगभग आधी सदी पहले *'बेकरी का मालिक'* शीर्षक से दिल्ली से प्रकाशित हुआ था। गोर्की की इस कृति की चर्चा अपेक्षाकृत कम होती रही है और साहित्य के अधिकांश जागरूक अध्येता तक इससे परिचित नहीं रहे हैं, लेकिन कलात्मक मूल्य की दृष्टि से यह अल्पज्ञात रचना *'फोमा गोर्देयेव'*, *'वे तीन'*, *'माँ'*, *'अर्तामानोव्स'* और सुविख्यात आत्मकथात्मक उपन्यास त्रयी की कतार में ही प्रतिष्ठित होने योग्य है।

उपन्यास के इस अनुवाद को लगभग आधी शताब्दी बाद पुनर्प्रकाशित करके हम नूर नबी अब्बासी जैसे अध्यवसायी अनुवादक और कर्त्तव्यनिष्ठ हिन्दी-सेवी के प्रति हिन्दी समाज की ओर से कृतज्ञता भी ज्ञापित करना चाहते हैं।

— कात्यायनी

लखनऊ
10 जनवरी 2002



गोर्की। चित्रकार: लेओनीद पस्तेर्नाक।

बेकरी का मालिक

हवा का बवण्डर रूखे-सूखे बर्फ के टुकड़ों, घास के पूलों और लकड़ी के छिलकों का एक भंवर सा बनाता हुआ आंगन में वेग के साथ घुस आया। और उस अंधड़ के बीच एक गोल-मटोल, थल-थल आदमी, खड़ा नजर आया जिसके शरीर पर टखनों तक नीची धारीदार तातार कमीज थी और पैरों में रबर के ऊंचे जूते। उसने हाथ स्थूल तोंद पर बांध रखे थे और वह बड़ी तीव्रता से अपने दोनों हाथों के मोटे-मोटे अंगूठे अमेठ रहा था। उसने अपनी असमान दानेदार आंखों से जिनमें दाहिनी मंजरी थी और बायीं फुल्ली, मुझे घूर कर देखा और गरजकर कहा:

'चल भाग बे – कोई काम-वाम नहीं है यहां! जाड़ों में भी कहीं काम मिलते सुना है?'

उसके सफाचट, झुर्रियोंदार चेहरे पर ग्लानि के भाव उभर आये। उसकी पीली मूंछों के चन्द बाल ऊपरी होंठ पर सहसा झुके और निचला होंठ उसके चिड़चिड़े स्वभाव के कारण नीचे को दबा और उसके छोटे-छोटे दांतों की पंक्ति नजर आई। नवम्बर का महीना था। सर्द हवा के तेज झक्कड़ चल रहे थे जिन्होंने उसकी भारी भवों वाले माथे के महीन बालों को बिखेर दिया था। प्रचंड वायु के झोंकों से उसकी पोशाक उड़ रही थी और घुटनों तक उसकी मोटी-मोटी चिकनी गावदुम टांगें खुल गई थीं जिन पर पीले रंग के रोयेंदार बाल उगे हुए थे। पर उसे कुछ भान ही न था बल्कि उससे तो यही प्रगट होता था कि वह फूहड़ शख्स पतलून पहनना भी नहीं जानता। उस व्यक्ति के अत्यंत कुरूप चेहरे में भी एक अजीब आकर्षण था और उसकी मंजरी आंखो की पलकों में एक अविचारणीय अपमान के भाव निहित थे। मुझे कोई जल्दी थी नहीं चुनांचे मैंने सोचा इससे कुछ गप्प ही लगाऊं। मैंने पूछा:–

'तुम क्या यहां के दरबान हो?'

'चल-चल, रास्ता ले अपना। तुझे क्या मैं कुछ भी हूं ...'

'अरे भाई मेरे, तुम पतलून-वतलून पहने नहीं हो, सरदी लग जायेगी न तुम्हें ...?'

भवों की जगह जो लाल दाग थे ऊपर को तन गये, बेमेल आंखें कुछ अजीब ढंग से तरेरीं और उस आदमी का शरीर कुछ इस प्रकार आगे को झुका कि ऐसा लगा अब गिरा,

अब गिरा।

'और कुछ कहना है?'

'भई तुम्हें सर्दी लग जायेगी, तुम मर जाओगे!'

'तो फिर?'

'फिर कुछ भी नहीं।'

'बस तो बहुत हो गया!' उसने अंगूठे की अमेठन थामी और गरजा। फिर उसने अपने हाथ खोल लिये, चाव से अपने कूल्हे थपथपाये और मेरी ओर झुककर मुझसे पूछा:

'यह सब तुमने किसलिए कहा?'

'अरे यों ही कह दिया। अच्छा यह बताओ मालिक वासिली सेम्योनोव से मैं मिल सकता हूं क्या?'

उसने एक ठण्डी सांस भरी और सिर से पैर तक अपनी मंजरी आंख से मुझे जांचते हुए बोला:

'मैं ही तो हूं ...'

मेरी तो पैरों तले जमीन खिसक गई, नौकरी की सारी आशाएं धूल में मिल गईं। सहसा जिस्म में कटकटाती हवा की सर्द लहरें दौड़ गईं। और मेरे सामने खड़ा आदमी बड़ा ही घिनावना लगने लगा।

'अब बोलो?' उसने मुझे तिरछी नजरों से देखते हुए कहा : 'दरबान कहा था न, एं?'

अब चूंकि वह मेरे बिल्कुल नजदीक खड़ा था मैंने यह जांच लिया कि वह नशे में धुत्त है। उसकी आंखों के ऊपर वाले लाल गूमड़ों पर बड़े महीन पीले रोएं उगे हुए थे और वह कुल मिलाकर एक भयानक चूजे जैसा दिखाई दे रहा था।

'निकल जाओ यहां से!' उसने आनंदित हो कहा और शराब की गंध के बादलों में मुझे ढंक दिया। साथ ही उसका ठूंठ जैसा बाजू हिला और उसकी बंधी हुई मुट्ठी ऐसी नजर आई जैसे शेम्पेन शराब की डाटदार बोतल हो। मैं मुड़ा और आहिस्ता-आहिस्ता फाटक की ओर चल दिया।

'अरे सुनना! तीन रूबल महीने पर काम करेगा?'

तो क्या मुझ जैसा 17 वर्षीय हृष्ट-पुष्ट, शिक्षित लड़का उस मोटू शराबी के यहां 10 कोपेक रोजाना पर काम करने लायक था? लेकिन जाड़ों का मौसम था – ठिठुर के रह जाता मैं। फिर दूसरा चारा भी क्या था। चुनांचे बड़े अनमने और जब्र से मैंने कहा:

'अच्छा करूंगा।'

'पासपोर्ट है?'

मैंने झट अपना हाथ अन्दर की जेब में डाला लेकिन मेरे मालिक ने अपना बाजू हिलाया और बुरा-सा मुंह बनाकर मना कर दिया।

'रहने दो, रहने दो! क्लर्क को देना। जाओ अन्दर चले जाओ ... वहां साश्का को पूछ लेना ...'

दुमंजिला इमारत का धुंआ भरी हुई दीवार पर एक जर्जर सायबान के नीचे दरवाजे में किवाड़ एक ही चूल पर टिके हुए थे। मैं दरवाजे में दाखिल हुआ और आटे के बोरों

में से गुजरकर एक तंग व अंधियारे कोने में पहुंचा तो खट्टी, गर्म और भूख दिखाने वाली भाप मेरे नथुनों से टकराई। सहसा आंगन में आती हुई भयानक आवाज मेरे कानों पर पड़ी – ऐसा लगा कि लोग पैरों से धम-धम कर रहे हैं और घरर-घरर की आवाज निकाल रहे हैं। बरामदे की दीवार की एक दरार से अपना मुंह लगाये मैं भौचक्का खड़ा रहा वहां क्या देखता हूं कि मेरा मालिक अपनी कुहनियां कूल्हों पर जमाये आंगन में इस प्रकार कूद-फांद कर रहा है जैसे कोई अदृश्य घोड़े सधाने वाला घोड़े को चाल सिखा रहा है। उनकी पेशियों और मोटे, गोल-मटोल घुटने खुले हुए थे उसकी तोंद और थल-थल गाल फड़क रहे थे, उसका मछली जैसा मुंह सिकुड़ गया था और वह जोर-जोर से खांस-खांसकर बेदम हुआ जा रहा था।

'खा, खा ...'

आंगन संकीर्ण था और चारों ओर टूटी-फूटी बेढंगी कोठरियां बड़ी अस्त-व्यस्त सी बनी हुई थीं जिनके दरवाजों पर कुत्तों के सिरों जैसे बड़े-बड़े ताले लटके हुये थे। बारिश से भीगकर ऐंठे हुए पेड़ की दर्जनों ग्रंथियां अंधों की नाई दीख पड़ रही थीं। आंगन के एक कोने में छत्तक शकर के खाली पीपे अटे हुए थे। जिनके गोल मुंह में से झांक रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि आंगन को कूड़ाघर की तरह इस्तेमाल किया जाता है और हर प्रकार का काठ-कबाड़ वहां फेंक दिया जाता है।

और घास-फूस के भंवर लकड़ी के छिलकों और छेपटी के नाचते हुए छल्लों के दरम्यान यह भारी-भरकम जिस्म वाला मोटा ताजा और अजीब शख्स आंगन के पथरीले बर्फ पर अपने भारी जूतों की धम-धम करती आवाज के साथ कूद रहा था और खांसता जा रहा था मानों वायु के झोंकों की सरसराहट से ताल मिला रहा हो।

'खा, खा खा। ...'

कोने के पीछे से कुछ सुअर क्रोधित हो चीख-चिल्ला रहे थे मानों उसकी धमाचौकड़ी पर अपनी प्रतिक्रिया दर्शा रहे हों। वहां कोई घोड़ा सांस ले रहा था और धम-धम कर रहा था और दूसरी मंजिल पर किसी कमरे की रोशनदान की छोटी खिड़की में से कोई लड़की दुर्बल स्वर में गा रही थी।

'काहे भये उदास प्रियतम',

हवा पीपों में ठुंसी घास में घुसकर सरसरा रही थी। लकड़ी की एक खपच बड़ी तेजी से फड़फड़ा रही थी। कबूतर खलिहान की एक ओलती में एक-दूसरे से लिपट कर बैठे अपने जिस्म को गर्मा रहे थे और बड़ी दीनता से गुटर-गूं कर रहे थे ...।

यहां का वातावरण कुछ अजीब गड़बड़ सा था और उसके बीचों-बीच पसीने में सराबोर, हांपता-कांपता यह ऊलजलूल शख्स नाच रहा था जिसकी शक्ल-सूरत को मैंने और पहले कभी न देखा था।

'जान पड़ता है मैं किसी अच्छे-खासे झमेले में फंस गया हूं!' मुझे कुछ संदेह हुआ और मैं सोच में पड़ गया।

तहखाने की खिड़कियों पर तार की जाली लगी हुई थी और वहां की मेहराबदार छत में भाप और तम्बाकू के धुएं से मिले-जुले बादल छाये हुए थे। उस स्थान का वातावरण

अंधकारमय था, खिड़कियों के शीशे टूट गये थे जिन पर अन्दर से सने हुए आटे के लौंदे लगे थे और बाहर से कीचड़ थपी हुई थी। कोनों में चीथड़ों के मकड़ी के जाल जैसे झण्डे जिन पर खाने की जूठन लिथड़ी हुई थी, पड़े थे और गन्दगी का यह आलम था कि धूल की तहों में एक काली मूर्ति इतनी अट गई थी कि नजर आना मुश्किल हो गया था।

एक बहुत बड़े तन्दूर में से जो नीची मेहराब का था सुनहरी लपटें निकल रही थीं। उसके सामने बदहवास पाश्क बजारा खड़ा लम्बे हत्थे वाला बेलचा चूल्हे के पत्थर पर रगड़ रहा था। यही नानबाई उस कारखाने का दिल व दिमाग था – नाटा कद, मांगदार छोटी दाढ़ी और बला के चमकते हुए सफेद दांत – यह थी उसकी आकृति। वह एक ढीली-ढाली बिना कमरपट्टी की रंगीन अधबहियां पहने हुए था। उसके खुले हुए वक्ष पर महीन बालों के गुच्छों में हवा गुदगुदी कर रही थी। वह इस लिबास में किसी मदिरालय का नट दिखाई देता था। उसक पैरों पर चढ़े भारी जीर्ण-शीर्ण बूट जो उसकी सुडौल टांगों में ढले हुए लोहे की नाई लग रहे थे, देखकर दुख होता था। वह आनन्द-मग्न हो चीख-चिल्ला रहा था और उसकी वे चीखें उस तहखाने के उदासीन वातावरण में गूंज रही थी।

'सेंको और उबालो!' एक ही सांस में असंख्य गालियां देते हुए वह चिल्लाया और अपने घुंघराले बालों वाले सुन्दर माथे से पसीने की बूंदें पोछीं।

खिड़कियों के नीचे दीवार के सहारे लगी लम्बी मेज पर अठारह मजदूर बैठते, और 'बी' के आकार की आधी-आधी छटांक की छोटी-छोटी नमकीन नानखताईयां बनाते हुए दायें-बायें हिलते-डुलते रहते थे। मेज के किनारे दो आदमी सफेद गुंधे हुए आटे की लम्बी पट्टियां काटते थे, उनकी उंगलियों से उसके बराबर-बराबर पेड़े बनाते और उन्हें मेज के दूसरे सिरे पर बैठे मजदूरों के हाथों में पहुंचा देते। ये हाथ इतने फुर्तीले होते थे कि उसकी हरकत मुश्किल से दीख पड़ती थी। आटे को नानखताई की शक्ल में ढालने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को उसे हथेली से थपथपाना पड़ता और यह कार्य ऐसी ताल के साथ होता कि सारा भटियारखाना हल्की-हल्की पट-पट की आवाज से गूंजने लगता था। मेज के पहले सिरे पर मैं बनी हुई रोटियों को ट्रे में रखता जाता और जब वह भर जाती तो लड़के उसे उठाकर बाइलर के पास ले जाते जो उन्हें उबलते हुए पानी की कढ़ाई में डाल देते जहां से एकाध मिनट बाद वह उन्हें तांबे के एक करछुल से बाहर निकाल कर एक रांगा चढ़ी हुई बड़ी तांबे की परात में डाल देता। फिर आटे के चिकने-चिकने, गर्म पेड़ों को ट्रे में रख देता, नानबाई उन्हें चूल्हे पर सुखाता फिर निकाल कर अपने फावड़े पर जमाता और बड़ी दक्षता के साथ उन्हें तन्दूर में फेंक देता जहां वे सिंक कर कुरकुरे और कत्थई रंग के बनकर तैयार हो जाते।

जब नानखताई मेरे पास आ जाती उस समय यदि मेरी ओर से जरा सी भी काहिली बरती जाती तो वे बिगड़ जातीं – आटे के पेड़े एक-दूसरे से चिपक जाते और सारा काम चौपट हो जाता। मेज पर बैठे हुए दूसरे लोग मुझे उलाहना देने लगते और आटे के लौंदे मेरे मुंह पर फेंकने लगते।

वे सब मुझसे घृणा करते और शक की नजरों से देखते थे जैसे कि मैं कोई मक्कारी

या दगाबाजी करने वाला हूं।

मेज पर अठारह व्यक्ति तन्दूर में झूमते थे। तमाम आदमियों के चेहरे कुछ समान रूप-रंग लिये नजर आते थे जो बड़ा विचित्र-सा लगता था। सबके चेहरों पर थकावट और उदासीनता के भाव अंकित थे। मेरा एक साथी आटा गूंधता और आटा मिलाने की कला का लोहे का हत्था धमाके के साथ चलता। कोई तीन मन का ढेर आटा सख्त और लोचदार गूंधना जिसमें एक भी फटकी न हो, वह बड़े परिश्रम का काम है। फिर यह काम होना भी बड़ी फुर्ती से चाहिए – ज्यादा से ज्यादा आधे घन्टे में।

तन्दूर में लकड़ियां चटखती रहतीं, कढ़ाव में पानी सनसनाता रहता और मेज पर हाथों के थपथपाने की आवाजें आती रहतीं। ये सब आवाजें मिलकर निरन्तर एक ही जैसी आने वाली और एक-सुरी गुनगुनाहट में परिणत हो जातीं। और यह गुनगुनाहट तब भंग होती जब कोई क्रोध में किसी को गालियां देता। फर्श पर बैठे काम करते हुए लड़कों में से ग्यारह वर्षीय पाश्का आर्त्युखोव की ताजा और बुलन्द आवाज सुनाई देती थी। यह चपटी नाक वाला तोतला छोटा-सा लड़का जिसके चेहरे पर कभी भय और कभी आनन्द के भाव उभर आते अपने तन्मय श्रोताओं को बड़ी ओजक व अविश्वसनीय कहानियां सुनाता कि किस प्रकार एक पादरी की पत्नी ने द्वेष से आक्रान्त होकर अपनी लड़की पर, जिसकी शादी होने वाली थी मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी। घोड़े चराने वालों को जिन संकटों का सामना करना पड़ता है और उन्हें किस प्रकार दण्ड दिया जाता है। भूत-प्रेतों, चुड़ैलों और मत्स्यांगनाओं के किस्से वगैरह। इन्हीं बातों और सुरीली आवाज के कारण लोगों ने उसका नाम 'झुन-झुना' रख दिया था।

मुझे पहले ही मालूम हो चुका था कि वासिली सेम्योनोव कुछ दिन पहले – कोई चार वर्ष पूर्व, खुद उस भटियारखाने में नौकर था और अपने मालिक की बूढ़ी पत्नी के साथ रहता था। बुढ़िया को उसने यह पट्टी पढ़ाई की वह उसे कुछ खिलाकर मार डाले। और जब उसकी मुराद पूरी हो गई तो उसने सारा काम-काज अपने हाथ में ले लिया। और अब वह उसे मारता है और उसे इतना आतंकित कर रखा है कि उसका जी चाहता है वह चूहा बन कर बिल में जा छिपे और उसकी शक्ल न देखे। यह किस्सा मुझे आम घटना की तरह सीधा-सच्चा सुनाया गया। मुझे तो शुरू से आखिर तक उस खुशनसीब आदमी में कोई चीज ऐसी दीखी नहीं जो मैं उससे ईर्ष्या करता।

'पतलून क्यों नहीं पहनता वह?'

उदास और भयावह चेहरे वाले कुजिन ने जो काना था मुझे बड़ी गम्भीरता से समझाया।

'नशे में धुत्त फिरता रहता है – अभी परसों ही तो उसने अपनी पियक्कड़ी का लम्बा दौर खत्म किया है।'

'दिमाग तो खराब नहीं है उसका?'

अनेकों नेत्र हास्यास्पद ढंग से मुझे घूरने लगे। बंजारा बड़ी आशावादिता से बोला:

'जरा ठहर जा बेटा, अभी पता चल जाता है कि उसका दिमाग खराब है या अच्छा।'

साठ वर्षीय कुजिन से लेकर याश्का तक जो नानखताइयों को धागे में पिरोकर हार बनाता है और जिसे अक्टूबर से मार्च तक के लिए दो रूबल मिलते हैं, हर व्यक्ति अपने

मालिक का जिक्र इस अंदाज में करता है जैसे उसे अपने मालिक पर गर्व हो और मानो कह रहा हो, अरे वासिली सेम्योनोव जैसा आदमी लाकर बताओ। वह बड़ा व्यभिचारी है, उसकी तीन रखैल हैं जिनमें से दो को तो वह नाकों चने चबवाता है और तीसरी खुद उसे टोकती है। वह लालची है, हमें बुरा खाना खिलाता है। छुट्टियों में तो हमें गोभी का शोरबा और गोश्त मिलता है, और वैसे रोजाना ओजड़ी मिलती है। बुध और शुक्रवार के रोज चर्बी से बघारा हुआ दलिया दिया जाता है। और काम के वक्त सात बोरे आटे की नानखताइयां उसे रोज दिये जाओ जबकि एक बोरे आटे में 22 मन 2 सेर वजन होता है और उसकी नानखताइयां बनाने में लगभग ढाई घण्टे लगते हैं।

'बड़ी अजीब बात है, तुम अपने मालिक की इतनी बड़ाई करते हो।' मैंने कहा।

अपनी पैनी दृष्टि से मुझे घूरते हुए एक नानबाई ने कहा :

'इसमें अजीब बात क्या है?'

'ऐसा लगता है तुम सबको उस पर बड़ा गर्व है ...?'

'हां तो उसमें ऐसी खूबियां हैं तभी तो करते हैं गर्व। तुम्हारी समझ में यह बात आई नहीं शायद। अब देखो ना, कल तक वह एक मामूली मजदूर था, कोई पूछता भी नहीं था उसे, और आज? पुलिस का सूबेदार भी झुककर सलाम करता है। पढ़ा-लिखा वह खाक नहीं है सिर्फ हिज्जे जानता है – फिर भी देख लो चालीस आदमियों का कारोबार चलाता है, और सारा हिसाब-किताब अपनी खोपड़ी में रखे हुए हैं।'

कुजिन ने ठण्डी सांस ली और आज्ञाकारी सेवक की नाई समर्थन में कहा :

'भगवान ने उसे बड़ी तेज बुद्धि दी है।'

और पाश्का ने उत्तेजित हो चीखकर कहा :

'नानखताई का एक तन्दूर, डबलरोटी का तन्दूर, बिस्कुटों का एक तन्दूर भला कर तो लो इन सबका इन्तजाम बगैर हिसाब-किताब जाने। ढाई हजार मन नानखताइयां तो मार्द वीनियस और तातारी देहातियों के हाथ सर्दियों में ही बेंच लेता है। इनके अलावा शहर में सात फेरी वाले हैं जिनमें से हरेक को 36 सेर नानखताइयां और बिस्कुट रोजाना बेचने पड़ते हैं – अब बोलो, क्या बोलते हो?

नानबाई का यह जोश व खरोश मेरे लिए असह्य हो गया, मुझे झुंझलाहट होने लगी – मैं अपने अनुभव की बिना पर मालिकों के बारे में कुछ दूसरे ढंग से सोचने लगा था और मेरा वह विचार निराधार न था।

बूढ़े कुजिन ने अपनी एक आंख चोरों की तरह अपनी भूरी भंवों में छिपाई और व्यंग्य से कहा :

'अरे भाई, वह कोई ऐसा-वैसा मामूली आदमी नहीं है।'

अगर बकौल तुम्हारे उसने बूढ़े मालिक को जहर दे दिया था, तब तो वास्तव में इसमें शक ही क्या हो सकता है ...।'

नानबाई ने अपनी काली भवें चढ़ाईं और कुछ संदिग्ध भाव से बोला :

तो साब उसका कोई गवाह-ववाह तो है नहीं। बाज वक्त ऐसा भी होता है कि घृणा या द्वेष के कारण हत्या करने या विष देने या चोरी करने का अपराध किसी के मत्थे मढ़

दिया जाता है – हमारी बिरादरी में जब किसी की तकदीर चेत जाती है और वह फलने-फूलने लगता है तो लोगों की आंखों में खटकने लगता है। ...'

'तुम्हारा भाई-बन्द कैसे हो गया भई वह?'

बंजारे ने कोई जवाब न दिया और कुजिन सामने वाले कोने पर नजर दौड़ा कर लड़कों पर गुर्राया :

'अबे शैतानों! जरा उस मूर्ति की धूल तो झाड़ दो! तातारी, काफिरों! ...'

बाकी सब ऐसे चुप थे जैसे है ही नहीं।

जब थालियों में नानखताईयां रखने की मेरी बारी आई तो मेज के एक सिरे पर खड़े होकर मैं लड़कों को वह सब जो मैं जानता था और उनके लिए जरूरी समझता था बताने लगा। भटियारखाने में जो शोर हो रहा था उसे दबाने के लिए मुझे जोर-जोर से बोलना पड़ता था और जब वे लोग मेरी बातें ध्यान से सुनने लगते तो जोश में आकर मैं और भी बुलन्द आवाज में बोलने लगता। इसी प्रकार का 'सुधार-कार्य' करते हुए एक बार मालिक ने मुझे ऐन मौके पर पकड़ लिया जिसके लिये मुझे सजा भी मिली और उपनाम भी।

हमारे भटियार खाने और डबलरोटी को बेकरी के दरम्यान जो मेहराबी दरवाजा है उसमें वह मेरे पीछे चुपचाप आकर खड़ा हो गया। बेकरी को फर्श हमारे भटियारखाने के फर्श से तीन सीढ़ियां ऊंचा था और हमारा मालिक मेहराब के चौखट में तोंद पर हाथ बांधे खड़ा दोनों हाथों के अंगूठे एक-दूसरे के गिर्द घुमा रहा था। हमेशा की तरह वही अपना लम्बा कुर्ता जो फीते से उसकी मोटी गर्दन में बंधा हुआ था पहने हुए आटे का अचल बोरा मालूम हो रहा था।

इस ऊंची जगह पर खड़ा वह अपनी बेजोड़ आंखों से सबका मुआयना कर रहा था। उसकी मंजरी आंख की पुतली बिल्कुल गोल थी, बिल्ली की पुतलियों की तरह कभी चमकने लगती, कभी सिकुड़ जाती। और दूसरी भूरे रंग की बैजवी आंख मुर्दे की आंख की तरह पथराई हुई और चिकनी-चिकनी मालूम हो रही थीं।

मैं भी बोलता ही गया, यहां तक कि महसूस हुआ कि भटियारखाने में असाधारण निस्तब्धता छा गई है। पर काम पहले से अधिक फुर्ती से होने लगा था। मेरी पीठ के पीछे से किसी की उपहासपूर्ण आवाज आई:

'क्या बकबक लगा रखी है बे बड़बड़िये?'

मैंने जो पीछे मुड़कर देखा तो मैं घबड़ा गया और मेरी घिग्घी बंध गई। अपनी मंजरी आंख से मुझे एड़ी से चोटी तक घूरते हुए वह मेरे पास से गुजरा और जाकर नानबाई से पूछा:

'कैसा काम करता है यह?'

पाशा ने संतोष प्रकट करते हुए कहा:

'बिल्कुल ठीक है! बड़ा बल-कस वाला है ...।'

हमारा मालिक बड़े इत्मीनान से भटियारखाने में टहलता रहा और दरवाजे की सीढ़ियां पर चढ़कर उसने नर्म और थके स्वर में बंजारे से कहा:

'हफ्ते भर इसे आटा गूंधने पर लगाये रखो जरा ...।'

यह कह कर वह दरवाजे में से अदृश्य हो गया और साथ ही कुहरे का एक सफेद बादल भटियारखाने में घुस आया।

दुर्बल लंगड़े वानुक उलानोव ने जिसके चेहरे से ढिठाई टपकती थी बड़े ही भोंडे हाव-भाव और बेढंगी बोली में कहा, 'मैं तो सारी उमर भी न करूं!'

किसी ने सीटी बजाकर उसका उपहास किया। नानबाई ने चारों ओर प्रकोपपूर्ण दृष्टि दौड़ाई और ये बड़ी गाली देते हुए कहा :

'चलो बे काम करते नजर आओ!'

कोने में से जहां फर्श पर बैठे लड़के काम कर रहे थे तोतले याश्का की क्रोधित और झिड़की भरी आवाज आई:

'अरे बड़े कमाल के लोग हो तुम।' मजे में बैठे हो तुम मेज पर। जब तुमने मालिक को आते देखा था तो उस बेचारे को इशारा करते क्या तुम्हारी नानी मरती थी?'

'हां और क्या! उसके भाई सोलह वर्षीय आर्तेम की आवाज आई। वह ऐसा हवन्नक दिखाई दे रहा था जैसे लड़ाई के बाद कोई मुर्गा। एक हफ्ते लगातार आटा गूंधना हंसी-ठठ्ठा नहीं है – हालत पतली हो जायेगी बेचारी की।'

मेज के परले सिरे पर बूढ़ा कुजिन और भूतपूर्व सैनिक मिलोव बैठे थे। मिलोव बड़ा खुशमिज़ाज आदमी था पर बेचारा आतशक का मरीज था। कुजिन ने अपनी निगाहें नीची कर लीं पर कहा कुछ नहीं। बूढ़ा सैनिक, अपराधी की नाईं भुनभुनाया:

'और मुझे तो इसका ध्यान ही नहीं आया ...।'

नानबाई ने दांत निकालकर हंसते हुए कहा:

'अब तेरा नाम बड़बड़िया हो गया।'

दो तीन आदमियों ने अनमने से कहकहा लगाया और उसके बाद एक भद्दा, कष्टकर सन्नाटा छा गया। सब लोग मुझसे नजरें चुराने लगे।

शून्य की गहराई में तो सबसे पहले योश्का ही पहुंचता है, सहसा ओसिप शातुनोव की दबंग आवाज आई। वह एक भद्दे, चपटे चेहरे और तिरछी छोटी-छोटी आंखों वाला एक बेडौल-सा आदमी था। 'यह याश्का दुनिया में ज्यादा नहीं जियेगा।'

तुम जाओ जहन्नुम में। लड़के की बारीक और तेज आवाज गूंजी।

'इसकी तो जबान काट ली जानी चाहिए', कुजिन ने सलाह दी। आर्तेम ने झल्लाकर जवाब दिया: 'अरे तेरी ही जीभ न कट जाय जड़ समेत। नीच कहीं के।'

'चुप हो जाओ बे!' तंदूर के पास से एक रोबदार आवाज आई आर्तेम उठा और मरियल चाल के बरामदे के दरवाजे की ओर जाने लगा। पीछे से उसके छोटे भाई की डांट सुनाई दी:

'नंगे पैर कहां चले? जूते पहन कर जाओ – कहीं सर्दी लग गई तो लेने के देने पड़ जायेंगे।'

जाहिर है हर शख्स इस प्रकार की उक्तियों का आदी था – और वे सब खामोशी से उन्हें टाल दिया करते थे। आर्तेम ने स्नेहपूर्ण और वे सब खामोशी से उन्हें टाल दिया

करते थे। आर्तेमे ने स्नेहपूर्ण और मुस्कान भरी दृष्टि से अपने भाई की ओर देखा और उसे आंख मारकर अपने फटे-पुराने बूट पहन लिये।

मुझे बड़ा रंज हुआ। उन लोगों में अपनी तनहाई और अजनबियत के अहसास से मेरा दिल डूबने लगा। बर्फानी तूफान गंदी खिड़कियां को पीट रहा था – बाहर बड़ी सर्दी थी। इस किस्म के लोगों को मैंने देखा था और उनके स्वभाव को भी मैं कुछ-कुछ समझने लगा।

मैं जानता था कि उनमें से लगभग प्रत्येक की आत्मा दुख और अटल संकटापन्न स्थिति से गुजर रही थी -- वह आत्मा जो गांव के निस्तब्ध वातावरण में पैदा हुई और परवान चढ़ी थी, और जिनके कोमल व लचकदार जौहर को सैकड़ों हथौड़ियों से पीट-पीटकर शहर अपनी तर्ज में ढाल रहा था – कुछ को विस्तृत कर रहा था और बाकियों को संकुचित।

नगर की क्रूर और निर्मम कारस्तानी विशेषतया उस समय अधिक स्पष्ट दीखने लगती थी जबकि ये सादगी पसंद लोग देहाती गीत गाने लगते और उन गीतों व संगीत में अपनी आत्माओं की दर्दनाक हैरानी और मूक वेदना समो देते थे।

दुख की मारी गरीब एक गोरी

अचानक उलानोव ने ऊंची और लगभग स्त्री की-सी आवाज में गाना शुरू किया। फिर कोई और अनायास ही गाने में शामिल हो गया:

रात को खेत में चली आई ...

चूंकि शब्द 'खेत' कुछ मंद सुर में गाया गया था इसलिये दो-तीन और गाने में शामिल हो गये। अपने सिरों को और भी नीचे झुकाकर, अपने चेहरे छिपाते हुए वे अपने स्मृति-सागर में डूबने-उतराने लगते:

खेत में छिटकी हुई थी चांदनी
और हवाएं गा रही थीं रागिनी ...

अभी गीत की अंतिम पंक्ति नहीं गाई गई थी कि वानुक ने सिसकी भरे स्वर में उन्हें शुरू से दुहराना शुरू कर दिया :

दुख की मारी गरीब एक गोरी ...

गीत और भी अधिक बुलंद हो गया:

सर्द झोंको से कहा गोरी ने यह
ऐ सहेली, ऐ मेरी प्यारी हवा
मेरे दिल की धड़कनों को रोक दे
मुझसे मेरी आत्मा को छीन ले

और जब वे यह गीत गा रहे होते तो ऐसा लगता कि खेतों से चलकर शीतल व मंद वायु का झोंका भटियारखाने में घुस आया है। और सुखद विचार मस्तिष्क पर छाए जाते हैं – वे विचार जो मनुष्य को उन्नत व उसके हृदय को दयालु बनाते हैं। फिर सहसा जैसे कोमल शब्दों की उदासी पर लज्जित हो गई बुदबुदाता:

'आहा, वह तो बेचारी थक गई ...'

उलानोव ने और भी ऊंचे और उदास सुर में गाया, उसकी गर्दन की नसें उभड़ आई और चेहरा सुर्ख अंगारा हो गया:

दुख की मारी गरीब एक गोरी

आत्मा को झकझोरने वाली आवाजें उठती और गीत उदासी के अथाह सागर में डूब जाता:

उसने रोकर सर्द झोंकों से कहा
ऐ सहेली ऐ मेरी प्यारी हवा
तू मेरा मायूस दिल ले जा वहां
दूर जंगल में अंधेरा हो जहां

'और मैं शर्त लगाता हूं कि वह –' गाने के दौरान में ही नवसी ने एक अश्लील और गंदा व्यंग्य कस दिया। अंधियारे तहखाने और गंदे आंगन की दुर्गन्ध खेतों की सुगंधित वायु को दूषित कर देती है।'

'अरे लानत है इस सब पर!' किसी ने ठण्डी सांस भर कहा।

वानुक और मधुरतम वाणी वाले अन्य गायक जोर की ताने लगाते मानो वे विषाक्त नीली लपटों और दुर्गन्धमय शब्दों को ठण्डा करना चाहते हों, किन्तु अन्य लोग प्रेम की दुखद गाथा पर और अधिक लज्जित होने लगते – वे जानते थे कि शहर में प्रेम दस कोपेक में खरीदा जा सकता; वे उसे भी खरीदते हैं और उसके साथ ही शारीरिक रोग और भयानक कलंक भी – और उसके सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण दृढ़ हो चुका था।

दुख की मारी गरीब एक गोरी
प्रेम करता नहीं है मुझसे कोई ...

'अरे इतनी शालीन न बनो – नहीं तो एक-दो नहीं दस पड़ जायेंगे पीछे ...'

'उन्हें, उन चंचल छोकरियों को तो बस यह आता है कि विवाह कर लें और हम पुरुषों की गर्दनों पर सवार हो जायें ...'

'यह भी बिल्कुल सच है। ...'

उलानोव आंखें मींचकर खूब गाता और उस समय उसके दुराचारी, वृद्ध चेहरे पर बड़ी सुन्दर झुर्रियां पड़ जातीं और वह एक शर्मीली मुस्कान ले दमकने लगता।

लेकिन अक्सर बेसुरे लोग गीत को इस प्रकार बिगाड़ देते हैं जिस प्रकार स्वच्छ वस्त्रों को कीचड़ की छींटें। और वानुक को अपने तईं यह मानना पड़ता है कि उसकी वह दर्दभरी आवाज अब खत्म हो चुकी है। अब वह अपनी चुंधी आंखे खोलता और उसका मुर्झाया हुआ चेहरा धृष्टतापूर्ण मुस्कान से विकृत हो जाता और उसक पतले होठों पर कुछ अपशब्द रेंगने रगते। एक श्रेष्ठ गायक की हैसियत से वह अपनी कीर्ति कायम रखने का इच्छुक था। और उस जैसे आलसी और अपने साथियों में अप्रिय व्यक्ति का वह यश ही तो था जिसके कारण वह भटियारखाने में अब तक टिका हुआ था।

अपने पतले और लाल बालों वाले सिर को झटका देकर वह बड़ी बारीक आवाज में चीखता:

क्या मजा आया हमें प्रलोम्नी बाजार में
एक विद्यार्थी नशे में धुत्त था लेटा वहां ...

दुर्भावाना भरे आनन्द में मग्न यह अशिष्ट गीत गाते हुए सबके सब झूमने, हू-हू करने और सीटियां बजाने लगते और सारा भटियारखाना एक आवाज में चीख उठता:

लेटकर वह छल-कपट से मुस्कराता था वहां ...

ऐसा प्रतीत होता मानो असुरों का एक समूह किसी सुन्दर वाटिका में घुसकर फूलों को रौंद रहा हो। उलानोव घिनौना और नीच था। उत्तेजना से वह उन्मत्त हो गया, उसके उर में ज्वाला भड़क उठी, उसके चेहरे पर चकत्ते पड़ गए थे उसकी आंखों की पुतलियां उबली पड़ रही थीं, अपने शरीर को बड़े निर्लज्ज और अश्लील ढंग से बल देकर वह शर्मनाक हरकतें कर रहा था और उसकी कर्कश आवाज अचानक और भी सख्त हो जाती थीं और विषय-वासनाएं हृदय को बरमाने लगती थीं।

आओ सुन्दरियों, आओ-आओ नारियों।

वह हाथों को लहराकर गाता और बाकी सब भी उस उत्तेजक कोलाहल में शामिल हो जाते।

जल्दी आओ ... हैया हो।
आओ आओ ...।
आओ आओ ...।

गाढ़ी, चिकनी, चिपचिपी कीचड़ उबल रही थी और उसमें कराहती हुई सिसकियां, भरती हुई मानवीय आत्माओं को पकाया जा रहा था। वह पागलपन असह्य हो गया था, उसका दृश्य मात्र ही ऐसी उन्मत्तता उत्पन्न करता था कि जी चाहता दीवार से सिर फोड़ लें। लेकिन इसके बजाय होता यह कि आप अपनी आंखें बन्द कर लेते और खुद ही वह अश्लील गीत गाने लगते – शायद दूसरों से भी ज्यादा जोर से। अपने साथियों पर आपको तरस आने लगता और यह विनाशकारी भावना आपको परास्त कर देती। इसके अतिरिक्त किसी को अपनी श्रेष्ठता अनुभव करने का अवसर बार-बार तो हाथ आता नहीं है।

कभी-कभी हमारा मालिक दबे पांव आ धमकता या लाल घुंघराले बालों वाला क्लर्क साश्का दौड़ा-दौड़ा आ जाता।

'मजे मार रहे हो ना पट्ठों?' सेम्योनोव विषैली किन्तु मीठी आवाज में पूछता पर साश्का तो यों ही चीख पड़ता :

'अबे इतना हो-हल्ला नहीं, हरामियों।'

और भड़कते हुए शोले फौरन ठण्डे पड़ जाते। ये लोग जिस खुशी और उत्साह से यह नादिरशाही हुक्म मान लेते थे उससे तो आत्मा पर और भी अधिक गहरा और बोझिल अन्धकार छा जाता था।

एक दिन मैंने पूछा:

'भाइयो! तुम लोग अच्छे-अच्छे गीतों की मिट्टी पलीद क्यों करते हो?'

उलानोव ने चकित दृष्टि से मेरी ओर देखा।

'क्यों, क्या हम लोग खराब गाते हैं?'

और ओसिप शातुनोव ने अपनी भारी आवाज में, जो बहुधा निरुत्साह-सी लगती थी, कहा –

'गीत को तो हम चाहें तो भी नहीं बिगाड़ सकते। वह तो आत्मा की भांति होता है जो अमर होती है। हम सबका भौतिक शरीर समाप्त हो जायेगा परन्तु गीत सदैव जीवित रहेगा ... वह सदैव अजर-अमर रहेगा।'

जब ओसिप बोलता था तो मठ के लिये चन्दा एकत्र करने वाली भिक्षुणी की नाईं नजरें नीची कर लेता था। और जब वह खामोश होता था तो उसके चौड़े चपटे मुंह की कपोल -- पलकें निरन्तर हिलती रहती थीं मानों यह भीमकाय व्यक्ति कोई चीज हमेशा चबाता ही रहता हो।

लकड़ी की खपच्चों को जोड़-जोड़कर मैंने एक बुक-स्टैण्ड सा बना लिया था और जब मैं आटा गूंध चुकने के बाद नानखताईयां चुनने के लिए अपनी मेज पर आता तो उस स्टैण्ड पर मैं अपनी किताब खोलकर रख लेता था और जोर-जोर से पढ़कर सबको सुनाता था। मेरे दोनों हाथ तो बराबर काम में लगे रहते थे इसलिए पन्ने उलटने का काम मिलोव के सुपुर्द था – वह इस काम को बड़ी श्रद्धा से करता, हर बार बनावटी अन्दाज में जोर लगाता और उंगलियों में काफी थूक लगाकर पन्ना उलटता। यह काम भी उसी के सुपुर्द था कि यदि मालिक सहसा आन धमके तो वह मेज के नीचे लात चलाकर मुझे इशारा कर दे।

लेकिन भूतपूर्व सैनिक कुछ खोया-खोया सा रहता था। और एक दिन जब मैं टालस्टाय की 'तीन भाइयों की कहानी' पढ़ रहा था तो मुझे अपने कन्धे के ऊपर से सेम्योनोव की घोड़े की सी हिनहिनाहट सुनाई दी। उसका छोटा-सा गोल-मटोल हाथ अचानक बाहर निकला और उसने किताब झपट ली और पूर्व इसके कि मैं सम्हलूं मैंने देखा वह किताब हाथ में झुलाता हुआ तंदूर की ओर जा रहा है और कह रहा है:

'वाह! यह बात मुझे बहुत पसन्द है क्यों? बड़ा चालाक है ...'

मैनें लपककर उसे पकड़ा और बाजू दबोच कर कहा:

'किताब नहीं जला सकते तुम!'

'कौन कहता है!'

'नहीं जला सकते! मैंने कह दिया।'

भटियारखाने में सन्नाटा छा गया। मुझे नानबाई की चढ़ी हुई त्योरियां मुस्कराते हुए दांत नज़र आये और मुझे लगा वह गरजने ही वाला है:

'टूट पड़ो इस पर!'

'मेरी आंखों के आगे अन्धेरा छा गया। हरे-हरे चक्कर नजरों में घूमने लगे और मेरी टांगें लरजने लगी। सब लोग तन-मन से काम में लगे हुए थे मानों उन्हें जल्दी हो कि एक काम खत्म करके फौरन दूसरा शुरू कर देना है।

'नहीं जला सकता?' मालिक ने मेरी ओर देखे बिना ही शांतिपूर्ण स्वर में दुहराया। उसका सिर एक ओर झुका हुआ था मानों कुछ सुनने का प्रयत्न कर रहा हो।

'लाओ, इधर लाओ।'

'अच्छा ... लाओ।'

मैंने मसलाई किताब ले ली और मालिक को बाजू छोड़ कर वापस अपनी जगह पर आ बैठा। वह सर झुकाये हमेशा की तरह चुपचाप बाहर आंगन में चला गया। भटियारखाने में बड़ी देर तक निस्तब्धता छाई रही। फिर नानबाई ने बड़े भद्दे अन्दाज से अपने चेहरे का पसीना पोंछा और जमीन पर पांव फटकारते हुए बोला:

'आय हाय, कम्बख्तों! क्या दिन दिखाये हैं! मुझे तो पूरा यकीन था कि वह तुम सब पर टूट पड़ेगा।'

'और मुझे भी।' मिलोव ने खुशी-खुशी हां में हां मिलाई।

'अरे साहब लड़ाई होते-होते रह गई।' बंजारे ने खेदपूर्ण स्वर में कहा।

'अच्छा तो बड़बड़िये! अब जरा चौकन्ना रहना। अब के तो छोड़ दिया उसने पर आइन्दा बदला ले लेगा।' कुजिन ने अपना सिर हिला कर बड़बड़ाते हुए कहा:

'यह जगह तेरे लिए ठीक नहीं, समझा भाई! हम झगड़ा-टण्टा नहीं चाहते। मालिक को गुस्सा तू दिलायेगा, भुगतना पड़ेगा हम सबको।'

याश्का आर्त्युखोव ने सैनिक को दबी आवाज में गालियां देते हुए कहा:

'क्या उसे आते हुए नहीं देखा था तूने, क्यों बे बौड़म?'

'हां ऐसा ही लगता है।'

'तो त्या तुझसे तहा नहीं था ति दरा देथता रहना।'

'हां पर चूक गया इस बार क्या करें ...।'

भटियारखाने के अधिकतर मजदूर उदासीन थे और चुप साधे हुए थे। और बैठे हुए बाकी लोगों का गुर्राना सुन रहे थे। मैं भांप ही न सका कि वे मेरे बारे में क्या सोच रहे हैं। मैं कुछ उद्विग्न-सा था ही चुनांचे मैंने फैसला किया कि यहां से चला जाना ही बेहतर है। ऐसा लगा जैसे बंजारे ने मेरे इरादे का अनुमान लगा लिया हो क्योंकि वह क्रोधित हो बोला:

'देख बे बड़बड़िये! ऐसा कर अपना हिसाब साफ कर ले। वरना देखना नाक में दम हो जाएगा तेरा। येगोर को तेरे पीछे लगा देगा वह और बस समझ कि हुआ काम तमाम।'

उसी वक्त याश्का फर्श पर से उठ खड़ा हुआ जहां अभी तक वह दर्जियों की तरह आलती-पालती मारे चटाई पर बैठा था उठकर जब वह खड़ा हुआ तो कमानदार, उलखाई हुई टांगों के ऊपर उसका पेट बाहर को निकल पड़ा। उसकी दूधिया नीली आंखों में भयानक चमक पैदा हो गई और वह मुक्का तानकर बोला:

'त्या? ताम छोड़ कर चला दाये? अरे मार मुत्ता इसते जबड़े पर! अगर यह तुमसे लड़ेदा तो मैं तुम्हारा साथ दूंदा।'

क्षण भर के लिए तो सन्नाटा छाया रहा और फिर सहसा कहकहों का बादल फट पड़ा – ताजगी भरे और सबल कहकहे जो गर्मियों में बारिश के जोरदार छींटे की तरह मनुष्य की आत्मा के सारे विकार और मुर्झाहट धोकर उसे पवित्र और निर्मल कर देता है। इन्सानों को एक ठोस चट्टान बनाकर एकजान कर देता है। और जो परस्पर मैत्री और सहानुभूति के सम्बन्धों से और भी दृढ़ हो जाता है।

तमाम आदमियों ने अपना काम छोड़ दिया और हंसी के मारे पेट पकड़े-पकड़े फिरने लगे, आंखें लोट-पोट हो गईं और आंसू उनके गालों पर बहने लगे। याश्का भी कुछ भौचक्का हो हंस रहा था और अपनी कमीज झटक रहा था।

'त्यों नहीं? मैं चथाऊंदा उसे मजा! ढैया या तोई लतड़ी-डण्डा उठातर दे मारूंदा...'

सबसे पहले शातुनोव की हंसी रुकी हथेली से मुंह पोंछते हुए और किसी की ओर देखे बिना उसने कहा:

'अबके भी याश्का ही ने हिम्मत की, लौंडा ठीक कहता है! बेकार बेचारे को डरा रहे हो। वह तो तुम्हारे भले की बात करता है और तुम उसे निकाल बाहर करने पर तुले हुए हो ...।'

'अरे पर सावधान कर देने में तो कोई हर्ज नहीं है!' याश्का अपनी हंसी पर काबू पाने के बाद बोला।' हम कुत्ते तो हैं नहीं, क्यों है न?'

और सब-के-सब बड़ी दिलचस्पी ले लेकर यह उपाय ढूंढने लगे कि मुझे येगोर के पंजे से किस तरह बचाया जाये।

'किसी को मार डाले या अपाहिज कर दे – उसके लिए सब समान है। फर्क ही क्या पड़ता है, कुछ भी नहीं।'

बचाव के और हमले के निरर्थक और मूर्खतापूर्ण मन्सूबे बनाने में याश्का सबसे बाजी ले गया। उधर बूढ़ा कुजिन एक कोने में आंखें गाड़कर गुर्राया:

'क्यों रे तुम लोगों को कितनी बार कहना पड़ेगा कि मूर्ति झाड़-पोंछकर साफ कर दो ...?'

बंजारा अपना बेलचा अंगीठी में चला रहा था और जैसे अपने आप ही से तर्क-वितर्क कर रहा था:

'मुसीबत के लिए हरेक को तैयार रहना चाहिए ... यहां तो अब दिन-रात झगड़ा-टण्टा होने लगा है –।'

आंगन में कोई भारी कदमों से चलता हुआ आया और खिड़की के पास से गुजर गया और बूझ-बुझक्कड़ याश्का ने जोरदार लहजे में कहा:

'येगोर है। सुअरों को एक नजर देखकर आया होगा अब फाटक बन्द करने गया है ...।'

कोई बुदबुदाया:

'हाय! अस्पताल में ही किसी ने उसका काम तमाम न कर दिया।

फिर नीरवता और उदासी छा गई। एक मिनट बाद नानबाई ने फिर सुझाया:

'सेम्योनाव को परेड करते देखना चाहते हो?'

बरामदे में खड़ा मैं दीवार की दरार में से झांककर बाहर आंगन में देख रहा था। आंगन के बीच में हमारा मालिक एक खाली बक्स पर बैठा था। उसकी टांगें नगी थीं कुर्ते के दामन में कोई दो-तीन दर्जन पावरोटियां थीं। चार बड़े-बड़े नस्ली सुअर उसके घुटनों से अपनी थूथनियां रगड़-रगड़कर जोर-जोर से खरखरा रहे थे और वह उनके लाल जबड़ों में पावरोटियां ठूंसता जाता और सुअरों के पेट थपथपा-थपथपाकर बड़ी नर्म, फीकी और

अनजानी आवाज में बड़बड़ा रहा था।

'हूं-हूं, खाओगे? पावरोटी खाओगे? लो, लो खाओ ...।'

उसका भरा हुआ चेहरा, हल्की, स्वप्निल मुस्कान से खिला हुआ था उसकी फुल्ली आंख में जान पड़ गई थी और वह गहरा लगाव प्रकट कर रही थी। कहना चाहिए कि उसके इर्द-गिर्द की हरेक चीज में कुछ विलक्षण अजनबियत पैदा हो गई थी। उसकी पुश्त पर एक चौड़ा-चकला, चेचक मुंह दाग, मुछेल सफाचट नीली ठोड़ी वाला कोई व्यक्ति खड़ा था जिसके बायें कान में चांदी की बाली पड़ी थी। सिर पर टोपी गद्दी की तरफ तिरछी किए उसने बटन जैसी गोल-गोल धुंधली आंखों से सुअरों की ओर देखा जो उसके मालिक के साथ खेल रहे थे। उसके दोनों हाथ जेबों में ठुंसे अन्दर-ही-अन्दर बल खा रहे थे।

'अब समय आ गया है इन्हें बेचने का, 'उसने कर्कश ध्वनि से कहा। उसके उस चेहरे पर कोई शिकन तक नहीं पड़ी।

'बड़ा वक्त पड़ा है।' मालिक ने तड़ख कर जवाब दिया। 'ऐसे जानवर फिर कब मिलेंगे –?'

एक सुअर ने उसकी पसलियों में अपनी थूथनी रगड़नी शुरू कर दी। सेम्योनोव सन्दूक पर बैठे-ही-बैठे झूम गया और अपना बेडौल शरीर फुदकाते हुए उसने इस प्रकार दांत निकाले कि चेहरे की मोटी-मोटी शिकनों में उसकी बेजोड़ आंखें गायब हो गईं।

'रोगी-पोगी साधु!' उसने ठहाका मारकर चिंघाड़ते हुए कहा। अंधेरे में रहते हैं बेचारे अंधेरे में! हाय-हाय, देखो तो चू-चू! ओहो, देखो तो अरे मेरे नन्हें-मुन्ने साधु, सीधे-सादे ...'

सुअर सब-के-सब उकता देने की हद तक समान थे और मालूम होता था जैसे एक ही पशु सारे आंगन में दौड़ता फिर रहा हो। हास्यास्पद और भद्दी समानता, छोटे-छोटे उनके सिर, उनकी छोटी-छोटी टांगे और उनकी नंगी-नंगी तोंदे जमीन से लगती हुई और वे अपनी बेकार छोटी-छोटी आंखों की सफेद पलकों को जोर-जोर से झपकाकर उस आदमी से टकराते फिर रहे थे। और मैं खड़ा उनको यों देख रहा था जैसे कोई भयानक सपना देख रहा हूं।

गुर्राते, हिनहिनाते और दांत कटकटाते ये सुअर अपनी ललचाती थूथनियां मालिक के घुटनों में ठूंस रहे थे। उसकी टांगों और पसलियों से रगड़ रहे थे। और वह खुद भी चिंघाड़े, मार रहा था। एक हाथ से उनको धक्का देकर भगा देता और दूसरे से, जिसमें वह रोटी के टुकड़े लिए था, उनको सताता जाता। कभी तो रोटी वाला हाथ उनके एकदम समीप ले जाता और फिर एकदम हटा लेता। दबा-दबा कहकहा उसके पूरे जिस्म को थलथल हिला देता। इस हाल में खुद भी वह सुअरों जैसा मालूम हो रहा था। फर्क अगर कुछ था तो सिर्फ यह कि वह उनसे भी अधिक डरावना घृणित और विलक्षण था।

आहिस्ता-आहिस्ता अपने सिर को ऊपर उठाकर येगोर बड़ी देर तक आकाश को ताकता रहा जो इतना ही धुंधला और सर्द था जितनी खुद उसकी आंखें – चमकती हुई बालियां उसके कन्धों पर थिरक रही थीं।

कुछ अस्वाभाविक ऊंची आवाज में उसने कहा, 'अस्पताल में उसने मुझे राजदाराना

तौर पर बताया था कि कयामत कभी आयेगी ही नहीं।'

सेम्योनोव ने जो एक सुअर के कान पकड़ने की कोशिश कर रहा था, पूछा:

'अच्छा नहीं आयेगी?'

'नहीं।'

'शायद वह झूठी, मक्कार है।'

'हां होगी।'

मालिक उन चुलबुले, साफ और चिकने शरीर वाले सुअरों से खेलता रहा। लेकिन अब उसके हाथों की हरकत में सुस्ती पैदा हो गई थी। मालूम होता था कि वह थक गया है।

'उसका वक्ष बड़ा सुन्दर है और नयन मद भरे।' येगोर ने बीते दिन याद करके ठण्डी सांस भरते हुए कहा।

'कौन, नर्स?'

'और नहीं तो क्या! कयामत तो वह कहती थी कभी आयेगी ही नहीं पर अगस्त में सूर्य-ग्रहण पूरा हो जायेगा।'

सेम्योनोव ने फिर उसी अविश्वास से पूछा –

'बिल्कुल पूरा? सच बताना।'

'हां-हां, पूरा। लेकिन वह कहती है कि ज्यादा देर तक नहीं रहेगा। बस एक परछाई आयेगी और चली जायेगी।'

'परछाई कहां से आती है?'

'मुझे क्या मालूम शायद भगवान के पास से ...

मालिक उठ खड़ा हुआ और कठोर व कर्कश स्वर में बोला:

'मूर्खा है वह। सूर्य के सामने कोई परछाई नहीं टिक सकती । उसकी किरणें उसे भी चीरकर निकल जायेंगी। यह तो हुई एक बात। दूसरी यह कि लोग कहते हैं भगवान स्वयं जाज्वल्यमान है। तो फिर भला उसकी छाया कहां से आई? फिर आकाश में शून्य के सिवाय कुछ भी नहीं है। कभी तुमने ऐसी चीज की परछाई देखी है जो कुछ भी न हो? वह निरी बुद्धू है, बिल्कुल बेवकूफ।'

'बेशक, बेशक। हर औरत की तरह।'

'यही तो बात है ... अच्छा तो इन बच्चों को सुअरखाने में बन्द कर दो।'

'मैं किसी लड़के को बुलाता हूं।'

'अच्छा बुला लो! लेकिन हां देखो वे उन्हें मारें नहीं। और अगर उन्होंने मारा तो मुझे बताना। मैं उनकी खबर लूंगा।'

'मुझे मालूम है।'

मालिक आंगन में से गुजरता हुआ चला गया और सुअर उसके पीछे-पीछे दौड़े जैसे सुअरनी के पीछे दौड़ते हैं।

दूसरे दिन सुबह सवेरे मालिक ने बरामदे की ओर से हमारे भटियारखाने का दरवाजा धक्का देकर खोला और चौखट के सहारे खड़ा होकर विषैली मधुरता से कहा:

'मि. बड़बड़िये, जरा जाओ तो आंगन में से आटे के बोरे लाकर बरामदे में तो रख दो।'

खुले हुए दरवाजे में से सर्द हवा के सफेद बादल अन्दर घुस आये और उबालने वाले निकिता के गिर्द छा गए। उसने मुड़कर मालिक को देखा और निवेदन किया:

'जरा दरवाजा बन्द कर दीजिए वासिली सेम्योनोविच! बड़ी तेज आंधी चल रही है?'

'क्या? आंधी?' सेम्योनोव गुर्राया और अपनी छोटी-सी मुट्ठी से उसकी टांट पर ठोंगा मार कर दरवाजा यों ही खुला छोड़ चला गया। निकिता की आयु कोई तीस वर्ष की थी लेकिन देखने में वह लड़का ही मालूम होता था – बुजदिल-सा नाटे कद का आदमी जिसके पीले चेहरे पर बेरंग बालों के गुच्छे-से थे। बड़ी-बड़ी आंखें जो हमेशा खुली रहती थीं और कसक व वेदना तथा भय के कारण पथराई हुई सी नजर आती थीं। विगत छः वर्षों से दिनचर्या यह थी कि सुबह 5 बजे से रात के 8 बजे तक वह उबलते हुए पानी के कढ़ाव के सामने खड़ा होकर उसमें निरन्तर हाथ डुबोता रहता था। सामने से तो दहकती हुई आग के शोले उसका जिस्म झुलसाते रहते थे और पीछे से दिन में सैकड़ों बार दरवाजा खुलता और ठण्डी हवा के झोंके आकर उसकी पीठ सुन्न कर देते। गठिया की बीमारी के कारण उसकी उंगलियां ऐंठ गई थीं; फेफड़ों पर सूजन आ गई थी और टांगों में नीली-नीली नसों की गांठे उभर आई थीं।

एक खाली बोरा पीठ पर संभाल मैं बाहर आंगन में चला गया। ज्यों-ही मैं निकिता के पास आया उसने दांत पीसते हुए बड़बड़ा कर कहा:

'सब तेरा ही कसूर है, गारत हो जाए तू ....।

गंदले पसीने की तरह आंसू उनकी बड़ी-बड़ी आंखों से बहने लगे।

मैं निढाल हो बाहर आया और सोचने लगा: मुझे यहां से जाना ही पड़ेगा।

एक जनाना समूर का कोट पहने मालिक आटे के बोरे के ढेर के पास खड़ा था–कोई डेढ़ सौ बोरे होंगे और उनके एक तिहाई भी बरामदे में नहीं आ सकते थे । यही मैंने मालिक से भी कहा और उसने मुंह बनाकर जवाब दिया:

अगर नहीं आये तो मैं तुम्हीं से उन्हे फिर बाहर निकलवाऊंगा। तुम काफी बलशाली हो ...।'

मैंने कंधे पर से बोरा घसीटकर फेंक दिया और सेम्योनोव से कह दिया कि मैं इस बकवास को बर्दाश्त नहीं कर सकता।

मेरा हिसाब साफ कर दो।

'चलो-चलो, काम करो।' उसने व्यंग्य किया,'सर्दी का मौसम है कहां जाओगे? भूखों मर जाओगे।'

'मेरा तो तुम हिसाब साफ कर दो।'

उसकी फुल्ली आंख सुर्ख अंगारा हो गई और मंजरी आंख की पुतली दुष्टता से घूमने लगी। मुक्का तान कर और सिसकियां लेते हुए उसने कहा:

'घूंसा खाना चाहते हो?'

मारे गुस्से से मेरे तन-बदन में आग लग गई। उसके तने हुए हाथ पर मैंने हाथ मार कर गिरा दिया और उसका कान पकड़कर चुपचाप मसलना और खींचना शुरू कर दिया। इतने ही में उसका बायां हाथ मेरे सीने पर पहुंच गया और उसने बौखलाई हुई और दबी-दबी आवाज में चीखना शुरू कर दिया।

'ठहरो, ठहरो! क्या कर रहे हो? तुम्हारा मालिक हूं। छोड़ो भी कमबख्त ...।'

फिर बारी-बारी अपने चोट खाये हुए दाहिने हाथ को बायें हाथ से दबाते हुए अपने सुर्ख कान को हिलाते हुए उसने मुझे अपने लाल-लाल दीदे निकालकर घूरा और बड़बड़ाकर कहने लगा:

'अपने आका के साथ यह हरकत? क्यों बे! अबे तू कौन? अरे मैं ... मैं पुलिस को बुलाऊंगा! मैं अभी ...।'

और अचानक अपने होठों को भींचते हुए जैसे कि उसे बड़ी तकलीफ हो रही हो उसने लम्बी-सी दर्द भरी सीटी बजाई और अपनी दाहिनी आंखों को झपकाते हुए मुड़ गया।

मेरा गुस्सा मुट्ठी भर सूखी घास की तरह भड़ककर एकदम ठण्डा हो गया। धीरे-धीरे एक कोने की तरफ भारी कदमों से जाते हुए उसने बहुत ही भद्दी-सी आकृति बनाई। छोटे से समूर के कोट में से झांकते हुए उसके मोटे-मोटे पुट्ठे चोट खाये हुए से थिरक रहे थे।

मैं ठण्ड में बिल्कुल अकड़ गया था और चूंकि वापस भटियारखाने में जाने की इच्छा नहीं थी इसलिए बोरों को ढोकर बरामदे में ले जाकर अपने आपको गर्म करने का फैसला किया, जब मैं पहला बोरा लेकर दौड़ता हुआ अन्दर गया तो शातुनोव पर नजर पड़ी। वह जमीन में उंकड़ू बैठा दीवार की दरार में से झांक रहा था और देखने में बिल्कुल उल्लू मालूम हो रहा था। उसके सख्त बाल दरख्त की छाल की एक लम्बी-सी पट्टी से बंधे हुए थे जिसके दोनों सिरे उसकी पेशानी पर पड़े भाव के साथ-साथ हिल रहे थे।

'मैंने देख लिया है,' उसने सन्तोष से कहा। लालटेन के कल्ले जोर-जोर से हरकत कर रहे थे।

'अच्छा तो फिर क्या हुआ?'

उसकी छोटी-छोटी मंगोलियन आंखें रहस्यमय ढंग से फैल गई, उनसे कुछ व्यग्रता भी प्रकट हो रही थी।

'देखो।' उसने खड़े होकर और करीब आकर कहा, 'इसके बारे में मैं किसी से भी जिक्र नहीं करूंगा और न ही तुम करना ...।'

'मेरा तो इरादा ही न था।'

'बिल्कुल ठीक। कुछ भी हो वह है तो हमारा मालिक। क्यों है ना?'

'हां तो फिर?'

'हमें किसी-न-किसी का तो हुक्म मानना ही होगा। वरना आपस में धींगा-मुश्ती शुरू

न हो जायेगी?'

वह अत्यन्त गम्भीरता और आहिस्तगी से बल्कि खुसर-पुसर के अन्दाज में बोल रहा था:

'कुछ अन्दर सम्मान भी होना चाहिए, समझे!'

मेरी समझ में नहीं आया कि उसका मतलब क्या है और मुझे गुस्सा आ गया।

'जहन्नुम में जाओ तुम!'

शातुनोव ने मेरा हाथ पकड़ लिया और बड़े रहस्यमय ढंग से मन्द स्वर में कहा:

'येगोर से डरने की कोई बात नहीं। भयावने सपनों को रोकने का कोई मन्त्र आता है तुम्हें? येगोर को रात के समय बड़े डरावने ख्वाब आते हैं। उसे मृत्यु से बड़ा डर लगता है। उसने बड़ा पाप किया है और उसकी आत्मा उसी के भय से दुखित रहती है ...। एक बार रात को संयोगवश मैं अस्तबल के पास से गुजरा ता देखता क्या हूं कि वह वहां मौजूद है और घुटनों के बल खड़ा गिड़गिड़ा रहा है 'हे परमपिता परमेश्वर मुझे अचानक मृत्यु से बचाना! समझे तुम?'

'नहीं, मैं नहीं समझा!'

'इस तरह उसको अपने वश में करो!'

'किस तरह?'

'डर से ...। ताकत की हवा में न रहना। वह तुमसे पांच गुना अधिक शक्तिशाली है।'

मुझे अनुभव हुआ कि यह व्यक्ति मेरी भलाई चाहता है। इसलिए मैंने उसे धन्यवाद दिया और हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ बढ़ाया। कुछ संकोच के बाद उसने भी अपना हाथ आगे किया। और जब मैंने उसकी गठीली हथेली गर्मजोशी से दबाई तो उसको शायद कुछ अफसोस हुआ और वह अपने होंठ चबाता हुआ आंखें नीची करके कुछ बड़बड़ाया जो मेरी समझ में न आया।

'जाने दो, अब कुछ नहीं कहता। उसने झुंझलाहट दर्शाते हुए कहा और भटियारखाने के अन्दर चला गया। मैंने बोरे ढोने शुरू कर दिये। मेरे मस्तिष्क पर कुछ मिनट पहले की घटना बादल की नाईं छाई हुई थी।

मैंने रूसी जनता के बारे में पढ़ा था – उसकी मैत्रीपूर्ण भावना और समाज प्रेम भलाई की ओर उसका झुकाव। लेकिन लोगों को मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर और भी ज्यादा निकट से जानता था क्योंकि दस वर्ष की आयु से ही मुझे अपनी जीविका आप कमानी पड़ी थी। घर और स्कूल के प्रभाव से मैं बिल्कुल स्वतन्त्र हो चुका था।

जो कुछ भी मैंने पढ़ा था मेरे व्यक्तिगत अनुभव स्वयं उसकी पुष्टि कर रहे थे। यह सच है कि लोग हर अच्छी चीज में कुछ आकर्षण अनुभव करते हैं, उसे सराहते हैं, उसे प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं और इस अनपढ़, निराश जीवन को सुखमय और आशावान जीवन में परिणित करने की प्रतीक्षा करते हैं कि अच्छी चीजें किसी तरह उनके पास आ जायें।

लेकिन मैं बहुधा सोचा करता हूं कि अच्छी चीज से लोग इस प्रकार प्रेम करते हैं जिस प्रकार बच्चे परियों की कहानियों से। उसकी सुन्दरता और अप्राप्तता पर आश्चर्य

प्रकट करते हैं। उसकी ऐसी प्रतीक्षा करते हैं जिस तरह किसी त्योहार की। लेकिन अक्सर लोगों को उसकी शक्ति में विश्वास नहीं होता। और ऐसे तो बहुत ही कम होते हैं जो उसका संरक्षण और उसके विकास की देखभाल करते हों। उनका उदाहरण तो ऐसी बिन जुती धरती का-सा है जिस पर ढेरों घास उग आई हो और जहां अगर कहीं हवा के झोंके के साथ गेहूं का कोई दाना आ जाये तो उसकी नर्म व नाजुक कोंपलें पनपने ही नहीं पातीं बल्कि यों ही ठिठुरकर रह जाती हैं।

शातुनोव से मुझे दिलचस्पी पैदा हो गई थी -- यह व्यक्ति मुझे कुछ असाधाराण-सा प्रतीत होता था।

कोई एक सप्ताह तक मालिक भटियारखाने में आया ही नहीं और न ही उसने मुझे नौकरी से अलग किया। उधर मैंने भी कोई जोर नहीं दिया। मेरा कोई ठौर-ठिकाना था नहीं और फिर जिन्दगी यहां दिनों-दिन ज्यादा दिलचस्प होती जा रही थी।

शातुनोव जानबूझकर मुझसे कतराता था। मैं उससे घुलमिलकर बातें करने का मौका ढूंढता रहा, लेकिन सफल न हो सका। मेरे प्रश्नों का गोलमोल उत्तर ज्यादा से ज्यादा यह होता जो वह नजरें नीची किये हुए और जुगाली करते हुए देता:

'हां, काश मैं कोई सही शब्द जानता! लेकिन फिर भी कोई व्यक्ति अपने मस्तिष्क का आप मालिक होता है।

उसका व्यक्तित्व कुछ विलक्षण, अन्धकार में छिपा हुआ था – सन्यासी का सा व्यक्तित्व, स्वभावतया वह अल्पभाषी था। बाज़ारी भाषा का कभी प्रयोग न करता था, परन्तु आराधना वह न तो सुबह उठकर करता था और न सोते समय। हां जब खाना खाने बैठता तो अपनी गहरी छाती पर क्रास का चिन्ह जरूर बना लेता था। अवकाश का उसे यदि एक भी क्षण मिलता तो वह अन्धियारे से अन्धियारा कोना देखकर वहां जा बैठता। और या तो अपने फटे कपड़े सीने लग जाता या फिर अंधेरे में बैठा जुएं मारा करता। और हमेशा वह बहुत ही नीचे सुरों में करीब-करीब फटी हुई आवाज में यह गीत गुनगुनाता:

हाय कैसा दुखों ने घेरा है?
आज क्यों हर तरफ अंधेरा है?

कोई व्यंग्य से उससे पूछता:

'सिर्फ आज? कल क्या तुम बहुत खुश थे?'

जवाब दिये बिना नजरें झुकाए ही वह गुनगुनाता रहता:

घर की खिंची शराब है मैं चाहता नहीं...

'खैर तुम्हारे पास तो है ही नहीं। मेरा मतलब है घर की खिंची हुई शराब।'

उसने अपनी भवें तक न हिलाईं मानो वह बहरा हो। और दुखित लय में गाता रहा:

अपनी महबूब से मिलूं जाकर
पांव इन्कार कर रहे हैं मगर
पांव चलने की खो चुके ताकत
और दिल में भी कुछ नहीं हसरत

बंजारे याश्का को उदासीनपूर्ण गीत नहीं आते थे।

'ओ बे भेड़िये!' वह नाराज होकर चीखा और उसकी बत्तीसी दिखाई देने लगी। वह फिर हुंकारने लगा।

अन्धकारमय कोने से मातमी गीत के शब्द धीरे-धीरे सुनाई देते रहे:

दिल पे रंजोअलम का साया है
हाय गम ने मुझे सताया है
गम से बोझिल है इस कदर छाती
रात को नींद तक नहीं आती

'वानुक!' नानबाई ने हुक्म दिया। मुंह बन्द करो। यह तो इस धुएं में घोंट कर मार देगा! आओ हम कोई और गीत गायें।'

सभी ने नृत्य का एक अश्लील गीत आरम्भ कर दिया। शातुनोव गहरी और भर्रायी हुई आवाज निकाल रहा था और उसके अंदाज में कुछ उदासीनता थी। गीत के असाधारणतया अश्लील शब्दों के मुकाबले में यह उदासीनता अश्लीलता की एक निराली अदा मालूम होती थी। कभी-कभी गीत उसकी आवाज में दबकर लुप्त हो जाता था।

वजाहिर नानबाई और आर्तेम मुझ पर कुछ मेहरबान मालूम होते थे – यह एक नई किस्म का रवैया है जिसे शब्दों में व्यक्त करना असंभव है। लेकिन इसको मैं महसूस जरूर कर सकता हूं। रहा याश्का 'झुनझुना' तो मालिक से मेरी झड़प के बाद पहली ही रात को वह भूसे से भरा हुआ एक बोरा उस कोने में घसीट लाया जहां मैं सोया करता था और ऐलान कर दिया:

'हां तो अब मैं तुम्हारे पाथ थोया तरूंगा।'

'अच्छा।'

'मैं तहता हूं, हम तुम दोस्त बन दायें।'

'चलो बन जाते हैं।'

वह फौरन लुढ़कता हुआ मेरे पास आ पहुंचा और बहुत ही राजदाराना अन्दाज में अपनी मोटी जबान तेजी से चलाते हुए उसने मुझे अपना राजदार बनाया।

'देतो मैंने एक तूहे तो धींदर से बातें तरते देथा था। सच तहता हूं मैंने देथा। एत दफा रात तो मेरी आंथ थुल दई। चांदनी रात थी मैंने देथा कि मेरे पास ही एत तूहा नानथताई ततर-ततर तर था रहा है। मैं चुपचाप रेंगता हुआ उसते पास आया। उसी वक्त एत धींदर वहां आ दया। फिर दो और आये और तूहे ने नानथताई थाना थोड़ दिया और अपनी भूरी मूंछें हिलाने लगा। हमारे गूंगे नितान्दर की तरह वे एत दूथरे ते बातें तर रहे थे। ना जाने त्या बातें तर रहे होंगे। तुछ बड़े मजे की बात होगी, है ना! थो गये क्या?'

'नहीं तो। फिर क्या हुआ?'

'ऐथा मालूम होता था जैथे वह झींदरों थे पूछ रहा हो – तुम तहां ते आए हो? और उन्होंने कहा – गांव से! ... तुम्हें मालूम है जब गांव में अकाल पड़ता है या जब आग लग जाती है तो गांव थे आतर ये शहर में जमा हो जाते हैं उन्हें मालूम रहता है कि आग कब लगेगी। बुड्ढा बाबा कहता है उनथे, 'भाग जाओ तुम थब।' और उछल तर भाग जाते हैं। तुमने तभी देखा है?'

'अभी तक तो नहीं।'

'मैंने देथा है।'

और यह कहते ही उसने अचानक बड़े जोर से खर्राटा लिया जैसे उसका दम घुट रहा हो और फिर सुबह तक 'झुनझुने' की आवाज नहीं सुनाई दी।

अब मालिक ने अपना कायदा बना लिया था कि करीब-करीब रोजाना ही हमारे भटियारखाने में आये। और वह भी छांट कर ऐसे समय आता था कि जबकि मैं कोई किस्सा कह रहा हूं, अपने साथियों को किताब पढ़कर सुना रहा हूं। दबे पांव अन्दर आकर वह मेरे बांई तरफ खिड़की के पास लकड़ी के एक खाली डिब्बे पर बैठ जाता और अगर मैं उसे देखकर रुक जाता तो वह बड़े पैने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहता:

'बड़बड़ाए जाओ प्रोफेसर साहब। चलो काते जाओ अपना सूत, डरो नहीं।'

और वह बड़ी देर तक बैठा रहता। खामोशी से गाल फुला-फुलाकर अपनी चंदिया के छिदरे बालों के नीचे अपने छोटे-छोटे कान हिलाता रहता। बाल उसके इतने बारीक कटे हुए थे कि खोपड़ी पर चिपके हुए मुश्किल से नजर आते थे। कभी-कभी वो फटी हुई आवाज में पूछता:

'क्या, क्या?'

और एक दिन जब मैं भूमण्डल के बारे में बता रहा था तो वह बारीक और तेज आवाज में चीखा:

'ठहरो! और खुदा कहां से आ गया?'

'वह यहीं है?'

'झूठ! कहां है!'

'अपनी बाइबिल भी नहीं जानते?'

'अच्छा अब मुझे बनाओ नहीं – कहां है वह?

'और पृथ्वी का और कोई आकार नहीं था। गहरी कंदराओं में घोर अन्धकार छाया हुआ था और समुद्रों की सतह पर परमेश्वर की आत्मा उड़ रही थी।'

'समुद्र!' उसने विजेता की नाई चीखकर कहा, और तुम तो यह सिद्ध करने की चेष्टा कर रहे थे कि पृथ्वी आग का गोला थी। ठहरो, मैं पादरी साहब से पूछूंगा कि किताबों में क्या आया है ...।'

वह उठ खड़ा हुआ और गमगीन लहजे में यह कहता चला गया:

'तुम बहुत कुछ जानते हो बड़बड़िए! – क्या ख्याल है? तुम्हारे लिए यह अच्छा है क्या?

याश्का ने अपना सिर हिलाते हुए चिंतित स्वर में कहा:

'तुम्हें फांसने के लिए वह जरूर कोई चाल चलेगा!'

उसके दो रोज बाद मुन्शी साश्का दौड़ता हुआ हमारे भटियारखाने में आया और हुक्म देते हुए चीखकर बोला:

'मालिक बुला रहा है तुम्हें!'

'झुनझुने' ने चपटी नाक वाला अपना दागदार मुंह उठाकर गम्भीरता से सलाह दी:

'दुसेरी अपने साथ लेते जाना।'

मैं उठकर बाहर चला गया। बाकी सब हंसी रोकने की असफल चेष्टा कर रहे थे। तहखाने का कमरा सामान से खचाखच भरा हुआ था। चाय के समोवार के करीब मेज के सामने हमारे मालिक के अलावा दो और मजदूर दोनोव और कुवशीनाव बैठे थे। मैं दरवाजे में आकर रुक गया। मेरे मालिक ने बड़ी ही नर्म आवाज में, जिसमें कुछ दुर्भावना निहित थी, हुक्म दिया:

'अच्छा प्रोफेसर बड़बड़िए! अब जरा मेहरबानी करके सूर्य और तारों का किस्सा सुना दीजिए कि ये सब कहां से और कैसे आये?'

उसका चेहरा तमतमाया हुआ था। फुल्ली आंख सिकुड़ी हुई थी और मंजरी में एक नटखट चमक थी। दो और मुस्काते हुए चेहरे थे, एक सुर्ख अंगारे जैसा खरखरी बालों के चौखटे में से झांकता हुआ और दूसरा मटियाला फफूंद खाया हुआ सा नक्शा। समोवार धीरे-धीरे सनसना रहा था। और ये अद्भुत लगने वाले सिर भाप के छल्लों में छिपे जा रहे थे। दीवार के सहारे लगे हुए पलंग पर बैठी हुई मालकिन सफेद चिमगादड़ मालूम होती थी। मसले हुए सोने के कपड़ों में से उसके बाजू निकले हुए थे। निचला होंठ लटका हुआ था और वह झूम-झूमकर मरीजों की तरह खांस रही थी। कोने में पवित्र मूर्ति के पास रखे हुए दिए की मंद लौ भड़क रही थी मानों सर्दी के मारे कांप रही हो। खिड़कियों के दरम्यान दीवार पर एक तस्वीर लटक रही थी। जिसमें एक स्त्री कमर तक नग्न अपनी गोद में एक बिल्ली लिये बैठी थी। जो खुद उसी तरह उल्लेखनीय रूप से मोटी थी। कमरे में वोडका अचार और भुनी हुई मछली की मिली-जुली बू घुटी हुई थी। राहगीरों की टांगों की परछाइयां खिड़की में से यों दिखाई देती जैसे कोई बड़ी-बड़ी कैंचियों से कुछ काट रहा हो।

मैं आगे बढ़ा और मेरा आका मेज पर से दस्ती कांटा उठाकर खड़ा हो गया। और उसको मेज के किनारे पर बजाते हुए मुझसे कहा:

'नहीं, तुम वहीं खड़े रहो। पहले हमें कहानी सुनाओ और फिर मैं तुम्हारी आवभगत करूंगा ...।'

मैंने सोचा कि बाद में मैं भी उसकी खातिर करूंगा और यह निश्चय करके मैंने बातचीत शुरू कर दी:

पृथ्वी पर जो जीवन था उसमें कोई आनन्द नहीं था, सुख नहीं था और यही कारण था कि मुझे आकाश इतना प्यारा लगता था। अक्सर गर्मियों के मौसम में रात के समय मैं खेतों में निकल जाता। धरती पर चित्त लेटकर आसमान की ओर देखता तो मुझे ऐसा मालूम होता कि हर एक सितारा अपनी सुनहरी किरण मेरे पास भेज रहा है। मेरे दिल

में उतार रहा है। करोड़ों की संख्या में वे एक ही व्यवस्था में लगे हुए थे। और मैं भी जमीन के साथ उनके दरम्यान शून्य में तैर रहा था जैसे किसी बहुत बड़ी वीणा के तारों में रात के समय जमीन की जिन्दगी का खामोश राग मुझे जीवन के अनन्त सुख का गीत सुनाने लगता। ब्रह्माण्ड से आध्यात्मिक मिलन की ये भरपूर साअतें दिन भर के चिन्ताजनक प्रभावों की कटुता हृदय पर से इस प्रकार साफ कर देती जैसे किसी ने जादू कर दिया हो।

और यहां इस गन्दे छोटे से कमरे में तीन आकाओं और एक शराबी बुढ़िया खूसट के सामने जो मुझे मदहोश, बेरंग निगाहों से घूर रही थी, मैंने अपने आस-पास की हर घृणा करने वाली चीज़ की उपस्थिति भुलाकर अपने विचारों की रौ में बहना शुरू कर दिया। मैंने देखा कि दो कुरूप चेहरे अपमानजनक अन्दाज में दांत निकाल रहे थे और मेरे मालिक ने अपने मुंह की चोंच बनाकर आहिस्ता-आहिस्ता सीटी बजानी शुरू कर दी थी और उसकी मंजरी आंख मेरे चेहरे पर तेजी के साथ दौड़ रही थी और एक अद्भुत ढंग से मेरा परीक्षण कर रही थी। मैंने दोनोव को भर्राई हुई थकावट भरी आवाज में कहते सुना:

'कमबख्त बड़ा ही बातूनी है।'

और कुवशीनोव ने झुंझलाकर कहा:

'मुझसे पूछो तो यह शख्स बड़ा ही चालाक है।'

लेकिन इसके बावजूद मैं बिल्कुल भी नहीं घबराया मैं उनको अपनी बातें सुनने पर मजबूर करना चाहता था। और ऐसा मालूम होता था कि मेरी बातचीत का जादू उन पर चढ़ता जा रहा था।

अचानक मेरे मालिक ने मूर्ति की नाईं बैठे-बैठे आहिस्ता से अनुनासिक आवाज में कहा:

'अच्छा बस काफी है बड़बड़िये! बहुत-बहुत शुक्रिया। बड़ा मजा आया। तुमने तमाम सितारों को अपनी-अपनी जगह जमा दिया है। अब जाओ और जाकर मेरे नन्हें-मुन्ने सुअरों को खाना खिलाओ।'

अब मैं जब वह जमाना याद करता हूं तो बड़ा आनन्द आता है। लेकिन उस समय मजे का तो खैर सवाल ही क्या उल्टा इतना गुस्सा आया कि अब याद भी नहीं आता मैंने अपने आपको संभाला क्योंकर!

इतना याद है कि जब मैं बेतहाशा भागता हुआ भटियारखाने में आया तो शानोव और आर्तेम ने मुझे संभाला, सहारा देकर दालान में ले गये और पानी का एक गिलास पिलाकर मेरे होश व हवाश ठीक किये। याश्का 'झुनझुने' ने बड़े विश्वास से कहा:

'क्यों मैं न कहता था? हाय, तुमने मेरी बात न मानी ना!'

और बंजारे ने गुर्राते, बड़बड़ाते हुए मेरी पीठ थपथपाई।

'मैं भला क्या करूंगा? मेरा इसमें क्या बस चले ... जब उस पर भूत सवार होता है तो वह किसी की नहीं सुनता चाहे लाट पादरी ही क्यों न आ जायें।'

सुअरों को खिलाना बड़ा ही नीच काम और अत्यन्त कठोर दण्ड समझा जाता था। और जब बाल्टियां भर के उनका खाना आता तो वे लाने वाले पर इस बुरी तरह झपटते कि उसका संभलना मुश्किल हो जाता, अपनी मोटी-मोटी थूथनियां उसकी टांगो में दे देते

और अगर कोई फिसल कर कीचड़ में लथपथ न हो जाता तो वह बड़ा ही भाग्यशाली होता था।

सुअरों के अहाते में दाखिल होते ही फौरन दीवार का सहारा ढूंढना पड़ता था। सुअरों को लातें मार-मार के भगा कर बर्तन में उनका खाना उलट कर फौरन ही वहां से भाग आना पड़ता था क्योंकि जब उन सुअरों की लातें पड़ती तो गुस्से में आकर वे काटने दौड़ते थे। उस समय और भी बुरा मालूम हुआ जब येगोर ने भटियारखाने का दरवाजा खोलकर भयानक आवाज में ऐलान किया :

'ऐ ओ कात्सावी[1]। चल सुअरों को अन्दर ला।'

इसका अर्थ यह था कि बेकाबू जानवर आंगन में छुपे हुए थे और दरबे में जाना नहीं चाहते थे। ऐसी सूरत में पांच-छः आदमी आंगन में दौड़ जाते। इस तरह छीन-छान, गाली-गलौज और भाग-दौड़ शुरू हो जाती। और मालिक इस तूफाने-बदतमीजी से बड़ा आनन्द लेता। पहले-पहल तो वे लोग इस दीवानेपन में खुद भी मजा लेते क्योंकि इस तरह किसी हद तक उनकी काम की समानता का जादू टूटता था। लेकिन जल्दी ही वे थक कर चूर हो जाते। और उनका दम फूल जाता। जिद्दी सुअर आंगन में इधर-उधर लुढ़कते फिरते और पीछा करने वाले आदमियों को धक्के देकर गिरा देते और मालिक खड़ा तमाशा देखता रहता। इस भागम-दौड़ का नशा उस पर भी छा जाता और वह अपनी ही जगह खड़े-खड़े उछलता, कूदता, सीटियां बजाता और नारे बुलन्द करता।

'शाबाश छोड़ना नहीं! खाल खेंच लेना इनकी।'

जब कोई आदमी उलझकर जमीन पर गिर पड़ता तो मालिक बड़ा ही खुश होता और फिर जोर-जोर से चीख कर अपनी मोटी-मोटी औरतों जैसी जांघो को पीटता और मारे हंसी के लोट-पोट हो जाता।

गुलाबी-गुलाबी थूथनियां पूरे आंगन को चीरती फिर रहीं होतीं और उनके पीछे दौड़ते-दहाड़ते हुए चंद मरियल सूखे इन्सान जिनके जिस्म आटे में लिथड़े हुए होते, बदन पर गंदे चिथड़े और नंगे पैरों में फटे जूते—ये लोग दौड़ते और गिरते और सुअर की पिछली दोनों टांगे पकड़े पूरे आंगन में घसीटते फिरते। यह दृश्य भी वास्तव में बड़ा ही विलक्षण और हास्यास्पद होता था।

एक दिन एक सुअर सहन में से भागकर सड़क पर जा निकला और हम छः लड़के दो घण्टे तक उसका पीछा करते बाजारों में दौड़ते फिरे यहां तक कि एक राह पर एक तातारी ने सुअर की अगली दोनों टांगे डन्डा मारकर जख्मी कर दी और उसके बाद हम सुअर को चटाई पर रख कर घर वापस ले आये। और हमारे पड़ोसियों को यह तमाशा देखकर बड़ा मजा आया। तातारी देखकर अपने सर हिलाते और घृणा से थूकते लेकिन रूसियों ने एक छोटा सा जुलूस बना लिया और हकोरे साथ-साथ चलने लगे। एक संवलाए हुए तेज-तर्रार विद्यार्थी ने अपनी टोपी उतार कर मचलते हुए जानवर की तरफ इशारा किया और सहानुभूति भरे स्वर में आर्तेम से पूछा :

'कौन है, मां या बहन?'

'मालिक!' थके मांदे और झुंझलाए हुए आर्तेम ने झिड़क कर उत्तर दिया।

1 प्राचीनकाल में रूसियों के उपहास के लिए यूक्रेनी उन्हें इसी अपमानजनक विशेषण से पुकारते थे – अनु०

हमें सुअरों से नफरत थी। वे हमसे अच्छी तरह रहते थे और सिवाय मालिक के सबके लिए कष्टकर और अपमानजनक थे । फिर हमें उनकी सेहत और तन्दुरूस्ती की खबरगीरी करनी पड़ती थी जो बड़ी ही कष्टकर थी।

जब भटियारखाने वालों को मालूम हुआ कि मुझे एक हफ्ते तक सुअरों की देखभाल करनी होगी तो कुछ लोगों ने मुझसे इस खास रूसी उत्साह से सहानुभूति प्रकट की जो वैसे बहुत आसह्य होता है और दिल पर गोंद की तरह चिपकता है। और उसकी सारी शक्ति छीन लेता है। अक्सर लोगों ने उदासीनतापूर्ण चुप साध ली लेकिन कुजिन ने उपदेश देते हुए भुनभुनाते हुए कहा:

'कोई परवाह नहीं! मालिक हुक्म देता है अब वह हुक्म बजा लेना तुम्हारा काम है! आखिर हम किसकी रोटी खातें हैं?'

आर्तेम चीखकर बोला:

'ओ बुड्ढे खूसट! काणे चुगलखोर...'

'अच्छा, और नहीं तो क्या?' बूढे ने कहा।

'आज, आज भी जाकर कह दे। कह देना जाकर मालिक से ...।'

कुजिन ने बात काटते हुए बड़े सन्तोष से उत्तर दिया:

'सो तो कहूंगा ही! मेरे यार मैं तो सब कुछ ही कह दूंगा। मैं जीता ही सच बोल कर हूं ...।'

बंजारे ने एक मोटी-सी गाली दी और फिर हमेशा के विपरीत मुंह फुलाकर खामोश बैठ गया।

रात के इस संवेदनशील क्षण में जबकि मैं अपने कोने में लेटा भय व आतंक के कारण पत्थर बना थके-हारे आदमियों के जोर-जोर के खर्राटे सुन रहा था और पड़े-पड़े अपने दिमाग में जिन्दगी, इन्सान, सच्चाई और आत्मा जैसे गूंगे और समझ में न आने वाले शब्द बार-बार व्यवस्थित ढंग से जमा रहा था तो नानबाई चुपके-चुपके रेंगता हुआ मेरे पास आया और करीब ही लेट गया।

'सो तो नहीं रहे?'

'नहीं!'

'बड़ी मुसीबतें आ रही हैं भाई?'

उसने अपने लिए एक सिगरेट बनाया और सुलगाया। छोटी-सी सुर्ख लौ में उसकी दाढ़ी के रेशमी तार और उसकी नाक की चोंच रोशनी के हाले में आ गई। जली हुई राख फूंक मारकर उड़ाते हुए बंजारे ने मेरे कान में कहा:

'देखो, सुअरों को जहर दे दो। बड़ी आसान बात है। बस यह करना कि गर्म पानी में थोड़ा सा नमक मिलाकर उन्हें दे देना। जानवरों के हलक में सूजन आ जाएगी और दम घुटकर मर जायेंगे।'

'लेकिन इससे फायदा क्या?'

'पहले तो यह कि हमारी मुश्किलें आसान हो जायेंगी और मालिक को एक नुकसान पहुंच जायेगा। मैं तुमको सलाह दूंगा कि तुम यहां से चले जाओ मैं साश्का से कहकर

तुम्हारा पहचान पत्र आका के पास से चोरी करा लूंगा – भगवान ने चाहा तो जरूर! क्यों क्या कहते हो?

'नहीं मैं नहीं जाऊंगा!'

'तुम्हारी मर्जी! बहरहाल तुम यहां ज्यादा टिक नहीं सकते। तुम्हारी कमर वह जल्दी ही तोड़ देगा।' अपने दोनों घुटने सिकोड़कर सीने से लगाकर और नींद की-सी हालत में झूमते हुए उसने बहुत धीरे से कहा:

'मैं तो तुम्हारी भलाई चाहता हूं, भगवान की कसम दिल से चाहता हूं। सचमुच तुम चले जाओ ...। जब से तुम यहां आये हो हमारी हालत बदतर हो गई है। मालूम होता है तुम उसे छेड़ते हो और वह बरसता है हम सब पर। समझ लो सब लोग तुमसे आजिज आ गये हैं। बहुत मुमकिन है कि वे तुम्हारे साथ बुरी तरह पेश आयें।'

'और तुम?'

'मैं?'

'क्या तुम भी आजिज आ गये हो मुझसे?'

जवाब देने से पहले वह अपनी सिगरेट की पीली चमक को खामोशी के साथ घूरता रहा। फिर बेदिली से बोला –

'मुझसे अगर पूछते हो तो सुनो – मटर के पौधे दलदल में नहीं लगाये जाते।'

'लेकिन जो कुछ मैं कहता हूं क्या वह सच नहीं ...?'

'सच तो है, ठीक है लेकिन इससे फायदा क्या? एक चना तो भाड़ नहीं फोड़ सकता। तुम कहो या न कहो इससे फर्क ही क्या पड़ता है? तुम दूसरों पर हद से ज्यादा एतबार कर लेते हो। भैया! खबरदार! लोगों पर एतबार करना खतरनाक होता है।'

'तुम पर भी?'

'हां-हां मुझ पर भी। मैं कौन हूं? क्या मुझ पर भरोसा किया जा सकता है? आज मैं कुछ हूं, कल कुछ और ...! बाकी सब भी ...!'

मौसम सर्द था और खमीरी आटे की तेज बू नथुनों को चीरती हुई घुस रही थी। चारों तरफ लोग मिट्टी के ढेर की तरह पड़े जोर-जोर से सांस ले रहे थे। एक आदमी सोते-सोते बड़बड़ा रहा था:

'नताशा ... नता ... हा ...।'

कोई कराह रहा था और बुरी तरह सिसकियां भर रहा था। शायद वह ख्वाब देख रहा होगा कि कोई उसे मार रहा है। तीन अंधियारी खिड़कियां गंदी दीवार में से रात को घूर रही थीं – गहरी सुरंगों के मोखो की तरह। खिड़कियों के छज्जों से पानी की बूंदें टपक रही थीं। बेकरी से तमाचे मारने और थपथप की धीमी आवाज आ रही थी। नानबाई का सहायक गूंगा और बहरा निकांदर आटा गूंध रहा था।

बंजारे ने सोच-विचार करते हुए बहुत नर्मी और आहिस्तगी से कहा:

'तुम्हें चाहिये कि देहात में चले जाओ और स्कूल मास्टर बन जाओ। तुम्हारे लिए सबसे ज्यादा मुनासिब काम यही है। विश्वास करो बड़ी मजेदार जिन्दगी होती है। और बिल्कुल सीधी-सादी! निश्चित और आत्मा को सुखी रखने वाली। यदि मैं शिक्षित होता तो शुरू

से ही स्कूल मास्टर बन जाता मुझे छोटे-छोटे बच्चों पर बड़ा ही प्यार आता है और औरतों पर भी। ये औरतें तो मेरे दुर्भाग्य का कारण हैं। ज्योंही कोई मामूली-सी लड़की पर मेरी नजर पड़ी और बस मैं गया काम से। मुझे ऐसा मालूम होता है जैसे कि वह मुझे घसीटे लिए जा रही हो। अगर मेरी खसलत ऐसी न होती और अगर मुझे खेती पसन्द आ जाती तो शायद मैंने किसी अच्छी औरत से शादी करने का फैसला कर लिया होता... हम... मैं और वह मिलकर बच्चों का लालन-पालन करते – कम से कम एक दर्जन तो होते साले। और वहां – एक अच्छी सूरत वाली औरत है और दूसरी इतनी भी हसीन और सब की सब सहज ही प्राप्य हैं और इसी तरह लश्टम-पश्टम गुजर होती रहती है। ... भगवान जाने क्यों? बिल्कुल ऐसी बात हुई जैसे कोई जंगली बेर तोड़कर इकट्ठे किये जाते हों। लालच इतना हो जाता है कि हालांकि देख रहे हैं कि टोकरी भर चुकी है लेकिन नहीं जी यही चाहता है कि अभी दो-चार और तोड़ लो ...।'

उसने अंगड़ाई लेते हुए दोनों हाथ उसी तरह फैला दिये जैसे किसी से बगलगीर होने वाला हो। लेकिन फिर अचानक गंभीर और दो टूक फैसला करने के स्वर में बोलाः

'अच्छा तो फिर सुअरों के बारे में क्या ख्याल है?'

'नहीं मैं ऐसा नहीं करूंगा।'

'बड़े अफसोस की बात है। तुम्हारा क्या जाता है?'

'नहीं।'

बंजारा चुपचाप सरकता हुआ आतिशदान के पास अपने कोने में वापस चला गया। निस्तब्धता छाई हुई थी। मुझे कुछ ऐसा गुमान हुआ जैसे कुजिन की इकलौती आंख मेज के नीचे से चमक रही हो। जहां वह सोया करता था।

यह काल्पनिक चित्र भयभीत चिमगादड़ की नाईं गंदे फर्श पर सोये हुए लोगों के ऊपर से फड़फड़ाता हुआ, सीली हुई काली दीवारों की चौकट मेहराबों से टकरा-टकराकर आखिरकार बेजान होकर गिरता हुआ दिखाई दिया।

'ओ बे!' कोई ख्वाब में बड़बड़ाया। 'इधर दे! ... मुझे कुल्हाड़ी दे ...!'

सुअरों को किसी ने जहर दे दिया।

दो दिन बाद सुबह को जब मैं सुअरों के दरबे में गया तो पहले की तरह मुझ पर झपटे नहीं बल्कि अंधियारे कोने में एक-दूसरे पर लदे पड़े रहे। अनजानी भारी गुर्राहट सुनाई दीं। लालटेन की रोशनी से मैंने उन्हें गौर से देखा। और मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि रात भर में जानवरों की आंखें पहले से बड़ी हो गई हैं और पीली पलकों में दीदे उबल पड़ें हैं। उन आखों से मुझे एक इल्तिजा नजर आ रही थी, खौफ-सा छाया नज़र आता था जिसमें एक हद तक शिकायत भी मिली-जुली थी। उनकी उखड़ी-उखड़ी सांस दुर्गन्धमय अन्धकार को दहला रही थी। और इन्सान के कराहने की-सी आवाजें गूंजती सुनाई दे रही थीं।

'खत्म हो गये?' मैंने अपने आप ही से कहा। अपने दिल में मुझे एक कसक सी महसूस हुई।

मैं भटियारखाने में गया और बंजारे को बुलाकर बरामदे में लाया। वह हंसता हुआ और अपनी दाढ़ी-मूंछों पर हाथ फेरता हुआ बाहर आया।

क्या तुमने सुअरों को जहर दिलवाया है?'

वह बेचैनी की स्थिति में कभी एक टांग पर खड़ा हुआ, कभी दूसरी पर फिर बड़ी उत्सुकता से पूछाः

'मर गये क्या? आओ जरा चलकर देखें।'

आंगन में उसने चिढ़ाते हुए पूछाः

'मालिक से कहने जा रहे हो?'

'मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। दाढ़ी के बालों को अपनी उंगली में लपेटते हुए उसने लज्जित हो कहा –

'याश्का की कारस्तानी है यह! बदमाश कहीं का। उसने हमें बातें करते सुन लिया था। और कल क्या कहता है मुझसे, 'चचा याश्का मैं करूंगा यह काम! मैं पिलाऊंगा उन्हें नमक का पानी! मैंने उससे कहा, 'कहीं कर ना बैठना ऐसा ...।'

डरबे के दरवाजे पर रुककर और आंखें सिकोड़कर अंधेरे में झांकते हुए जहां जानवरों की उखड़ी हुई सांस की गर-गर और फश-फश सुनाई दे रही थी – उसने अपनी ठोढ़ी खुजाई, माथे पर शिकनें डालीं और तुर्श लहजे में कहाः

'कितना सड़ियल काम है यह! झूठ बोलने में तो मैं पटु हूं! और सच तो यह है कि मुझे यह अच्छा लगता है। लेकिन कभी-कभी तो ऐसा होता है कि मुझसे झूठ बोला ही नहीं जाता ... बोलते ही नहीं बनता।'

वापसी पर सर्दी में सिकुड़ते हुए, बड़बड़ाते हुए उसने मेरी आंखों में आंख डालकर देखा और चबा-चबाकर बोलते हुए कहाः

'अरे तूफान खड़ा हो जायेगा। मालिक तो अपने आपे में न रहेगा याश्का की तो समझो गर्दन मोड़ कर रख देगा।

'याश्का से इसका क्या सम्बन्ध?'

'लेकिन हुआ तो यही है।' बंजारे ने आंखें मारते हुए कहा। 'हमारे यहां हमेशा यही होता है कि करें बड़े और भुगतें छोटे।'

यह कहकर उसने फौरन ही मुझे घूरा और चुभती हुई निगाहों से देखता हुआ और यह बड़बड़ाता हुआ दालान में चला गयाः

'जाओ शिकायत कर दो।'

मैं आका के पास गया। वह अभी-अभी सोकर उठा था। उसका चेहरा मुर्झाया हुआ और मटियाला-सा था। उसके स्याह बाल समतल खोपड़ी के गूमड़ों पर चिपके हुए थे। टांगें चीरे वह मेज के सामने बैठा था उसकी लम्बी गुलाबी कमीज घुटनों तक खिंची हुई थी और कमीज के दामन में लिपटी-लिपटाई एक भूरी बिल्ली बैठी थी।

मालकिन चाय के लिए मेजें सजा रही थी और जब वह कमरे में इधर से उधर जाती तो ऐसा मालूम होता था कि जैसे कोई छिपे हुए हाथ चिथड़ों की किसी पोटली को घसीट रहा हो।

'क्या बात है?' उसने कुछ मुस्कराते हुए पूछा। 'सुअर बीमार हो गये हैं।'

उसने बिल्ली को उठाकर मेरे कदमों में फेंक दिया और मुट्ठियां भींचकर बैल की तरह मुझ पर झपटा। उसकी दाहिनी आंख से शोले से निकल रहे थे और बायीं आंख सुर्ख होती जा रही थी, उसमें आंसू डबडबा आये थे।

'क्या-क्या?' उसने हांफते हुए कहा।

'जरा जल्दी से डाक्टर को बुला लाओ।'

मेरे करीब आते हुए उसने मसखरेपन से अपने कानों पर हाथ फेरे जो यकायक सूजे हुए मालूम हो रहे थे और नीले पड़ गये थे। उसने दुख भरे स्वर में कुछ अजीब ढंग से गुर्राते हुए कहा:

'बदमाश कहीं के! मुझे मालूम है क्या मामला है?'

मालकिन भी सरकती हुई करीब आ गई और मैंने उसकी कंपकंपाती हुई, भर्राई आवाज पहली बार सुनी।

'पुलिस को बुलाओ! वासिया, जल्दी पुलिस को बुलाओ।'

उसके मुरझाये हुए चीथड़ों जैसे गाल लरज रहे थे मारे डर के उसका बड़ा-सा मुंह खुला-का-खुला रह गया था और असमान स्याह दांत दिखाई देने लगे थे। आका ने उसे बड़ी बेदर्दी से एक तरफ ढकेल दिया। दीवार पर लटके हुए कुछ कपड़े घसीटे और उसकी पोटली बगल में दबाकर दरवाजे की तरफ लपका।

लेकिन बाहर आंगन में पहुंचकर सुअरों के डरबे में झांककर और जानवरों की उखड़ी-उखड़ी सांसे सुनकर उसने संतोष के साथ कहा:

'तीन आदमियों को बाहर बुला लाओ।'

और जब शातुनोक, आर्तेम और भूतपूर्व सैनिक भटियारखाने से बाहर आ गये तो उसने हमारी तरफ देखे बगैर ही तड़खकर कहा:

'बाहर निकालो इन्हें।'

हम चार गंदी लाशों को उठाकर लाये उन्हें आंगन में डाल दिया। आसमान पर हल्की-सी रोशनी फैल गई थी। जमीन पर रखी हुई लालटेन आहिस्ता-आहिस्ता गिरते हुए बर्फ के गालों पर और सुअरों के भारी सिरों पर किरणें डाल रही थीं। सुअरों में से एक का दीदा आंख में से निकल पड़ा था जैसे कि कांटें में फंसी हुई मछली का दीदा।

अपने कन्धों पर लोमड़ी के समूर का कोट डाले और आखिरी सांसें लेते हुए जानवरों पर सिर झुकाए आका खामोश और अचल खड़ा था।

'जाओ, अपना काम करो! येगोर को यहां भेज दो।' उसने खोखली आवाज में कहा:

'बड़ा सदमा हुआ है उसे!' जब हम बरामदे में पड़े हुए बोरों के पास पहुंचे तो आर्तेम ने सरगोशी में कहा, 'ऐसा धक्का पहुंचा है उसे कि नाराज होना भी भूल गया।'

दालान में मैं सबसे पीछे रह गया। और दरारों में से झांककर सहन में देखा कि लालटेन

की रोशनी सुबह के अंधेरे से जूझ रही थी। उसकी रोशनी में चार सफेद बोरे मुश्किल से दिखाई दे रहे थे जो सीटी-की-सी आवाज और एक किस्म की चड़चड़ाहट के साथ कभी फूल जाते और फिर पिचक जाते थे। मालिक नंगे सिर उन पर झुका हुआ था। उसके बालों की लटें चेहरे पर बिखरी हुई थीं। इसी हालात में वह बहुत देर तक चुपचाप खड़ा रहा। समूर के कोट से ढंका हुआ उसका शरीर घण्टी की भांति दिखाई दे रहा था। फिर मैंने सूं-सूं की आवाज और इन्सानी खुसर-पुसर की आवाज़ सुनी।

'क्या हुआ मेरे प्यारो। दुख होता है? बेचारे ... त्च-त्च ...।'

ऐसा मालूम हुआ जैसे जानवर और ज्यादा जोर से सांस लेने लगे हों।

उसने अपना सर उठाया, चारों तरफ देखा और मुझे ऐसा दिखाई दिया कि उसके गाल आंसुओं से तर थे। अब उसने अपने दोनों हाथों से आंसू पोंछ डाले थे और एक रंजीदा बच्चे की तरह वहां से परे हट गया, खाली पीपे में से मुट्ठी भर घास निकाली, वापस गया और जमीन पर बैठकर सुअर की गन्दी थूथनी पोंछने लगा। फिर जैसे चौंककर घास फेंक दी, उठ खड़ा हुआ और आहिस्ता-आहिस्ता सुअरों के गिर्द घूमने लगा।

एक चक्कर लगाया, फिर दूसरा जरा तेज कदमों से, फिर तो एकदम उसने दौड़ लगाना शुरू कर दी। उछलता-कूदता, घूंसे तानकर और बेतहाशा तेज दौड़कर चक्कर लगाने लगा उसके कोट के दामन टांगों में फरफरा रहे थे वह उनमें उलझ गया और गिरते-गिरते बचा। और फिर मुण्डियां हिलाता, मुंह बिसूरता रुक गया। आखिरकार – यह भी अचानक हुआ जैसे कि उसकी टांगों में दम न रहा हो। कूल्हे टिकाकर वह जमीन पर बैठ गया और जैसे तातारी लोग प्रार्थना के बाद करते हैं उसने हथेलियों से अपना चेहरा मलना शुरू कर दिया।

'पुच-पुच ... मेरे नन्हें-मुन्ने जानवरों पुच-पुच।'

येगोर झूमता-झामता, मुंह में पाइप दबाए एक कोने के पीछे से प्रकट हुआ। पाइप की चिंगारी कभी-कभी उसके अंधेरे में छिपे हुए चेहरे को रोशन कर देती थी। जो ऐसा मालूम होता था जैसे किसी ने एक गठीले तख्ते को जल्दी-जल्दी तराशकर इन्सानी चेहरे की शक्ल दे दी हो। उसके सुर्ख कान को मोटी-सी लौ में बाली भी चमक उठती थी।

'येगोरी!' मालिक ने आहिस्ता से आवाज दी।

'हां।'

'जानवरों को उन्होंने जहर दे दिया है।'

'उसने?'

'नहीं।'

'तो फिर किसने?'

'याश्का और आर्त्युखोव ने। कुजिन ने मुझे बताया है।'

'तो क्या ठोकें उनको?'

उठकर खड़े होते हुए आका ने थकी हुई आवाज में कहा:

'नहीं, अभी ठहरो।'

'कितने नीच है ये सब।' येगोर गुर्राया।

'हांऽऽ.., नहीं। लेकिन मैं पूछता हूं जानवरों का क्या कसूर था, इसमें?'

येगोर ने जमीन पर थूका लेकिन थूक इत्तेफाक से उसके जूते पर जा गिरा। फिर उसने अपना पैर उठाया और अपने कोट के दामन से जूता पोंछ डाला।

सफेद, ठण्डा असमान छोटे से आंगन पर शामियाने की तरह झुका हुआ था। जाड़ों का उजाड़-उजाड़ दिन बड़ी अनिच्छा से निकल रहा था।

येगोर दम तोड़ते हुए जानवरों के पास गया।

'इन्हें मार डालना चाहिए।'

'किसलिए?' मालिक ने सिर को झटका देकर पूछा। 'जी लेने दो जब तक जीते हैं!'

'मैं तो इन्हें मारकर रहूंगा और फिर हम इन्हें भटियारे के हाथ बेच देंगे। इनका गोश्त तो नहीं बेचा जा सकता।'

'भटियारा इन्हें नहीं लेगा।' सेम्योनाव ने जमीन पर बैठ और एक सुअर की सूजी हुई गर्दन टटोलते हुए कहा।

'क्या बातें करते हो, लेगा क्यों नही? मैं कहूंगा कि तुम इनसे उकता गए थे इसलिए इन्हें जिबह करा दिया। मैं कहूंगा कि ये बिल्कुल तन्दुरुस्त थे।'

मालिक खामोश हो गया।

'अच्छा बोलो अब इनका क्या किया जाय?' येगोर ने जोर दिया।

'क्या?'

आका उठ खड़ा हुआ और एक बार फिर सुअरों के चारों तरफ आहिस्ता-आहिस्ता टहलने लगा और दबी आवाज में गुनगुनाने लगा:

'नन्हे-मुन्ने, मेरे प्यारे-प्यारे ...।'

वह रुक गया चारों तरफ देखा और अनायास बोल पड़ा:

'कर दो जिबह!'

हम जबरदस्त तूफान बरपा होने, नौकरियों से बरखास्त होने की आशा कर रहे थे। हमारा विचार था कि मालिक सजा के तौर पर एक और बोरा नानखताइयां बनवाने के लिए डलवा देगा। बंजारा बहुत दुखी नजर आ रहा था लेकिन वह बनने की कोशिश कर रहा था और कृत्रिम लापरवाही से जोर-जोर से कह रहा था –

'सेंको और जोश दो!'

कारखाने में घुटी-घुटी खामोशी छाई हुई थी। सब मजदूर मुझे प्रकोपपूर्ण दृष्टि से देख रहे थे और कुजिन बड़बड़ा रहा था:

'सजा सभी को मिलेगी – कसूरवार को भी और बेकसूर को भी ...।'

वातावरण और भी दूषित हो गया। बातों-बातों में झगड़े होने लगे। और जब हम खाना खाने बैठे तो सिपाही मिलोव जबड़े चीरकर मुस्कराने लगा और फिर मूर्खतापूर्ण ठहाका उसने लगाया और कुजिन की पेशानी पर अपने चमचे से टोंग मार दी।

बूढ़े ने कराहते हुए अपना सिर हाथों में दबा लिया। अपनी इकलौती आंख से आश्चर्यचकित होकर चारों तरफ देखने लगा और बिसूरते हुए बोला:

'भाइयो! यह क्यों?'

एक आम शोर व गुल बुलंद हो गया। बीच-बीच में गालियां सुनाई देती थी और तीन

आदमी मुक्का ताने सिपाही पर बरस पड़ने को पर तोलने लगे। और वह दीवार से टेक लगाये हंसी के साथ फुदकने लगा और बोला:

'यह मक्कारी की सजा है। येगोर ने मुझे सब बता दिया है ...। आका जानता है कि सुअरों को जहर किसने दिया है ...।'

पीला चेहरा और कुछ अजीब तनी हुई-सी हालत में बंजारा तंदूर के पास बैठा-बैठा एकदम कुजिन पर झपटा और उसकी गुद्दी दबोच ली।

'फिर? अबे इस तेरी जबान ने जो तेरी मरम्मत कराई है उससे पेट नहीं भरा क्या! नीच बदमाश कहीं के?'

'तुम कहोगे कि शायद सच नहीं है यह!' कुजिन ने अपने मुरझाये हुए छोटे से चेहरे को छिपाते हुए थरथराती हुई बूढ़ी आवाज में कहा, 'क्या तुमने शुरू नहीं किया था यह सब कुछ? क्या मैं सुन नहीं रहा था कि तुमने बड़बड़िये से यह काम कराने की कोशिश की थी?'

बन्जारे ने गुर्राते हुए अपना मुक्का ताना। लेकिन आर्तेम उसके कंधे पर लटक गया।

'मारो नहीं याश्का! छोड़ो, जाने भी दो।'

अब खींचातानी शुरू हो गई। याश्का, शातुनोव और आर्तेम की पकड़ से निकलने के लिए लातें चला रहा था, भन्ना रहा था। और 'आओ एक-एक करके लड़ लो! आओ हिम्मत हो तो!'

विकृत और जमा हुआ खून खराब खाने और दूषित वायु के कारण विषाक्त, संतोष तथा दैन्य से सहे हुए अत्याचार के विषय में बुझा हुआ रक्त आज इन लोगों के सिर पर चढ़ आया था; चेहरे सुर्ख हो गये थे; कानों में से ज्वालाएं निकल रही थीं, लाल-लाल आंखें अन्धे गुस्से में चमक रही थीं और कटकटाते हुए दांतों ने तमाम चेहरों को हवन्नक और विकृत कर दिया था।

आर्तेम दौड़ता हुआ आया और लेस्चोव के जंगलियों जैसे मुंह के सामने आकर चीखा:

'मालिक आ गया।'

हुल्लड़बाजी इस प्रकार समाप्त हो गई जिस प्रकार आंधी के सामने कूड़ा-करकट गायब हो जाता है। हर व्यक्ति अपनी जगह पर वापस आ गया। पलक झपकाते ही निस्तब्धता छा गई। केवल थकावट और क्रोध के कारण फूली हुई सांस की धोंकनियां सी चलती सुनाई दे रही थीं। और चमचे दबोचे हुए हाथ कंपकंपा रहे थे।

दो नानबाई बेकरी के दरवाजे की मेहराब के अंदर खड़े थे एक तो था चुस्त व चालाक याकोव विश्नेवस्की और हृष्ट-पुष्ट, दमे का रोगी वाश्किन जिसका चेहरा ईंट जैसा लाल था और आंखें उल्लू जैसी गोल। उसकी कुपित आंखें बड़ी भयंकर मालूम हो रही थीं।

'छोड़ दो मुझे! आज मैं इसे जान से मारकर ही दम लूंगा ...

सत्यवादी, नाटे कद के बूढ़े की मैली कमीज का गरेबान बन्जारे की मुट्ठी में था। उसके मुंह से झाग निकल रहे थे और वह हकला-हकलाकर कहे जा रहा था:

'अगर कोई बात न होगी तो मैं कुछ भी न कहूंगा। लेकिन अगर बदमाशियां होती रहीं तो मैं कहूंगा और जरूर कहूंगा। हां कहूंगा चाहे तुम मेरी तिक्का-बोटी ही क्यों न कर

डालो बदमाशों!'

यह कहकर वह अचानक याश्का पर धड़ाम से गिर पड़ा। उसके सर पर जोर का दुहत्तर मारकर उसे जमीन पर दे पटका। दो-तीन लातें रसीद कीं और युवकों की-सी आश्चर्यजनक फुर्ती से उसका बदन रौंदना शुरू कर दिया।

'तूने, तूने! हरामी पिल्ले तूने डाला था नमक ... तूने।'

आर्तेम ने एक छलांग लगाई और बूढ़े के सीने पर अपना सिर दे मारा। बूढ़ा एक चीख मारकर फर्श पर गिर पड़ा और वहीं पड़े-पड़े कराहता रहा।

झल्लाया हुआ याश्का मोटी-मोटी गालियां देता हुआ और सिसकियां भरता हुआ शेर की तरह उसपर झपटा और झट से उसकी कमीज फाड़कर उसे बेतहाशा मुक्के मारने शुरू कर दिये। और मैं उसे रोकने की कोशिश करता रहा। हमारे इर्द-गिर्द जन्नाटें के साथ लातें चल रहीं थीं धमाचौकड़ी हो रही थी और धूल व गर्द के बादल छा गये थे। जंगलियों की नाई दांत निकाले बन्जारा दीवानों की तरह चीख रहा था। बड़े जोर का मल्ल आरम्भ हो चुका था। खुद मेरे पीछे से मुक्कों के धमाकों और दांतों के कटकटाने की आवाजें आ रही थीं। घुंघराले बालों वाला एक भैंगा जिसका नाम लेचस्व था, मेरे कंधे हिलाकर ललकारा:

'क्यों, क्या दो-दो हाथ भी नहीं होंगे?' वाश्किन ने निराश व उदास स्वर में कहा। विश्नेवस्की ने अपने छोटे-से हाथ से जिस पर जले हुए के बहुत से निशान थे, अपनी बारीक मूंछों को मरोड़ते हुए बकरी की तरह मिमिया कर कहा:

'अबे गंवारों। आटे के कीड़ों। ...'

सभी का भरा हुआ गुस्सा उन पर उतरा। कारखाने के सब आदमी उन्हें बुरी तरह गालियां देने लगे। उन नानबाइयों से सभी को नफरत थी। उनका काम हमसे आसान था और तनख्वाहें ज्यादा। उन्होंने भी गालियों का जवाब गालियों से दिया। करीब था कि हाथापाई शुरू हो जाता कि अचानक रोता-बिसूरता हवन्नक याश्का मेज पर से उठा और डगमगाते हुए कदमों से जाने लगा। और फिर अपना सीना दबोचकर औंधे मुंह फर्श पर गिर पड़ा।

मैं उसे उठाकर डबलरोटी की बेकरी में ले गया जो अपेक्षाकृत अधिक साफ-सुथरा और हवादार थी। वहां ले जाकर मैंने उसे आटे के एक पुराने पीपे पर लिटा दिया। उसका चेहरा पीले हाथी दांत की तरह पीला पड़ गया था। और वह ऐसा निश्चल व निस्पन्द पड़ गया था जैसे मुर्दा। शोर-गुल आहिस्ता-आहिस्ता खत्म हो गया। किसी आने वाली मुसीबत का खतरा मंडराता हुआ सा नज़र आ रहा था। हर शख्स सहम गया था और दबी-दबी आवाज में कुजिन की निंदा कर रहा था:

'तेरा ही किया-धरा है यह सब। काणे शैतान।'

'बदमाश जेल की हवा खाने के काबिल है।'

बूढ़ा गुस्से में जवाब दे रहा था:

'सब बकवास है। इसे तो कोई दौरा-वौरा पड़ गया है।'

आर्तेम और मैं लड़के को होश में लाये। उसने अपनी चुस्त, मनोहर आंखों की लम्बी-लम्बी पलकें आहिस्ता से उठाई और बेजान आवाज में पूछा:

'क्या हम आन पहुंचे?'

'अबे आन कहां पहुंचे मरदूद।' उसके भाई ने चिंतित हो कहा।

'हर जगह अपनी टांग अड़ाता फिरता है। मैं भी अब तेरी खूब ही ठुकाई करूंगा। गिर क्यों पड़ा था बे?

'कहां पे?' उसने आश्चर्य से भवें सिकोड़ते हुए कहा। 'मैं क्या गिर पड़ा था? भूल गया हूंगा। ... मैंने एक सपना देखा था। हम एक नाव में थे – तुम और मैं। केकड़े पकड़ रहे थे। ... हम खाना भी ले गये थे और एक बोतल वोदका की भी ...।'

कुछ थकावट महसूस करते हुए उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं। फिर थोड़ी देर बाद मुरझाई हुई आवाज में आहिस्ता-आहिस्ता बड़बड़ाना शुरू कर दिया:

'अब मुझे याद आया। मेरे दिल में इस जोर का दर्द उठा कि मालूम होता था निकल पड़ेगा। कुजिन ने किया है यह। मुझे उससे नफरत है। मेरी सांस अच्छी तरह नहीं आ रही। गधा कहीं का। मैं जानता हूं उसे – अपनी पत्नी को मार-पीटकर मार डाला था उसने। अपनी बहू पर भी नियत बिगाड़ बैठा था। हम दोनों एक ही गांव के हैं इसलिए मुझे सब मालूम है। '

'अच्छा अब चुप तो रह।' आर्तेम ने डांट कर कहा: 'बस अब सो जा।'

'हमारे गांव का नाम योगिल्देयेवो था। बातें करने से मेरे दर्द होता है वरना मैं –'

वह ऐसे बोल रहा था जैसे कि अब नींद के गोते में आने ही वाला है और बीच-बीच में अपने सूखे, काले होठों को जीभ से तर करता जाता था।

बेकरी में से कोई दौड़ता हुआ और मारे खुशी के चीखता हुआ आया।

'अरे भाइयो! और उड़ाओ! मालिक अब फिर नशे में धुत्त है।'

पूरा कारखाना गगनभेदी कहकहों और सीटी की तेज आवाजों से गूंज उठा। हर शख्स एक-दूसरे को भलमनसाहत, खुशी और उत्साह भरी दृष्टि से देख रहा था। सुअरों के कारण मालिक के बदले के भय ने आग लगाई हुई थी और अब उसकी मदहोशी के दौरान में कम काम किया जा सकता था।

वानुक उलानोव जो लड़ाई-झगड़े के मौकों पर धूर्तता से गायब हो जाता था अब एक छलांग मारकर बीच कारखाने में आ कूदा और उसने नारा लगाया:

'आओ गाएं!'

बंजारे ने आंखें बन्द करके गला साफ करके बारीक और तेज आवाज में गाना शुरू कर दिया:

एक कच्ची दाढ़ी वाला नौजवां है आ रहा
वह रंगीला जोश-मस्ती में अकड़ता-झूमता।

बीस आदमियों ने मेज पर ताल दी और गाने में शामिल हो गये।

दाढ़ी देखो उसकी लहराती हुई

बंजा ने अगली पंक्ति गाई, पांव से ताल देता रहा और सबने मिलकर बेतुकी पंक्ति को इस प्रकार पूरा किया:

सांप की मानिन्द बलखाती हुई

चिकटे हुए फर्श पर कोई नर्म व नाजुक आकृति वाला ठुमकियां और मरोड़ियां देकर केंचुलीदार कीड़े की तरह बल खा रहा था और इस तरह धूल के बादल उड़ने लगे थे।

शाबाश नौजवान! डटे रहना!' एक जोरदार नारा बुलन्द हुआ और खुशी व शादमानी का यह तूफान अभी हाल के प्रकोप व गुस्से से कुछ कम हेय और दुखद न था।

रात को झुनझुने की हालत और भी खराब हो गई। बुखार तेज हो गया और सांस कुछ उखड़ी सी नजर आई। हिचकियां ले-लेकर गंदी और बदबूदार हवा सांस के साथ उसके फेफड़ों में जाती और सिकुड़े हुए होठों में से फौव्वारे की तरह निकलती। मानो वह मुंह से सीटी बजाने की कोशिश कर रहा हो। लेकिन पूरी ताकत लगाकर एक-दो घूंट लेकर ही बस कर देता। और अपनी धुंधली आंखों की मधुर मुस्कान के साथ धीरे से कहताः

'मेरा ही कसूर है! बस और नहीं पीना चाहता ...।'

मैंने उसके बदन पर वोद्का और सिरके की मालिश की और वह थोड़ी ही देर में बेखबर सो गया। उसके चेहरे पर आटे की गर्द जमी हुई थी और हलकी-सी मुस्कराहट खेलती हुई नजर आ रही थी। उस के घुंघराले बाल कनपटी पर चिपक गये थे और खुद वह ऐसा मालूम होता था कि पिघलकर पानी-पानी हो गया हो। गंदी, फटी-चिथड़ी कमीज आटे में बुरी तरह लिथड़ी हुई थी। इस कमीज के नीचे उसके सीने में सिर्फ हल्की-सी हरकत का संदेह होता था।

सबलोग मुझ पर गुर्रायेः

'अच्छा बस अपनी डाक्टरी रहने दो। इस तरह व्यर्थ समय गंवाना हमको भी आता है।'

मुझे बड़ा ही दुख हुआ। और इस बात का बड़ी तेजी से मुझे अहसास होने लगा कि मैं उन लोगों में बिना बुलाया अजनबी हूं। सिर्फ आर्तेम और याश्का ही शायद मेरे भावों को समझते थे। बंजारे याश्का ने खुशमिजाजी से कहाः

'हंसी-खुशी रहो! ओ नन्ही-मुन्नी छोकरी जरा आटा गूंध ले। देख तो तेरे प्रेमी कैसे-कैसे उपहार लिये तेरी प्रतीक्षा में खड़े हैं।'

आर्तेम भी मेरे साथ छेड़खानी करता रहा। उसने बड़ी कोशिश की कि वह मुझसे दिलचस्प मजाक करे लेकिन आज वह भी असफल रहा। और आखिरकार ठण्डी सांस लेकर दुख भरी आवाज में उसने मुझसे दोबारा पूछाः

'क्यों, क्या तुम्हारा ख्याल है कि याश्का को बहुत खतरनाक चोट आई है?'

शातुनोव ने हमेशा से ज्यादा गला फाड़कर अपना मनोनीत गीत गाना शुरू किया –

जरा झांकना तंग गलियों के अन्दर
जरा देखना आम रास्तों, पे जाकर

कि मेरे गम व ऐश हमराह लेकर
कहां खो गया आज मेरा मुकद्दर

रात को मैं झुनझुने के पास ही फर्श पर सोया। अभी मैं बोरियां बिछा ही रहा था कि वह उठ बैठा और चौंककर बोलाः

'कौन है यह? क्या तुम हो बड़बड़िये?'

उसने उठकर बैठने की कोशिश की; लेकिन बैठ न सका और फिर लेट गया। उसका सिर स्याह चीथड़ों के तकिये पर बेजान होकर गिर पड़ा।

सब सो रहे थे। गहरे सांस लेने की सरसराहट हो रही थी और बलगम की खांसी घुटी हुई बदबूदार हवा में थरथराहट पैदा कर रही थी। खिड़की के मैले और धुंधले शीशों में से गहरी नीली रात के तारे सर्द आंखों से घूर रहे थे। तारे इतने छोटे और इतने दूर दिखाई दे रहे थे कि दिल पर उदासी छाई जाती थी। बेकरी के एक कोने में दीवार पर लगी हुई तेल की डिबिया जल रही थी। और उसकी मद्धम रोशनी में ताक में रखे हुए रोटी के सांचे धुंधले-धुंधले दिखाई दे रहे थे डबलरोटियों से गंजी खोपड़ियों का शक होता था। आटे के एक बड़े तसले पर गूंगा निकान्दर सिकुड़ा-सिकुड़ा गेंद बना पड़ा था और नानबाई की पीली नंगी टांग जिस पर कई घाव थे उस मेज के नीचे से झांक रही थी जिस पर डबलरोटियां तोली और बण्डलों में बांधी जाती थीं।

याश्का ने आहिस्ता से आवाज दीः

'बड़बड़िये!'

'क्या?'

'मुझे बड़ी तकलीफ हो रही है ...।'

'अच्छा आओ हम बात करें। मुझे कोई किस्सा सुनाओ ...'

'क्या कित्था थुनाऊं? किथी देवता ता कित्था थुनाऊं?'

'चलो देव का ही सही ...।'

थोड़ी देर तक वह खामोश रहा । फिर डिब्बे पर से कूदकर नीचे लेट गया। झुलसता हुआ सिर मेरे सीने पर रख लिया और आहिस्ता-आहिस्ता तल्लीनता की स्थिति में कहना शुरू कियाः

'मेरे पिता के जेल जाने थे पहले की बात है। गर्मियों का मौसम था और मैं बिलकुल छोटा-सा था। मैं बाहर थो रहा था थूथे की गाड़ी में। बड़ा मजा आ रहा था। एकदम मेरी आंख खुल गई। दरवाजे के थामने वष कूद रहा था – बहुत छोटा था था मुट्ठी थे भी बड़ा नहीं था। दत्थाने की तरह उथ पर बाल ही बाल थे। भूरे और हरे। आंखें भी उथके नहीं थीं। मैं चिल्लाने लगा। मां ने मुझे जगा दिया। मुझे चिल्लाना नहीं चाहिए था, उथको डराना नहीं चाहिए नहीं तो वह नाराज हो जाता है और फिर चला जाता है और लौटकर नहीं आता यह बड़ी बुरी बात है। जिथ घर में देव नहीं होता उथ घर में भगवान की दया नहीं उतरतीं तुम्हें मालूम है देव कौन होता है?'

'नहीं! कौन होता है?'

'वे देवताओं के द्वारा भगवान को थूचना भेजते हैं। देवता आथमान से उतरते है और

थुना है कि वे हम लोगों की जबान नहीं थमथझे, नहीं तो वे अपवित्र हो जाते हैं। और आदमियों को भी देवताओं की बात नहीं थुननी चाहिए ...।'

'क्यों नहीं सुननी चाहिए?'

'इथलिए नहीं थुननी चाहिए कि मेरे ख्याल में तो यह शर्म की बात है। देखते नहीं इथ जबान ने लोगों को भगवान की ओर से कितना विमुख कर दिया है?'

उसे जोश आ गया और उठकर बैठ गया। और वह जल्दी-जल्दी बोलने लगा बिल्कुल जिस तरह तन्दुरुस्ती की हालत में बोला करता था।

हर आदमी परमात्मा थे थीधा जाकर कह देता है कि उथे क्या चाहिए लेकिन नहीं बीच में देव है – तभी वह लोगों थे नाराज हो शायद लोग उथे खुश नहीं करते और देवताओं थे झूठी बातें कह देगा। थमझे कुछ? अब वे उससे पूछते हैं यह किथान कैथा है? और वह चूंकि नाराज होता है इथलिए कहता है वह तो खराब आदमी है और फिर मैं तुमथे शर्त लगाता हूं कि उथ आदमी के घर में मुथीबतों का पहाड़ टूट पड़ेगा। लोग चीखतें चिल्लाते हैं – हे परमात्मा हम पर दया कर – और लोगों को मालूम नहीं होता कि उनकी शिकायत कर दी गई है। वह उनकी बात नहीं थुनता और वह भी इनथे नाराज हो जाता है।'

लड़के के चेहरे पर दुख के बादल छा गये थे और वह गम्भीर हो गया था। उसने अपनी आंखें घुमाई और छत को घूरने लगा जो जाड़ों के आकाश की तरह सफेद थी! और गीले धब्बे बादलों जैसे दिखाई दे रहे थे।

'तुम्हारे पिता की मृत्यु कैसे हुई?'

'वह अपनी ताकत की बड़ी डींगें हाका करते थे। यह उथ जमाने की बात है जब वह जेल में थे उन्होंने कहा कि मैं पांच आदमियों को हरा थकता हूं। उनथे कहा कि वे एक दूथरे की कमर में हाथ डाल लें और फिर उन्होंने उन्हें उठाना शुरू किया और उनका दिल फट पड़ा। खून निकलता रहा और वह मर गये।

झुनझुने ने एक ठण्डी सांस भरी और दोबारा मेरे पास लेट गया। उसने अपने तमतमाते हुए कल्ले मेरे हाथों पर रगड़े और अपना किस्सा फिर शुरू कर दिया।

'वह बड़े पहलवान थे। मन भर का वजन उठाकर वह बगैर दम लिए बारह बार अपने ऊपर क्रास का निशान बना लेते थे। मगर उन्हें काम ही नहीं मिलता था और जमीन भी बड़ी थोड़ी थी, बहुत ही थोड़ी – मालूम नहीं कितनी थी। पेट भरने को कुछ भी नहीं था, बिल्कुल कुछ भी नहीं। भीख मांगो जाकर और बथ। मैं छोटा था लेकिन मुझे भी ततारियों थे भीख मांगने जाना पड़ता था। हमारे गांव में सब तातारी हैं, पर है, अच्छे तातारी। एथ जो हमेशा कहते हैं, लो भई! ये लो जाओ। थब एथ ही हैं। अच्छा तो हमारे पिताजी ने घोड़े चुराना शुरू कर दिये। उन्हें हम पर बड़ा तरस आता था।'

उसकी बारीक आवाज थर्रा गई थी और धीरे-धीरे थकी-सी होती जा रही थी। लड़का बूढ़े आदमी की नाई खांसकर और ठण्डी सांस भरके बोला:

'जब वह घोड़ा चुरा लाते तो फिर थब ठीक हो जाता। हमारे पाथ खाने को होता और हम थब बहुत खुश होते। मां तो रो-रोकर आंथें धुजा लेती थी ... लेकिन ऐसे मौकों पर

वह भी शराब पीती और गीत गाती। बड़ी अच्छी थी, थबको प्यार करती थी ... पिताजी के मरने पर रो-रोकर कहती थी, 'हाय मेरे प्यारे, मेरी आत्मा!' गांव वाले मेरे पिताजी को लाठियों से मारा करते थे। लेकिन वह किसी की परवाह नहीं करते थे। आर्तेम को फौज में भरती होना था। हम थोचते थे कि वह बूढ़ी औरत मालूम होता था। तंदूर के कोने के पीछे एक हाथ मे वोदका की बोतल दूसरे में आंजूरा लिये वह कुछ चोरों की तरह छिपा खड़ा था। उसके हाथ कंपकंपाते मालूम हो रहे थे –। शीशे टकराने और कलकल की आवाज़ आ रही थी जैसे कोई शराब निकाल रहा हो।

'यहां आओ!' उसने मुझे आवाज दी और जब मैं करीब पहुंच गया तो एक झटके के साथ शराब का गिलास बढ़ाया और कुछ छलका भी दी; 'लो पियो!'

'मैं तो नहीं पीना चाहता!'

'नहीं क्यों?'

'यह कोई वक्त नहीं है।'

'अगर कोई शराब पीता है तो पीने के लिए हर वक्त ठीक है। पियो!'

'मैं शराब पीता नहीं!'

उसने अपना भारी सिर हिलाया।

मुझसे तो किसी ने कहा कि तुम पीते हो!'

'एकाध गिलास वह भी उस समय जबकि मैं थक जाता हूं।'

उसने दाहिनी आंख से गिलास को घूरा और एक गहरी ठण्डी सांस भरकर वोदका तंदूर के मुंह में फेंक दी। फिर तंदूर पर चढ़ गया और उसके मुंह में पांव लटकाकर बैठ गया।

'बैठ जाओ। मैं तुमसे कुछ बातें करना चाहता हूं।'

अंधेरे में मुझे उसका थाली सा चेहरा तो नज़र नहीं आ रहा था लेकिन आवाज सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। इसलिए कि वह कुछ विलक्षण रूप से अनजानी-सी प्रतीत हो रही थी। मैं उसके समीप बैठ गया। उसमें मुझे बड़ा आनन्द आ रहा था। अपना सिर झुकाए वह गिलास पर अपनी उंगलियां बजा रहा था और हल्की-सी टनटन की आवाज आ रही थी।

'हूं, तो कुछ सुनाओ ...।'

'याश्का को अस्पताल पहुंचाना बहुत जरूरी है ...।'

'क्यों, क्या बात है?'

'बीमार है न वह! कुजिन ने उसे बुरी तरह पीटा है।'

'कुजिन बड़ा नीच है, बदमाश है। तुम लोगों की चुगलियां खाता है। क्या तुम सोचते हो कि मैं इस कारण उसके साथ कोई पक्षपात करता हूं? उसको कोई इनाम देता हूं? उसके मूर्खों के से थोबड़े पर तो मैं मुट्ठी भर धूल भी न फेंकूं। पैसे देने की तो अलग रही।'

वह मरी हुई आवाज़ में बोल रहा था लेकिन बातें साफ सुनाई दे रही थीं और हालांकि उसका एक-एक शब्द वोदका में बसा हुआ था लेकिन वह नशे में धुत्त नहीं था।

'मुझे सब कुछ मालूम है। तुम सुअरों को मार डालना क्यों नहीं चाहते थे? सच बताना मैंने तुम्हारे साथ ज़्यादती की है, है ना? और मेरे साथ तुमने भी अन्याय किया है, क्यों?'

मैंने सब कुछ बता दिया।

'हां।' उसने कुछ रुककर कहा, 'तो मैं सुअर से भी बदतर हूं, क्यों? मुझे भी जहर दे देना चाहिये, है ना?'

उसकी आवाज़ ऐसे आई जैसे कि वह मुस्करा रहा हो। और मैंने दुबारा कहा:

'तो फिर क्या मैं याश्का को अस्पताल ले जाऊं?'

'तुम चाहे उसे बूचड़खाने में ले जाओ, मेरी बला से। मुझसे उसका वास्ता क्या?'

'तुम्हारे खर्चे पर?'

'हरगिज नहीं।' उसने लापरवाही से कहा। 'ऐसा पहले कभी नहीं हुआ। फिर तो सभी अस्पताल में जाकर पड़े रहना चाहेंगे ...। मैं कहता हूं तूमने मेरे कान क्यों अमेठे थे उस दिन?'

'मुझे क्रोध आ गया था।'

'यह तो मैं भी समझता हूं। लेकिन मेरे सवाल को मतलब यह नहीं था। अरे तुमने मेरे कान पर मुक्का मार दिया होता या गले पर घूंसा, पर तुमने मेरे कान क्यों खींचे? क्या मैं बच्चा हूं?'

'मैं लोगों को मारना पसन्द नहीं करता।'

बड़ी देर तक वह शान्त बैठा रहा। उस समय ऐसा मालूम होता था जैसे कि नींद का झोंका आ गया हो। फिर उसने दृढ़ता से और स्पष्ट स्वर में कहा:

'तुम भी अजीब आदमी हो! बाकी सब नौकरों की-सी कोई भी बात तुममे नहीं है। तुम्हारी खोपड़ी भी किसी और ही ढंग की है।'

उसने यह बात मुझे भड़काने के लिए नहीं कही लेकिन उससे उसकी खिन्नता अवश्य प्रकट होती थी।

'अच्छा अब बताओ कि क्या मैं वास्तव में बुरा आदमी हूं?'

'और आप क्या समझ रहे थे?'

'मैं? तुम झूठे हो, मैं अच्छा आदमी हूं। अरे भाई मेरे, मैं बहुत चालाक आदमी हूं। अच्छा देखो, तुम पढ़े-लिखे हो, बातें करने की तुम्हें ईश्वरदत्त प्रतिभा है। कोई बात हो तुम बराबर बोले जाओगे। तारों की बात हो, चाहे फ्रांसीसियों की, या भद्रलोक की – मैं मानता हूं; यह सब बड़ी अच्छी, दिलचस्प और मजेदार बातें हैं। मैंने तुम्हें एक ही नजर में भांप लिया था! याद है उस दिन जब तुम मुझसे पहली बार मिले थे और कहा था कि मुझे सर्दी लग जायेगी और मैं मर जाऊंगा। आदमी का मूल्य मैं बड़ी जल्दी ताड़ लिया करता हूं।'

उसने भद्दी और मोटी उंगलियों से अपना माथा ठोका, एक ठण्डी सांस भरी और समझाने लगा:

'अरे मेरे भाई, मेरी स्मरण शक्ति बड़ी तेज है ...। अरे भाई मुझे तो यहां तक याद है कि मेरे दादा की दाढ़ी में कितने बाल थे। शर्त लगा लो चाहे, क्यों?'

'शर्त काहे की?'

'इस बात की कि मैं तुमसे ज्यादा चुस्त व चालाक हूं। जरा सोचो तो मैं अनपढ़ आदमी हूं, मुझे क ख भी नहीं आता सिर्फ गिनती जानता हूं। लेकिन फिर भी मैं इतना बड़ा कारोबार संभाले बैठा हूं। तैतालीस आदमी नौकर हैं, एक दुकान के और तीन हैं शाखाएं। तुम एक पढ़े-लिखे आदमी मेरे यहां नौकर हो। अगर मैं चाहूं तो सचमुच एक अच्छे-खासे विद्यार्थी को नौकर रखकर तुम्हें लात मारकर निकाल बाहर कर सकता हूं। मैं अगर चाहूं तो हरेक को लात मारकर निकालकर शराब पर अपना सारा धन लुटा सकता हूं क्यों ठीक कहता हूं ना मैं?'

'मेरी तो समझ में आता नहीं, इसके लिए दिमाग की क्या ज़रूरत है?'

'सब बकवास! दिमाग क्या चीज होती है? अगर मेरे पास नहीं है तो फिर किसी के पास भी नहीं है। तुम समझते हो कि दिमाग वाला होने के लिए बातूनी होना जरूरी है। नहीं मियां यह कारोबार की बात है। यहीं आपको मिलेगा दिमाग।'

उसने एक हल्का सा लेकिन विजयपूर्ण कहकहा लगाया जिसके साथ उसके बोझिल शरीर का लटका हुआ मांस थलथल फुदकने लगा। फिर उसने मैत्रीपूर्ण ढंग से और भारी स्वर में बात जारी रखते हुए कहा:

'तुम एक आदमी का पेट नहीं पाल सकते थे और में चालीस को खिला रहा हूं। अगर चाहूं तो सौ को खिला सकता हूं। दिमाग की बातें करने चले हो।'

जैसे-जैसे वह बोलता गया उसका स्वर कठोर और उपदेशात्मक होता गया और जबान लड़खड़ाने लगी।

'मुझे क्या पाठ पढ़ाने चले हो तुम? सब बकवास है! बहरहाल उसमें फायदा ही क्या? न ही कुछ तुम्हारा भला होता है। खूब कोशिश करो ताकि मैं भी तुम्हें इसका मजा चखा सकूं। ...

'चखा तो चुके हो।'

'अच्छा वास्तव में?'

उस पर उसने क्षण दो क्षण गौर किया और मेरा कन्धा थपथपाते हुए इकरार किया:

'हां ठीक है। बस अब जरूरत इस बात की है कि मैं तुम्हें एक मौका दूं। ... हालांकि मैं सब कुछ देखता हूं। सब कुछ जानता हूं ... यह मेरा गारास्का चोर है लेकिन यह भी है बड़ा चालाक और यदि पकड़ा न जाय और जेल न चला जाय तो वह भी मालिक बन सकता है। अपने नौकरों की खाल खिंचवाकर भूसा भरवा देगा वह। यहां सबके सब चोर हैं जानवर से भी बदतर। पक्के बदमाश! और तुम उनके साथ भलाई करने की कोशिश कर रहे हो। मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता। यह तुम्हारी घोर मूर्खता है।'

नींद मुझ पर सावार हो चुकी थी। दिन भर की मेहनत से मेरा जिस्म थककर चूर हो गया था और थकावट से सिर चकरा रहा था।

आका की उकता देने वाली चपचपी आवाज विचारों को चिपकाये दे रही थी:

'मालिकों के बारे में तुम बड़ी भयानक बातें कहते हो। यह सब तुम्हारी मूर्खता है, तुम्हारी तरुणाई ही इसका कारण है। मेरी जगह यदि कोई और व्यक्ति होता तो फौरन पुलिस वाले को बुलाता, एक रूबल उसके हाथ में थमाता और तुम्हें सीधा थाने भिजवा देता।'

उसने अपना भारी और नर्म हाथ मेरे घुटने पर मारा:

'चालाक आदमी को मालिक बनने की फिक्र करनी चाहिए। इधर-उधर टक्करें मारने से क्या लाभ? लोग तो इतने असंख्य हैं जैसे मेंढक। मालिक बहुत थोड़े हैं। यही मुश्किल है। ... यह सब असमान और गलत है अगर तुम आंख खोलकर देखो तो तुम्हें बहुत कुछ नजर आयेगा। फिर तुम्हारा दिल मजबूत हो जायेगा और तुम समझ जाओगे कि खुद ये लोग ही खराब हैं यानी वे लोग जो नौकरी करते हैं। तमाम फालतू आदमियों को काम पर लगाना चाहिए ताकि वे बेकार मारे-मारे न फिरें। एक पेड़ को बेकार पड़ा सड़ते रहने देना लज्जास्पद है, उसको जला डालो गर्मी तो देगा। यही बात इन्सान के साथ है, समझे कि नहीं।'

याश्का के कराहने की आवाज आई और मैं उसे देखने के लिए उठ खड़ा हुआ। वह चित्त लेटा हुआ था – भवें तनी हुईं और मुंह खुला हुआ था। दोनों हाथ सीधे और जिस्म के साथ चिपके हुए थे। उस लड़के में कुछ फौजियों जैसी चुस्ती पाई जाती थी।

निकान्दर आटे के कढ़ाव पर से नीचे कूदा और तंदूर की ओर लपका ही था कि रास्ते में मालिक से टकरा गया और कोई एक मिनट तक हक्का-बक्का खड़ा रहा। फिर बड़ा-सा मुंह फाड़कर अपनी मछलियों जैसी आंखें अपराधी की नाईं झपकाईं और अपनी फुर्तीली उंगलियों से हवा में कुछ पेचीदा आकृतियां बनाते हुए भुनभुनाया:

'मू-ऊ-ऊ-ऊ!'

आका ने उसे चिढ़ाया और यह कहते हुए उठकर चला गया, 'गूंगा पत्थर!' ...

जब वह दरवाजे के पीछे गायब हो गया तो बहरे गूंगे ने मेरी तरफ देखकर आंख मारी और अपना हलक दो उंगलियों से दबाकर संकेत किया, 'कोख-कोख! ...'

अगले दिन सुबह याश्का और मैं अस्पताल गये। हमारे पास सवारी के लिए पैसे नहीं थे और लड़का बड़ी कठिनाई से चल रहा था। क्षीण स्वर में खांस-खांसकर बातें करते हुए अपनी तीव्र वेदना का मर्द की भांति सामना कर रहा था।

'थांथ ही नहीं ली जाती। फेफड़े बेकार हो गये हैं ... बदमाश।'

बाजार में चिलचिलाती हुई, चांदी की तरह चमकती हुई धूप में और गर्म कपड़ों में अच्छी तरह लिपटे-लिपटाये राहगीरों के दरम्यान वे अपने काले चीथड़े पहने असलियत से ज़्यादा छोटा और सूखा नजर आ रहा था। उसकी आसमानी नीली आंखें कारखाने के अंधेरे की आदी थीं और इसलिए उनमें पानी डबडबा आया था।

'और मैं मर गया तो आर्तेम तो कुत्ते की मौत मरेगा, शराब बुरी तरह पीने लगेगा। उल्लू! और अपनी तो वह जरा भी देखभाल नहीं करता। बड़बड़िये, तुम उथकी डांट-डपट करते रहना, कहना मैंने कह दिया था।'

उसके सूखे, काले, छोटे-छोटे से होंठ बेचैनी के दर्द के कारण भिंच गये।

उसकी बच्चों जैसी ठोढ़ी थरथराई। मैं उसको बगल में दबोचे हुए था और मुझे डर था कि कहीं वह रोना न शुरू कर दे और मैं राहगीरों को मारना और खिड़कियों के शीशे न तोड़ना शुरू कर दूं और फिर अच्छा-खासा तमाशा बन जाये।

'झुनझुना' रुक गया। एक लम्बी-सी सांस ली और बड़े-बूढ़ों की तरह रोबदार आवाज़ में बोला:

'बस उससे इतना ही कह देना कि मैंने उसे हुक्म दिया है कि वह तुम्हारा हुक्म माने ...!'

कारखाने में वापस आकर मुझे एक और दुर्घटना का पता चला। सुबह जब निकान्दर बिस्किट लेकर दूसरी दुकान में देने को ले जा रहा था तो वह फायर ब्रिगेड के घोड़ों की सीमा में आ गया और वह भी अस्पताल पहुंच गया।

'अब, शातुनोव ने अपनी छोटी-छोटी चुंधी आंखों से मुझे देखते हुए बड़े विश्वास के साथ कहा, तुम देख लेना कोई-न-कोई मुसीबत आयेगी। जब कोई दुर्घटना घटती है तो उसके बाद दो और आवश्यक होती है – हमेशा तीन हुआ करते हैं। हजरत ईसा से लेकर सेंट निकोलस और सेंट जार्ज तक। फिर पुनीत माता उनसे कहेंगी: 'बस काफी है बच्चो!' और फिर वे सत्पथ पर आ जायेंगे।'

निकान्दर का कोई जिक्र न हुआ। वह उनके लिए अजनबी था हमारे कारखाने का आदमी न था। लेकिन फायर ब्रिगेड के घोड़ों की रफ्तार, ताकत और सहिष्णुता के बारे में बड़ी-बड़ी बातें होती रहीं।

अभी हम खाना खा ही रहे थे कि गारास्का आया। वह एक चुस्त व चालाक, खूबसूरत लड़का था। आखें उसकी व्यभिचारियों और चोरों जैसी निडर थीं मानों कह रही हों – डरता कौन है – उसने बड़ी गम्भीरता से घोषणा की कि मुझे निकान्दर की जगह देकर छोटा नानबाई बनाया गया है और मेरी तनख्वाह छः रूबल मासिक हो गई।

'बधाई!' याश्का ख़ुशी से उछल पड़ा। फिर फौरन ही भवें सिकोड़कर पूछा:

'यह किसकी आज्ञा है?'

'मालिक की!'

'लेकिन वह तो नशे में धुत्त है ना!'

'बिल्कुल भी नहीं!' गारास्का ने चहककर कहा। 'मरने वालों की स्मृति में कल ज़रूर एक दौर चला था। लेकिन आज होश व हवास बिल्कुल दुरुस्त है बल्कि इससे भी ज्यादा और आज आटा खरीदने गया है ...।'

'तो अभी सुअरों वाला मामला खतम नहीं हुआ?' बन्जारे ने दबी आवाज में झुंझलाकर कहा।

सब लोग मुझे मुंह फुलाये देख रहे थे और जलन के मारे बुरे-बुरे ताने दे रहे थे कठोर तथा असह्य अपशब्दों से कारखाना गूंज रहा था।

'हाथ मार रहा है खूब ...।'

'निराला पंछी सदा निराला होता है ...।'

शातुनोव अपनी विशिष्ट भाषा में चबाचबाकर कह रहा था:

'कांटों की अपनी जगह होती है, फूलों की अपनी!'

और कुजिन ने अपने विचार उन्हीं शब्दों से छिपाये जिन्हें वह अपनी दुर्भावनायें छिपाने के लिए सदैव इस्तेमाल करता था।

'अरे शैतानो! कितनी बार तुमसे कहूं कि मूर्ति को जरा साफ कर दिया करो।'

केवल आर्तेम ने बुलन्द आवाज में कहा:

'हो गई शुरू – वही काट-छांट, थोलियां ठिठोलियां!'

डबलरोटी की बेकरी में काम करने के बाद पहली ही रात को जब मैं एक बारी का आटा गूंधकर और दूसरी बार का भिगोकर किताब लिये हुए चिराग के पास बैठा था कि आका आ गया। नींद के मारे आखें बोझिल थीं और वह उन्हें जल्दी-जल्दी झपकाकर अपने होंठ झपकाये जा रहा था।

'पढ़ रहे हो, यह बड़ी अच्छी बात है। पढ़कर सो रहने से बेहतर है। ज्यादा देर तक आटा पड़ा रहने का खतरा ही नहीं।'

बातें वह धीरे-धीरे कर रहा था। फिर बड़ी सावधानी से मेज के नीचे नजर दौड़ाकर जहां नानबाइ पड़ा खर्राटे ले रहा था वह मेरे करीब आटे के एक बोरे पर बैठ गया। किताब मेरे हाथ से लेकर बन्द कर दी और अपने मोटे से घुटने पर रखकर उस पर अपनी हथेली जमा दी।

'क्या किताब है यह?'

'रूसी जनता के बारे में है।'

'कौन-सी जनता?'

'रूसी जनता कहा ना!'

उसने कनखियों से मुझे देखा और समझाते हुए बोला:

हम काजान के लोग भी रूसी हैं – तातारियों के अलावा सिंबर्स्क के लोग भी रूसी हैं। किसके सम्बन्ध में लिखा है?'

'इसमें हरेक के बारे में लिखा है ...'

उसने पुस्तक खोली। पुस्तक वाले हाथ को फैलाकर पुस्तक को जांचते हुए सिर हिलाया और अपनी मंजरी आंख से पृष्ठों को आंका और निर्णय सुना दिया:

'पता चल गया, तुम इस किताब को समझ नहीं सकते।'

'यह कैसे जान गये तुम?'

'बात बिल्कुल साफ है, चित्र कहां है? एक भी तो नहीं है। तुम्हें तो ऐसी किताबें पढ़नी चाहिए जिनमें तस्वीरें हों। शर्तिया कहता हूं उसमें ज्यादा मजा आता है। जनता के बारे में क्या कहती है यह किताब?'

'इसमें उनकी श्रद्धा, उनके रस्म व रिवाज और उनके गीतों के बारें में बातें लिखी हैं।' मालिक ने किताब बन्द कर दी और अपनी टांग के नीचे सरका दी। और एक लम्बी-सी जम्हाई ली उसका मुंह यद्यपि भाड़-सा खुला हुआ था लेकिन उसने उस पर क्रास का चिन्ह न बनाया।

'ये तो आम बातें हैं जो सब जानते हैं।' उसने कहा, 'लोग भगवान पर आस्था रखते

हैं उनके यहां अच्छे गाने भी हैं ओर बुरे गाने भी। और उनके रीति-रिवाज सब सड़े-सड़े। उन सबके बारे में तुम मुझसे पूछ लो। रीति-रिवाज तो मैं तुम्हें इतनी अच्छी तरह समझा दूं कि क्या कोई किताब बतायेगी। उनके बारे में किताबें पढ़कर तुम्हें जानने की जरूरत नहीं। सड़क पर निकल जाओ, बाज़ार में चले जाओ, शराबखाने में जा बैठो या त्यौहार के दिन गांव चले जाओ। वहां तुम्हें सब रिवाजों का पता चला जायेगा। या जी चाहे तो किसी अदालत में चले जाओ। छोटे-मोटे अपराधों की अदालत में भी ...।'

'तुम तो बुरी बातों को जिक्र कर रहे हो।'

उसने घूरकर गुस्से से मुझे देखा और कहा:

'हां-हां मुझे मालूम है मैं क्या कह रहा हूं। रह गई ये किताबें तो यक सब मनगढ़न्त किस्से कहानियां हैं, बिल्कुल मूर्खतापूर्ण! तुम क्या मुझे यह समझा रहे हो कि एक किताब में पूरी कौम का हाल लिखा जा सकता है।'

'एक से ज्यादा किताबें हैं।'

'तो क्या हुआ, कौमें और जातियां भी तो हजारों-लाखों हैं। इनमें से हरेक के बारे में एक-एक किताब तो लिखने से रहा कोई!'

उसके स्वर में तुर्शी थी और उसकी आंखों के ऊपर के पीले रोयें गुस्से के मारे खड़े हो गये। यह बातचीत मुझे भयानक सपना-सा मालूम हो रही थी और मैं उससे उकता गया था।

'तुम भी अजीब आदमी हो, बिल्कुल औंधी खोपडी के।' उसने एक लम्बी-सी सांस लेकर खरखराते हुए कहा, 'तुम्हारी समझ में नहीं आता कि यह सब व्यर्थ की बकवास है। किताबें किसके बारे में हैं? लोगों के बारे में। लेकिन कौन लोग हैं जो अपने सम्बन्ध में सच-सच बातें बता देंगे? तुम बता दोगे? मैं तो हरगिज न बताऊं। अगर तुम मेरी ज़िन्दा खाल उड़वा दो तब भी न बताऊं। मैं तो शायद भगवान के सामने भी कुछ न बोलूं। वह कहेगा – हां तो वासिली अपने पापों की सूची तो पेश करो!' – और मैं जवाब दूंगा – 'हे परमपिता परमेश्वर वह तो तू मुझसे अधिक जानता है। यह आत्मा तो तेरी ही है मेरी नहीं।'

उसने मुझे कुहनी मारी और हंसकर आंख मारते हुए पहले से नीची आवाज़ में कहता गया:

'हां मैं तो यह भी कह सकता हूं – किसकी है यह आत्मा? उसकी है। उसने मुझसे ले ली, और बस अब उसका जिक्र क्या!'

उसने एक हाय की और दोनों हाथ मुंह पर इस प्रकार फेरे जैसे मुंह धो रहा हो फिर उसी उत्साह व उमंग से अपनी बातें जारी रखीं:

'बोलो, क्या उसी ने नहीं दी थी मुझे आत्मा? निश्चय ही उसने दी है। और बाद में क्या उसी ने फिर वापस नहीं ले ली? निश्चय ही उसी ने ली बस तो फिर हिसाब बेबाक और हम बरी।'

मेरा सर चकराने लगा। लैम्प हमारी पुश्त पर और हमसे ऊपर दीवार पर लटका हुआ था और हमारी परछाइयां सामने हमारे कदमों पर पड़ रही थीं। कभी-कभी आका अपने

सिर को झटका देता और जर्द रोशनी उसके चेहरे पर चमकने लगती। नाक दिखाई देती जिसे विभिन्न परछाइयों ने असलियत से ज्यादा लम्बा कर दिया था। और आंखों के नीचे स्याह हल्के नजर आते और उसके मोटे चेहरे के उतराव-चढ़ाव और भयानक मालूम होने लगते। हमारे दाहिनी ओर दीवार में एक खिड़की थी जो हमारे सिरों के बराबर ऊंचाई पर थी। खिड़की के धूल-धूसरित शीशों में से मुझे नीले आकाश और मटर के छोटे-छोटे दानों की तरह जर्द सितारों के एक झुमके के अलावा और कुछ नजर नहीं आ रहा था। आलसी, सुस्त नानबाई खर्राटे ले रहा था। झींगूर झनझना रहे थे और चूहे कहीं कोई चीज खुरच रहे थे।

'लेकिन क्या तुम्हें भगवान पर विश्वास नहीं है?' मैंने अपने मालिक से पूछा उसने अपनी मुर्दा आंख तिरछी करके मुझे देखा और काफी देर तक कुछ जवाब न दिया।

'यह तुम मुझसे नहीं पूछ सकते। तुम्हें मजाल नहीं है कि अपने काम की बात के अलावा और कुछ बात मुझसे पूछो। जो कुछ मेरा दिल चाहेगा मैं तुमसे पूछूंगा। और तुम्हें जवाब देना पड़ेगा। आखिर तुम चाहते क्या हो?'

'यह मेरा अपना मामला है।'

वह सोच में पड़ गया और मुंह भींचे नाक से धीरे-धीरे सांस लेता रहा।

'यह क्या जवाब हुआ? बदतमीज! शैतान! ...'

उसने अपने नीचे से किताब निकाली और अपने घुटनों पर थपथपाकर फर्श पर फेंक दी।

'कहानी! कौन जान सकता है मेरी कहानी। और तुम्हारी – तुम्हारी कोई कहानी ही नहीं है और न होगी कभी।'

वह एकदम हंस पड़ा – एक बेपरवाह हंसी। इस अजीब सुबकी-सी हल्की और मरी हुई आवाज से। मेरे दिल में मुर्झाहट और मालिक के लिए सहानुभूति का भाव पैदा होता था। और वह अपने बेडौल जिस्म को लिये झूम-झूमकर व्यंग्यपूर्ण और तीखे स्वर में कहता रहा:

'मैं यह सब कुछ जानता हूं। तुम जैसे मैंने बहुतेरे देखे हैं। मेरी एक रखैल है जो मेरी एक दुकान में सौदा बेचती है। उसका एक भतीजा है जो ढोरों की डाक्टरी पढ़ता है; घोड़ों और गायों का इलाज करना सीख रहा है। अब वह पक्का शराबी है और शराबी बनाया है मैंने। गाल्किन है उसका नाम, कभी-कभी आता है मेरे पास शराब के लिए दस कोपेक लेने। बिल्कुल फक्कड़ है। उसने यह जानने की कोशिश की थी कि दुनिया के कारोबार कैसे चलते हैं, वह भी बकवास किया करता था। लोगों में कहीं-न-कहीं सच्चाई जरूर होगी। मेरे दिल की गहराइयों में यथार्थ की खोज की धुन समाई हुई है तो फिर दिल की उन गहराइयों के बाहर भी कहीं सच्चाई मौजूद है। और मैं उसे शराब पिला-पिलाकर नशे में धुत्त करता रहा। कमबख्त पक्का शराबी बन गया; दीदे निकाल-निकालकर मुझे घूरा करता। आंखें उसकी कोमल रमणी की-सी थी, पर यह नहीं कहूंगा कि उसमें मक्कारी थी, वह अपने आपे ही में न रहता था। कहा करता: 'वासिली सेम्यानोव तुम कुहरा हो। जिन्दगी में तुम एक भयानक मनुष्य हो।'

तंदूर गर्म करने का समय हो गया था। मैं उठ खड़ा हुआ और मैंने मालिक को यह बात बताई तो वह भी खड़ा हो गया। नांद खोलकर आटे को थपका और बोला: 'अच्छा तो यह बात है। ...'

वह टहलता हुआ मेरी ओर देखे बिना ही वहां से चला गया। मैंने संतोष की सांस ली कि उसकी चिकनी-चुपड़ी और शेखी भरी आवाज रुक गई थी और बेहूदा बातचीत का तूफान बेकरी से बाहर चला गया था।

बिस्किटों की बेकरी में नंगे पांव चलने की आहट हुई और घुप्प अंधेरे में आर्तेम मुझसे टकरा गया। उसके बाल बिखरे हुए और उदास आंखें फटी-फटी थीं जैसे कोई नींद में चलने के रोग का शिकार हो।

'अच्छा तो इस प्रकार तुम्हें काबू में, किया जा रहा है।

'हाय, तुम सोए नहीं?'

'मालूम नहीं, दिल में कुछ दर्द-सा हो रहा है। ही...ही... तो इस तरह वह ...।'

'उसकी भी बड़ी मुश्किल हैं'

'हां, शायद! बेकार आदमी है और सौदेबाजी में नीचता करता है ...।'

अब लड़के ने तंदूर के सहारे खड़े होते हुए परिवर्तित स्वर में जैसे यों ही सरसरी तौर से कहा:

'मेरे भाई बेचारे को इन लोगों ने अधमुआ कर डाला है। क्या ख्याल है तुम्हारा? जिन्दा निकल आयेगा वह अस्पताल से?'

'क्या बात कही? हे भगवान दया कर! ...'

वह एक झटके के साथ तंदूर से अलग होकर खड़ा हुआ और उदास स्वर में यह कहता हुआ बिस्किट की बेकरी में चला गया:

'भगवान से हमें कुछ नहीं मिलेगा। ...'

मालिक से रात की ये दो बातें एक निरन्तर और भयानक सपने की तरह जारी रहीं। हर रात पिछले पहर जब मुर्गे अजान दे रहे होते तो जहन्नुम में शैतान उछल-कूद करते होते। और मैं आग सुलगाने के बाद किताब हाथ में लिये पढ़ने को बैठता होता तो वह बेकरी में कहीं से आ टपकता।

गोल-मटोल और आलसी की नाईं वह अपने कमरे से लुढ़कता हुआ निकलता और एक हाय के साथ तंदूर के किनारे बैठ जाता। और तंदूर के अन्दर आकर उसकी टांगें इस तरह लटक रही होतीं जैसे कि कब्र में। अपना छोटा-सा पंजा फैलाकर लपटों के सामने करके अपनी मंजरी आंख चुंधी करके देखता और पीली खाल में से झलकते हुए सुर्ख खून को देखकर आप ही सराहता और फिर दो घण्टे तक अजीब और उकता देने वाली बातचीत जारी रहती।

साधारणतया बातचीत की शुरुआत अपनी बुद्धिमता की डींगों से और अनपढ़ गंवार की शक्ति से करता जिसने एक बड़ा कारोबार खड़ा कर लिया जिसे वह मूर्खों और चोरों को काबू में करके उनकी मदद से चला रहा है। इस विषय पर वह बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें करता रहता लेकिन एक प्रकार की ऊब के साथ। बीच-बीच में एक लम्बे अवकाश के बाद और बार-बार सर्द आहें इस तरह भर कर मानों सीटियां बज रही हों। कभी-कभी ऐसा मालूम होता था जैसे वह अपनी व्यवसायिक सफलताएं गिनाते-गिनाते थक गया हो। और अपने ऊपर बड़ा जब्र करके उनका जिक्र कर रहा हो।

उसकी वास्तव में अनुपम प्रतिभा पर अचरज करते-करते मैं काफी समय हुआ थक चुका था, सड़े-बूसे और सीले हुए आटे का भाव-ताव करके सस्ते दामों खरीद लेने, फफूंदे हुए खराब बिस्किट मनों की मात्रा में गांव के व्यापारियों के हाथ बेच देने में उसे कमाल हासिल था। धोखे भरा साम्य और लज्जास्पद सादगी के साथ सौदागरी की ये शोब्दाबाजियां विफल होकर रह गई थीं और उन्होंने मनुष्य के लोभ व मूर्खता को बड़ी निर्दयता से नग्न कर दिया था।

तंदूर में जलती हुई लकड़ियों में से लपटें निकल रही थीं। मैं और मेरा मालिक तंदूर के आगे बैठे थे। उसकी तोंद की मोटी-मोटी शिकनें उसके घुटनों तक लटकी हुई थी। भड़कती हुई आग की लाली उसके अंधियारे चेहरे पर कौंदे की तरह लपक रही थी। घोड़े के जुए को धातु की तरह उसकी फुल्ली, पथराई हुई और डबडबाई हुई आंख, किसी बूढ़े फूस फकीर की आंखों के तुल्य थी। और मंजरी बिल्ली के दीदों की नाईं चमकती हुई आंख बड़ी तेजी के साथ झलक रही थी और उसमें एक विचित्र प्रकार के जीवन की झलक आती थी। उसकी अजीब आवाज कभी स्त्री की आवाज की तरह तेज और महीन हो जाती और कभी भारी चीख बनकर निकलती – संतोषपूर्ण और ग्लानिपूर्ण शब्द निकाल रही थी।

'तुम दूसरों पर हद से ज्यादा भरोसा करते हो और बहुत सी-ऐसी बातें कह जाते हो जो तुम्हें नहीं कहनी चाहिए। लोग दगाबाज होते हैं, उन्हें बड़ी सावधानी और खामोशी के साथ सम्हालना चाहिए आदमी को शेर की निगाह से देखो और एक शब्द न कहो। अपनी जबान बिल्कुल बन्द रखो। जरूरत ही नहीं कि वह तुम्हारी बात समझे। जरूरत इस बात की है कि वह तुमसे डरे और यही अन्दाज लगाते रहे कि तुम्हारा मकसद क्या है!'

'मेरा तो यह इरादा बिल्कुल भी नहीं है कि मैं लोगों को संभालूं।'

'झूठ! इसके बिना तुम्हारा गुजारा ही नहीं हो सकता!

उसने मुझे समझाना शुरू किया: 'कुछ लोग ऐसे होते हैं जिन्हें काम करना पड़ता है और बाकी ऐसे जो इन्तजाम करते हैं और अफसरों को इस बात की निगरानी करनी पड़ती है कि काम करने वाले व्यवस्थापकों की आज्ञा का बिना चूं-चरा के पालन करें।'

'जिनकी ज़रूरत न हो उन्हें लात मारकर निकाल बाहर करो। ऐरे-गैरे का क्या काम?'

'और वे जायें कहां?'

'मेरी बला से कहीं जायें। आवारा मर्द और चोरों के लिए – तमाम निकम्मे लोगों के

लिए ही तो अफसर-हाकिम हैं। जो आदमी किसी काबिल होता है उसे अफसरों की ज़रूरत ही नहीं होती; वह खुद अपना हाकिम होता है। अब गवर्नर-जनरल से तो यह आशा नहीं की जा सकती कि उसे यह मालूम हो कि मेरे लिए कौन-सा आटा अच्छा है और कौन-सा नहीं। उसका काम तो यह जानना है कि कौन-सा आदमी काम का है और कौन-सा बेकार।'

कभी-कभी मुझे ऐसा लगता कि उसकी आवाज में भावुक उत्साह है। शायद यह किसी और ही चीज़ की लगन थी, किसी ऐसी वस्तु की अभिलाषा जिसे वह स्वयं भी नही जानता था। और मैं उसकी बातचीत पूरी एकाग्रता के साथ और बड़ी उत्सुकता से सुनता ताकि उसका मतलब समझ में आ जाये। और नये-नये शब्द सुनने की मैं सदैव प्रतिक्षा करता रहता।

तन्दूर के नीचे से चूहों, जली हुई चटाई और धूल आदि की दुर्गन्ध आ रही थी। चीकट दीवारों में से गर्म और सीले हुए भभके निकल रहे थे। फर्श बहुत ही गन्दा और पुराना हो चुका था। खिड़की में से छन-छनकर आने वाली चांदनी ने फर्श की काली दरारों को और भी अधिक स्पष्ट बना दिया था। खिड़की के शीशों पर जगह-जगह मक्खियों के गुच्छे चिपके हुए थे। मालूम होता था कि मक्खियों ने खुद आकाश को भी दागदार बना दिया है। यह जगह बड़ी घुटी हुई, गुंजान और इतनी गन्दी थी कि उसका साफ करना असम्भव था।

क्या एक आदमी का इस प्रकार जीवन व्यतीत करना शोभनीय है?

मेरा मालिक एक-एक शब्द आहिस्ता-आहिस्ता टटोलकर बोल रहा था। इस तरह बोलते हुए देखकर सहसा उस अन्धे फकीर की आकृति आंखों में फिर छा जाती थी जो अंधेरे में अपनी कंपकंपाती हुई उंगलियों से अपने कासे में पैसा-धेला टटोल रहा हो।

'विज्ञान – अच्छा भई मान लिया ठीक है! तो फिर कोई वैज्ञानिक मुझे आकर बताये कि मिट्टी या कीचड़ से आटा कैसे बनता है। और हां, देखो तो सामने एक भव्य इमारत है – विश्वविद्यालय कहते हैं उसे। वहां के छात्र युवा और दिल्लगीबाज हैं; शराबखानों में मारे-मारे फिरते हैं। पी-पीकर मदमस्त हो जाते हैं और बाजारों में ऊधम मचाते फिरते हैं। सेंट वेर्लाम के बारे में अश्लील व गंदे गाने गाते हैं, पेस्की बाजार में वेश्याओं के यहां जाते हैं और आम तौर पर उनकी जिन्दगी पावन पादरियों की-सी होती है। ...'

और फिर उसके बाद अचानक कोई डाक्टर बन जाता है तो कोई जज, कोई शिक्षक बन जाता है तो कोई वकील। क्या तुम मुझसे आशा करते हो कि उन पर विश्वास करूं? क्यों वह तो शायद मुझसे भी ज्यादा बेईमान है। मुझे तो किसी पर भरोसा नहीं। ...'

और भ्रष्टाचारियों की तरह होठों पर जबान फेरते हुए उसने अत्यन्त भोंड़े तथा ग्लानिपूर्ण विवरण के साथ बताना शुरू किया कि विद्यार्थी लड़कियों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करते हैं।

स्त्रियों के सम्बन्ध में वह बड़ी देर तक बात करता रहा। उसका ढंग बड़ा अरोचक एवं रूखा था। एक विलक्षण एकाग्रचित्तता के साथ वह बोल रहा था और उसकी आवाज शनैः-शनैः धीमी होते-होते मात्र खुसर-पुसर में परिणित हो गई थी। औरतों की शक्ल

व सूरत का वह कभी जिक्र नहीं करता था बल्कि उनकी छातियों, जांघों और टांगों का विस्तार से वर्णन करता था। उसके ये किस्से मुझे बड़े असह्य मालूम होते थे।

'तुम जब देखो अन्त:करण की और खरेपन की बातें करते रहते हो मैं तुमसे ज्यादा खरा आदमी हूं; तुम उद्दण्ड तो ज़रूर हो। लेकिन खरे या स्पष्टवादी नहीं, जर्रा भर भी नहीं। मुझे तुम्हारी दो-एक हरकतें मालूम हैं। अभी थोड़े ही दिन हुए तुमने शराबखाने में एक अखबार के प्रतिनिधि से कहा था कि मेरे यहां आटे की नांदों में सड़ांध है, आटे का खमीर उठता है तो सारा फर्श पर बह निकलता है। झींगरों की भरमार है और कारीगरों को आतशक है, हर जगह गंदगी है।'

'तुमसे भी तो कहा था यह सब कुछ मैंने।'

'हूं, कहा तो था। लेकिन यह तो नहीं कहा था कि तुम यह सूचना अखबारों को देना चाहते हो? अच्छा अखबारों में ये सब बातें प्रकाशित हुईं, पुलिस आई, सफाई के महकमे वाले भी आये। मैंने पांच-पांच के बीस नोट उनमें बांट दिये। और देख लो, क्या बिगाड़ लिया किसी ने मेरा?' उसने अपना हाथ चक्र की तरह अपने सीने पर फिराया और बोला: 'देखा तुमने! जो पहले था सो अब भी है – झींगर सब मौजूद हैं, मजे से उछलते-कूदते फिरते हैं। धरे रह गये तुम्हारे अखबार, तुम्हारा विज्ञान, तुम्हारा अन्त:करण! अरे बौड़म, तेरी समझ में यह नहीं आता कि उल्टा तुझ पर ही वार हो जाता। आस-पास की सारी पुलिस मेरी जेब में है। सब अफसर मेरे इशारों पर नाचते हैं, तुम्हारी एक नहीं चलेगी। और तुम इसके खिलाफ डटकर खड़ा होना चाहते हो जैसे कोई झींगर कुत्ते के मुकाबले में आ खड़ा हो, हुंह! तुमसे बातें करने से तो मुझे मतली आने लगती है।'

वास्तव में ऐसा प्रतीत होता था कि उसको मतली हो रही हो, उसका मुंह उतर जाता, मारे थकावट के उसकी आंखें बन्द हो जातीं और वह एक हल्की-सी आवाज के साथ जम्हाई लेता। उसके खुले हुए सुर्ख जबड़ों में कुत्ते जैसी पतली-सी जबान दिखाई देने लगती।

उससे मुलाकात होने से पहले मैं इन्सानी गंदगी, निर्दयता और मूर्खता बहुत कुछ देख चुका था। और भलाई तथा वास्तविक मनुष्यता से भी कुछ कम मेरा वास्ता न पड़ा था। मैं कुछ अत्यन्त सुन्दर पुस्तकें पढ़ चुका था और मैं जानता था कि मुद्दतों से और हर जगह लोग एक विभिन्न प्रकार के जीवन के स्वप्न देख रहे हैं और यह भी कि कुछ जगहों पर उन्होंने अपने स्वप्नों को व्यवहारिक रूप देने के लिए कोशिशें भी की थीं। और अब भी वे उनकी पूर्ति के लिए सचेष्ट थे। और वर्तमान परिस्थिति से असन्तोष के मेरे दूध के दांत अर्सा हुआ टूट चुके थे और अपने उस मालिक से मुलाकात होने से पहले तक मुझे विश्वास था कि मेरे ये दांत काफी मजबूत हैं।

अब ऐसी हर बातचीत के बाद मुझे पहले से ज्यादा अच्छी तरह और अफसोस के साथ अनुभव होता कि मेरे विचार और स्वप्न कितने क्षीण और क्रमहीन हैं। मेरा मालिक उन्हें किस तरह तार-तार कर रहा था, उनके अंधकारमय पहलू मुझे दिखा रहा था और मेरा दिल दुखते संदेहों से डूबने लगा था। मैं जानता था, मुझे अनुभव था कि मेरी हर आस्था का संतोष के साथ विरोध करना उसकी गलती थी और मैंने एक क्षण के लिए भी अपने

सिद्धांतों की सत्यता पर शक नहीं किया। लेकिन इस सच्चाई पर वह जो कीचड़ उछालता था उससे उसे बचाना मेरे लिए कठिन था। अब प्रश्न यह नहीं था कि मैं उसे झुठलाऊं बल्कि अब समस्या थी अपनी अन्दरूनी दुनिया की सुरक्षा की जिस पर मालिक के नकचढ़ेपन के सामने मेरी अपनी अयोग्यता की घातक भावना आक्रमण कर रही थी।

उसके भद्दे और भारी मस्तिष्क ने पूरी जिन्दगी को इस तरह टुकड़े-टुकड़े कर दिया था जैसे कोई किसी जिस्म को कुल्हाड़ी से काट डाले और उन टुकड़ों का एक ढेर-सा उसने मेरे सामने लगा दिया था।

आत्मा और परमात्मा के बारे में उसकी बातों ने मेरी तरुण उत्सुकता को जगा दिया था। मेरी हमेशा यही कोशिश होती थी कि बातचीत का रुख इन समस्याओं की ओर मोड़ दूं। शायद मेरी इन कोशिशों को महसूस न करते हुए मेरा मालिक यह साबित करने लगता कि जिन्दगी के रहस्यों और घातों से मैं कितना अनभिज्ञ हूं।'

'ज़िन्दगी पार करना बड़ी सावधानी का काम है। जिन्दगी इन्सान से हर चीज की मांग करती है – यों समझो जैसे कोई रखैल, लेकिन उससे तुम कुछ अधिक मांगते हो? नहीं सिर्फ एक चीज – मजा! मक्कारी और चालाकी भी जीवन के लिए अत्यावश्यक है। खुशामद-दरामद से काम निकल सके तो निकाल लो अगर यह न कर सको तो झपट लो, या लेकर डण्डा मारो – तड़ाख! और फिर जिन्दगी तुम्हारी लौंडी है।'

'यदि उसकी बातों पर झल्लाकर मैं सीधे प्रश्न करने लगता तो वह उत्तर देता:

'इससे तुम्हारा कोई वास्ता नहीं। मैं भगवान में विश्वास रखता हूं या नहीं इसका उत्तरदायी मैं हूंगा, तुम नहीं!'

और जब मैं अपनी मनोनीत समस्याओं पर बातचीत शुरू कर देता तो वह अपना सिर इस तरह हिला ता मानों कोई सुभीताजनक स्थिति ज्ञात करना चाहता हो। अपना छोटा-सा कान मेरे मुंह की ओर झुका देता और बड़े सन्तोष व धैर्य के साथ बैठा सुनता रहता। इस स्थिति में हमेशा ही उसकी पकौड़ा-सी नाक वाले चपटे चेहरे पर उदासीनता के भाव उभर आते। उस चेहरे को देखकर तांबे का वैसा ही ढंकना अनायास स्मरण हो आता जिसके बीच में एक मुठिया लगी हो।

वेदना का एक कटु भाव मेरे हृदय में जम गया था, उसका कारण मेरा व्यक्तित्व न था। घृणा करते-करते अब मैं थक चुका था और ज़िन्दगी की ठोकरें काफी खामोशी के साथ सहन कर लेता और उन्हें हेय समझकर उनके सामने हट जाता था। बल्कि इस अनुभव का आधार वह सत्यता थी जो मेरी आत्मा में घुस आई थी। और वही विकसित हो रही थी।

जब मनुष्य अपनी प्रिय और जीवन की महत्वपूर्ण तथा प्राप्य वस्तु की उसके लिए शोभनीय सुरक्षा करने का अपने को अपात्र समझता हो तो उसका अनुभव अत्यन्त दुखदाई और उसकी वेदना व कसक नितांत तीव्र हो जाती है। मनुष्य के लिए उसके दिल की बेजबानी से ज्यादा तेज और कोई चीज नहीं होती।

चूंकि हमारा मालिक रात को आकर मुझसे बातचीत किया करता था इसलिए कारीगरों की निगाहों में मुझे एक विशेष महत्व मिल गया था। बाज लोग जो मुझे खतरनाक आदमी समझते थे और बाकी जो एक विचित्र व्यक्ति तथा सनकी समझा करते थे अब उन्होंने अपनी राय बदल दी थी। अधिकतर कारीगर मेरे सौभाग्य पर मुझसें अपनी नफरत व जलन छिपाने की असफल चेष्टा करते और मुझे एक अत्यन्त धूर्त व्यक्ति समझते थे जो अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए कोई बड़ी गहरी चाल चल रहा हो।

कुजिन ने अपनी मैली, धूल भरी छोटी-सी दाढ़ी पर हाथ फेरते और अपनी चंचल आंख को कहीं एक कोने में छिपाते हुए आदर के साथ कहा:

'अच्छा भाई, अब तो तुम बहुत जल्दी क्लर्क बना दिये जाओगे और अब आश्चर्य की कोई बात भी क्या है इसमें? ...'

किसी ने धीरे से उसका साथ दिया:

'हमें डराने-धमकाने के लिए ...।'

मेरी पीठ पीछे और भी कई कटु वाक्य सुनाई दिये:

'जिसके मुंह में जबान हो वह तो कवि क्या कहीं और जाने का रास्ता भी तलाश कर सकता है।'

'घूस खिलाओ इसे।'

और बहुत-से तो अब मेरी आंख के इशारे की प्रतीक्षा करते कि फौरन ही एक अनिच्छा भरी आज्ञाकारिता से आज्ञा का पालन करें।

आर्तेम, याश्का और उनके अलावा दो-एक और कारीगरों ने जिनसे मेरी मित्रता हो गई थी अब अपने इन सम्बन्धों से मेरी बातों पर अतिश्योक्तिपूर्ण गौर करना भी शामिल कर लिया था। एक दिन मेरा संतोष समाप्त हो गया और मैंने नाराज होकर बंजारे से कहा कि मैं इस हरकत को बिल्कुल अनावश्यक और बहुत दोषपूर्ण समझता हूं।

'अच्छा बस रहने दो, मेरी बात मानो!' उसने मेरा मतलब समझते हुए कहा और शरारत में अपनी आंखें चढ़ा लीं। 'अगर हमारा मालिक जो हम सबसे ज्यादा चालाक है तुमसे अपने मामलों पर बहस करता है तो मेरा विचार है कि तुम्हारे पास भी बड़े-बड़े गुर हैं।'

दूसरी ओर शातुनोव, जो सदैव खिंचा-खिंचा और खामोश रहता था, अब मेरे बहुत निकट आ गया और दिन-प्रतिदिन अधिक विश्वास करने लगा था। जब कभी हमारा आमना-सामना हो जाता तो उसकी उदास और रहस्यमयी आंखें चमक उठतीं और उसके मोटे-मोटे होंठ आहिस्ता-आहिस्ता फैलकर मुस्कराने लगते और उसके कठोर, पथरीले चेहरे में परिवर्तन झलक उठता।

'क्यों, अब तो आराम से हो?'

'आराम से तो नहीं, हां सफाई से ...।'

'सफाई अगर है तो उसका अर्थ है आराम!' वह उपदेशकों की तरह कहता, फिर एक कोने की तरफ निगाहें फेरकर जैसे बिना किसी इरादे के पूछता:

'सादरसन माम् क्या है, जानते हो?'

ऐसे ही शब्दों का उसके पास भण्डार था। और जब वह अपनी भारी व भयानक आवाज में उनका उच्चारण करता तो बड़ा ही विचित्र सा लगता। और उनमें एक प्रकार की प्राचीन, कल्पित कथा का आभास होने लगता था।

'ये शब्द तुम कहां से सीख लेते हो?' मैंने एक बार चकित हो पूछ ही लिया। मेरी उत्सुकता चरम सीमा को पहुंच चुकी थी। उसने भी जरा सम्हल कर प्रश्न किया:

'तुम्हें आखिर यह जानने की लालसा क्यों है?'

फिर दुबारा मानो मुझे गच्चा देने की चेष्टा करते हुए वह अचानक एक सवाल और कर बैठा:

'हर्ना का क्या अर्थ है?'

कभी-कभी किसी दिन शाम को काम के बाद या किसी छुट्टी के दिन नहाने-धोने से निपटकर बंजारा और आर्तेम मेरे पास आ धमकते और उनके पीछे ही पीछे ओसिप शातुनोव भी आ घुसता। हम एक अंधियारे कोने में तंदूर के मुंह के इर्द-गिर्द बैठ जाया करते। मैंने यह कोना झाड़-पोंछकर और धो-धुलाकर साफ व आरामदेह कर लिया था। दाहिनी बाजू और पीठ के पीछे बड़े-बडे ताक थे। उनमें डबलरोटियों के सांचे रखे थे, जिनमें खमीरी आटा फूलकर उभरा हुआ था। उन्हें देखकर यह गुमान होता था कि जैसे गंजे सिर छिपे हुए हों और दीवारों से झांककर हमें देख रहे हों। टीन की एक बड़ी चायदानी में से गहरे रंग की चाय निकाल-निकालकर हम लोग पीने लगते। याश्का सलाह देता:

'अच्छा तो अब हमें कुछ सुनाओ, या ऐसा करो दो-चार कविताएं ही सुना दो!'

स्टोव के ऊपर रखे हुए मेरे सन्दूक में मेरे पास पुश्किन श्चरबिना और सुरिकोव की कविताओं के संग्रह थे – भद्दे और छोटे-छोटें खण्ड जो मैंने 'पुरानी किताबें बेचने वालों की दुकान से खरीदे थे। मैं बड़े जोशीले ढंग से गुनगुनाकर पढ़ने लगता:

किस कदर ऊंचे हैं ऐ इन्सान तेरे सारे काम
तूने दुनिया को दिया है एक जैसा ही निजाम
कितने दिलकश, वैसे हैरतखंज, कितने शानदार
पड़ रही हैं खुद खुदा के नूर की जैसे फुहार
तू ही देता है हमें सच्ची मुहब्बत बेहिसाब
और सबको अपने-अपने काम का सच्चा जवाब

याश्का ने आहिस्ता-आहिस्ता आंखें झपकाते हुए इधर-उधर से किताब को झांककर देखा और आश्चर्यचकित होकर बड़बड़ाया:

'वाह, क्या खूब! बिल्कुल बाइबिल की तरह! अरे, गिरजे में यही गीत गाया जा सकता है तो भगवान मेरी सहायता कर ...।'

कविता लगभग सर्वदा ही उसके भावों में उत्तेजना-सी उत्पन्न कर देती थी और उस पर एक पश्चाताप की स्थिति छा जाया करती थी। कभी-कभी जो पद उसे बहुत अधिक प्रभावित करते उन्हें वह हाथ हिला-हिलाकर अपने घुंघराले बालों को मुट्ठी में भींचकर और बड़ी निर्भीकता से गालियां देकर, जमा-जमाकर दोहराता:

'वाह, वाह क्या खूब कहा है!'

जब लिखी है मेरी किस्मत पर सदा यह मुफलिसी
सारी उम्मीदें भुला दे अब तो अच्छा है यही

'अरे वाह! क्या कहा है! भगवान की कसम कभी-कभी तो भाई अपनी जिन्दगी पर ऐसा ही दुख होता है। बरबाद हो जाती है, व्यर्थ नष्ट हो जाती है। ऐसी कसक होती कि दिल को मसोस कर रख देती है – ऐसी कि नरक से भी बदतर। कोई करे तो क्या करे? डाकू बन जाय? एक छोटे-से पत्थर से तो चिड़िया भी नहीं मारी जा सकती और तुम हो कि हमसे कहते रहते हो – लड़को, मिलजुलजकर रहा करो! दोस्तो की तरह रहो! हे भगवान!'

आर्तेम कविता सुनते समय ऐसी आवाजें निकालता जैसे कोई चीज निगल रहा हो। होठों पर इस तरह जीभ फेरता मानो कोई गरम-गरम स्वादिष्ट चीज खा रहा हो।

प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन पर वह सर्वदा चकित होकर रहा जाता था।

सिरों पर सुनहरे दरख्त जगमगाये
दरख्त झील पर हैं खड़े सर झुकाये

'ठहरो! उसने विस्मित होकर और खुशी में उछलकर कहा। और जब उसने मेरा कंधा पकड़कर मुट्ठी में भींचा तो उसका चेहरा मारे खुशी के दमक रहा था, मैंने भी देखा है! आर्स्क के समीप! वहां के एक सामन्त के इलाके में! हे भगवान मेरी मदद कर!'

'अच्छा तो इससे क्या हुआ?' याश्का ने झल्लाकर पूछा।

'लेकिन तुम समझते क्यों नहीं? मैंने यह हाथ देखा है और इसी पर वह पद भी लिखा हुआ है।'

'बीच में मत बोलो! बेकार बकवास लगा रखी है।'

एक बार आर्तेम सुरिकोव की कविता 'गांव में' से बड़ा प्रभावित हुआ। और कोई तीन-चार दिन तक वह उस कविता को एक पुराने सैनिक गीत की लय पर गाता फिरा यहां तक कि लोग सुनते-सुनते उकता गये:

जैसे-तैसे यों ही जारी है सफर
जा रहा हूं मैं खुदा जाने किधर
है किसे परवाह कुछ ही क्यों नहीं
घूमता फिरता रहूं चाहे जिधर
जानता हूं इस सफर का खात्मा
मुझको पहुंचा देगा आखिर अपने घर

शातुनोव पदों व कविताओं से जरा भी प्रभावित न होता था और वह कविताएं बिल्कुल उदासीनता से सुनता रहता था। पर कभी-कभी वह एक शब्द को ही पकड़कर बैठ जाता और उसके अर्थ को समझवाये बिना पीछा न छोड़ता था।

'एक मिनट! एक मिनट ठहरो! वह क्या है – कब्र?'

शब्दों के पीछे उसकी इस भाग-दौड़ से मैं बड़ा अचम्भित था और मुझे इसका पता लगाने की उत्सुकता हुई कि आखिर वह मालूम क्या करना चाहता है।

एक बार सवालों व आग्रहों की बौछार समाप्त होने के बाद ओसिप ने कुछ बड़प्पन-भरी मुस्कान के साथ यह रहस्य भी खोल ही दिया:।

'क्यों, तुम भी कारण जानने के लिए उद्विग्न हो?'

फिर रहस्यमय ढंग से चारों ओर देखते हुए उसने आहिस्ता-आहिस्ता खुसर-पुसर के स्वर में कहा।

'दरअसल एक ऐसा रहस्यमय पद है कि जिस किसी को भी मालूम हो जाय वह जो चाहे सो कर सकता है! लेकिन कहते हैं कि अब तक पूरा पद किसी को मालूम नहीं। इस पद के सारे शब्द विभिन्न लोगों में बांट दिये गये हैं और ये लोग सारी दुनिया में फैले हुए है। और उस समय तक फैले रहेंगे जब तक कि नियत घड़ी न आ पहुंचे। अच्छा – तो भाई इन तमाम शब्दों को एकत्र करना है और जोड़कर पूरा पद बनाना है।'

उसकी आवाज और भी धीमी हो गई और वह बिल्कुल ही मेरे ऊपर झुक गया।

'अरे इस पद को हर तरफ से पढ़ा जा सकता है, चाहे आदि से पढ़ो चाहे अन्त से अर्थ एक ही निकलता है। मेरे पास कुछ शब्द तो एकत्र हो चुके हैं। अस्पताल में एक खानाबदोश ने मरने से पहले मुझे बताये थे। समझे भाई, तो ये खानाबदोश दुनिया भर में मारे-मारे फिरते हैं और जहां कहीं भी इन्हें ये गुप्त शब्द मिलते हैं, वे याद कर लेते हैं। जब वे सब शब्द याद कर लेंगे तो फिर सभी को इसकी खबर हो जायेगी ...।'

'वह कैसे?'

उसने अविश्वास से मुझे सिर से पांव तक गौर से देखा और कुछ नाराजगी के स्वर में कहा:

'कैसे, कैसे! तुम खुद भी तो जानते हो ...।'

'भई धर्म-ईमान से कहता हूं मुझे कुछ भी तो नहीं मालूम ...।'

'अच्छा, अच्छा।' वह जाने के लिए मुड़ते हुए गुर्राया, 'बस बनो नहीं ...!'

और एक रोज सुबह आर्तेम दौड़ा-दौड़ा मेरे पास आया। वह बड़ा ही खुश था, उसकी सांस फूली हुई थी। हांफते हुए बोला:

'बड़बड़िये मैंने भी अपने आप एक पद रचा है, सचमुच रचा है!'

'अच्छा?'

'मैं झूठ बोलू तो जो चोर की सजा हो मेरी। शायद मैंने सपने में देखा हो क्योंकि मैं सोकर उठा और लो पद तैयार। मेरे दिमाग में किसी पवित्र चक्कर की तरह लगा रहा है चक्कर। लो सुनो ...।'

खूब तनकर खड़े होकर उसने बड़े जोरदार अन्दाज में लेकिन आहिस्ता-आहिस्ता गुनगुनाते हुए पढ़ना शुरू किया:

हो रहा है गर्क दरिया में रंगी आफताब
जंगलों में डूबने वाला है अब उसका शबाब
और गड़रिया अपने गल्ले को संभाले चल पड़ा
और ... वह ... गांव

'क्यों यह कविता कैसी रही?'

उसने बेचारगी से छत की ओर देखा, उसका चेहरा पीला हो गया था। होंठ चबा-चबाकर वह खामोश और मायूसी के साथ आंखें झपकाने लगा। फिर उसके दुबले-पतले कंधे आगे को झुक गये। और उसने घबराहट से तंग आकर हाथ हिलाते हुए कहा:

'भूल गया, मारो गोली। बिल्कुल ही याद नहीं रहा।'

और बेचारे की आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे – उसकी बड़ी-बड़ी आंखों से आंसुओं की सरिता-सी बहने लगी। उसका भयभीत मुर्झाया हुआ चेहरा भौचक्का-सा हो गया था। और उसने सीने के ऊपर से दिल को सहलाते हुए अपराधी की नाईं कहा:

'देखो तो ... च च ... कितना अच्छा पद था। दिल को लगता था ... हाय ... तुम समझते हो मैं मजाक कर रहा हूं?'

सिर झुकाये वह एक कोने की ओर चल दिया और वहीं कंधे व कमर झुकाये खड़ा रहा। फिर चुपचाप अपना काम करने चला गया। सारा दिन वह खोया-खोया और उदास रहा। और शाम को शराब इतनी पी, इतनी पी कि बदमस्त हो गया और बात-बात पर लड़ने-मरने को तैयार हो गया। चीखकर बोला:

'कहां है याश्का,? क्या हो गया मेरे छोटे भाई? अरे भगवान तुम्हें समझे ...'

कारीगर उसे खूब पीटना चाहते थे लेकिन बंजारे ने उसका पक्ष लिया और हमने बदमस्त आर्तेम को बोरियों में लपेटकर सुला दिया।

सपने में जो पद उसे मस्तिष्क में आये थे वे फिर कभी याद न आये।

बेकरी और हमारे मालिक के कमरे के दरम्यान लकड़ी के पतले-पतले तख्तों की एक दीवार थी जिस पर कागज चढ़ा हुआ था और अक्सर जब मैं जोर-जोर से पढ़ना शुरू कर देता तो मालिक तख्तों की दीवार पर जोर से मुक्का रसीद करके मुझे चौंका देता और झींगरों को भी। मेरे साथी चुपचाप सोने चले जाते। उछलते-कूदते झींगर फटे हुए कागज में सरसराते रहते और मैं अकेला रह जाता।

लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता कि मालिक अचानक और दबे पांव, खामोशी के साथ बादल के एक टुकड़े की तरह तैरता हुआ दरवाजे में दाखिल होता और बिना आशा के हमारे झुरमुट में आ खड़ा होता और दांत कटकटाकर कहता।

'आधी-आधी रात तक बैठे रहो कमबख्तों! और सुबह न जाने कब तक खर्राटे लेते रहना।'

यह याश्का और दूसरे लोगों के लिए था। मुझपर वह यों गुर्राता

'अरे गवैये, ये रात की गोष्ठियां फिर शुरू कर दीं तुमने? देख लो तुम्हारी किताबें सुन-सुनकर उनके दिमाग खराब न हो जायें और जब धींगामश्ती पर उतर आयें तो कहीं तुम्हें ही सबसे पहले अपना निशाना न बनायें।'

यह सब वह एक उदासीन ढंग से कहता – महज दिखावे के लिए. महफिल तितर-बितर करने के लिए नहीं। वह खुद भी हमारे पास फर्श पर बैठ जाता और बेतकल्लुफी से कहता:

'हां तो पढ़ो, मैं भी जरा सुनूं। शायद मुझे भी कुछ अक्ल आ जाय। ...'

'सुनो याश्का, जरा मेरे लिए चाय तो बनाओ।'

बंजारा मजाक में कहता:

वासिली सेम्योनिच ! हम चाय से आपकी खातिर करें और आप हमारी वोद्का से ।'

मालिक खामोशी से एक खाली - खूली नजर उस पर डाल कर रह जाता।

और कभी ऐसा होता कि वह थकी हुई गमगीन अवाज में यह कहता हुआ हमारे साथ शामिल हो जाता ।

अरे लड़कों...नींद नहीं आती... चूहे खड़बड़ - खड़बड़ कर रहें हैं, कमबख्त ! बाहर बर्फ चुरमुरा रही है। लानत हो इन विद्यार्थियों पर मटरगश्त करते फिर रहें हैं। दूकान के अन्दर -बाहर लड़कियां ही लड़कियां हैं। अन्दर आती हैं आग सेंकने, वेश्याएं कहीं की! तीन कोपेक की एक खरीदी और आध घंटे तक आग तापने को अन्दर ही टहलती फिरी।'

बस फिर क्या था, हमारे मालिक की फिलासफी शुरू हो जाती:

'सब ऐसे ही होते हैं, दो कुछ नहीं और लो सब कुछ। तुम भी – तुम लोग भी बस इस फिक्र में रहते हो कि कोई आसान-सा काम मिल जाय। बस यही तुम्हें आता है। जितनी जल्दी हो सके काम छोड़-छाड़ के चल दो। और खाक छानते फिरो गली कूचों की!'

याश्का चूंकि कारखाने का सरदार था इसलिए यह बात उसे कांटे की तरह चुभती थी और वह तड़प उठता फिर ख्वामखाह की बहस छिड़ जाती:

'तुम अब भी सन्तुष्ट नहीं हो, वासिली सेम्योनिच ! अब भी हम जिन्नात की तरह काम करतें हैं, समझे ! हां यह सम्भव है कि जब तुम स्वयं काम करते थे तब वैसा ही...'

हमारा आका भूली - बिसरी बातों का स्मरण पसन्द नहीं करता था। थोड़ी देर तक तो वह नानबाई की बातें खामोशी से सुनता रहा; उसके होंठ भिंच गये और मंजरी आंख कठोरता से उसे घूरती रही, फिर उसका मेंढक - जैसा मुंह खुला और अनुनासिक ध्वनि में उसका भाषण उमड़ पड़ा।

'बीती ताहि बिसार दे आगे की सुध ले ! पहले की पहले से रही, अब तो मैं तुम्हारा आका हूं और जो मुझे रूचे, कर सकता हूं – कानून है कि तम्हें मेरी आज्ञा का पालन करना पड़ेगा समझे ? हां बड़बड़िये पढ़े जाओ।'

एक दिन मैंने 'डाकू बन्धु' शीर्षक कविता पढ़ी। सबने यह कविता पसन्द की और उससे रस लिया। यहां तक कि हमारे मालिक ने भी विचार-मग्न हो कर सिर हिलाते हुए कहा :

'ऐसा हुआ होगा ... क्यों नहीं ? हो सकता था ऐसा। इंसान सब कुछ हो सकता है – सब कुछ!

बंजारे ने नाक-भौं सिकोड़ी और सिगरेट अपनी उंगलियों में दबाकर उस पर जोर से फूंक मारी और आर्तेम एक हल्की-सी मुस्कराहट के साथ कविता को कण्ठाग्र करने के लिए सचेष्ट था।

भाई मेरा और मैं! हम थे फकत दो ही जने
और न था बचपन खुशी से पुर अपने लिए

शातुनोव तंदूर के अन्दर के गढ़े को घूर रहा था, और वहीं घूरते हुए बोला:
'मुझे इससे अच्छी कविता आती है। ...'

'अच्छा तो फिर सुनें हम भी!' हमारे मालिक ने राय दी और बेडौल जिस्म के लम्बे हाथ पर ठोड़ी जमाकर व्यंग्यपूर्ण ढंग से ध्यानमग्न होकर कहा। ओसिप इतना घबड़ा गया कि उसकी गर्दन तक लाल हो गई और उसके कान फुरेरियां लेने लगे।

'मुझे याद नहीं आ रही अब ...'

'अरे चलो, शुरू तो करो!' बंजारे ने डांट बताई, 'कोई तुम्हारी जबान नहीं पकड़े ले रहा।'

आर्तेम ने ओसिप को चिढ़ाया:

'बेहतर है ना? तो आओ फिर सुना डालो ना। बोझ हल्का कर लो। ...'

शातुनोव ने लाचारी और अपराधी की-सी निगाहों से मेरी ओर देखा, फिर मालिक की ओर, और एक गहरी सांस ली।

'अच्छा तो सुनो।'

अब भी तंदूर की खोह में घूरते हुए – जहां डबलरोटी के टूटे हुए सांचे, लकड़ियां और झाड़ुएं बिखरी पड़ी थीं और जो एक ऐसे अधखुले काले मुंह की भांति दिखाई दे रहा था जिसमें बिना चबाया हुआ ग्रास पड़ा हो। उसने अपनी भारी आवाज में गाना आरम्भ किया:

वोल्गा के करीब एक रहजन
झाड़ियों में पड़ा था खस्ता तन
उसके सीने पर था जख्म कारी
और हंगामा-ऐ मौत था तारी
आखिरी वक्त में दुआ के लिए
जख्म अपना दबा के हाथों से
पहले घुटनों के बल वह बैठ गया
गिड़गिड़ाकर यह फिर खुदा से कहा
रूह बदकार है मेरी या रब
यह गुनाहगार है तेरी या रब
तू मेरी रूह को जुदा कर दे
जिस्म की कैद से रिहा कर दे
कितनी बदकार है यह मेरी रूह
हां गुनाहगार है यह मेरी रूह

जबकि अहदे शबाब था मुझ पर
मुझको बनना था राहिने खुश्बू
आज मैं बन गया मगर डाकू

शातुनोव गुनगुनाकर कविता पढ़ रहा था। अपनी कमर दुहरी करके और अपने नंगे पांव का अंगूठा हाथ में दबोचकर उसने अपना चेहरा छिपाया हुआ था और न जाने क्यों वह अपना पांव निरन्तर उछालता रहा। ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वह कोई जादू कर रहा हो और साथ-साथ कोई मंत्र पढ़ाता जाता हो –

कारनामों में सरफरोशी के
उम्र अपनी गुजार दी मैंने
जो बहादुर हो खौफ क्या जाने
मुझको अच्छे लगे न हंगामे
जिन्दगी काट दी समझने में
मैंने उस रूह को परखने में
सुबह हस्ती की शाम कर डाली
अपनी कुवत तमाम कर डाली
रूह से पूछता रहा हूं मैं
क्या खुदा ने सिफत तुझे दी है
तुझमें क्या खासियत है खूबी है
पाक मरियम के तोहफाए नायाब
सुन तो ऐ मेरी रूह आलमताब
तीरगी का हसीन शहजादा
यानी शैतां सितम का दिलदादा
कौन सा बीज बो गया तुझ में
हाय क्या शैसमो गया तुझ में

'तुम बिल्कुल मूर्ख ,गधे हो ,ओशिप !' मालिक ने अचानक तेज अवाज में डांटते हुए और अपने कन्धों को उचकाते हुए कहा,' और तुम्हारी कविता भी बेहूदा है, किताब वाली कविता की तो यह पासंग भी नहीं ! तुम झूठे हो, तुम्हारे दिमाग में गोबर भरा हुआ है।'

'ठहरो तो ,वासिली सेम्याविच ! बंजारे ने उसकी बात काटकर झल्लाकर कहा ,'खत्म तो कर लेने दो उसे !'

परन्तु मालिक सुनी-अनसुनी करते हुए भावावेश में कहता ही गया :

'यह तो बिल्कुल नीचता है! तेरी आत्मा, मेरी आत्मा... पहले तो खूब गुलछर्रे उड़ाए फिर डर गया और हाय-तौबा करने लगा: हे भगवान, हे भगवान ! भगवान का इससे क्या वास्ता ? पहले तो खूब छककर पाप किये अब उसके परिणाम से नानी मरती है! ...'

उसने जम्हाई ली और मैं समझता हूं जानबूझ कर ली। फिर भर्राई आवाज में कहा:
'आत्मा,आत्मा! और है नहीं कौड़ी बराबर महत्व की । '

बर्फ का तूफान खिड़की के शीशों को अपने कुरूप पंजों से खुरच रहा था। मालिक ने खिड़की को कनखियों से देखा और फिर एक ही सांस में कहना शुरू किया :

'मुझसे पूछो जो व्यक्ति अपनी आत्मा की बड़ी हांकता है, उसे जरा भी अक्ल नहीं है। उससे कहा अच्छा भई, तुम्हे यह काम इस तरह करना चाहिये और वह कहता है मेरी आत्मा ने इसकी अनुमति नहीं दी। अन्त:करण कहो या कुछ और जब तक कोई किसी काम के करने से झेंपता रहे उसका फल एक ही जैसा होता है उसे आत्मा कहो या अन्त:करण। कोई समझता है हर चीज निषिद्ध है। वह जाता है और साधु बन जाता है। कोई और व्यक्ति है जो समझता है कि कोई वस्तु निषिद्ध नहीं है – वह डाकू बन जाता है। ये दो प्रकार के मनुष्य हैं, एक प्रकार के नहीं। और उन्हें एक दूसरे के साथ गड़बड़ नहीं करना चाहिये। जो काम करने का है वह तो करना ही होगा ...।' और जब कोई काम करना ही है तो अन्त:करण तंदूर में जाकर कहीं छिप जाएगा और आत्मा पड़ोसिन से मिलने चली जाएगी।

बहुत बेढंगेपन से उसने अपनी टांगे घसीटी और खड़े होकर किसी पर नजर डाले बगैर ही अपने कमरे में चला गया।

'अच्छा, अब जाओ सो रहो।' बैठे हुए उपदेश दे रहे हो, हूंह आत्मा! भगवान से प्रार्थना करना बड़ी साधारण बात है और डाकू बन जाना बड़ी बहादुरी नहीं है हरगिज नहीं। अरे मूर्खों! कुछ काम करो काम! हां!!

किवाड़ बन्द करके जब वह चला गया तो बंजारे ने शातुनोव के कुहनी मारते हुए कहा:

'हां तो फिर आगे सुनाओ वह गीत! '

ओसिप ने अपना सिर उठाया, एक सिरे से दूसरे तक सब पर दृष्टि दौड़ाई और दबे स्वर में कहा:

'झूठा है वह! '

'कौन हमारा मालिक ?'

'हां, आत्मा तो है उसके भी। लेकिन उसे सुख चैन नसीब नहीं है। मुझे खूब मालूम है।'

'उससे हमें क्या गरज?... तुम कहो क्या कहते हो?'

ओसिप चकरा गया, वह तन्दूर में से रेंगता हुआ निकला और अपने बड़े से सिर को झटका देकर बोला:

'मैं तो भूल ही गया!'

'अच्छा, झूठ मत बोलो !'

'नहीं, नहीं वास्तव में मुझे नींद आ रही है।'

'अरे तुम्हारी... याद करने की कोशिश तो करो!'

'नहीं अब तो नींद सता रही है...।'

जब अंधेरे में वह बिल्कुल छिप गया; हल्की-सी आवाज में बोला:

'अरे भाइयों! यह जिन्दगी भी बड़ी मुसीबत की है हमारी! ' ...

'वास्तव में?' आर्तेम बड़बड़ाया। 'और हमें पता ही नहीं – धन्यवाद!'

बंजारे ने बड़ी सफाई से अपने लिए एक सिगरेट बनाई और ओसिप की परछाईं अंधेरे में लुप्त होती देखते हुए सरगोशी के अन्दाज में कहा:

'इस आदमी का दिमाग कुछ कमजोर मालूम होता है।'

फरवरी का बर्फानी तूफान आया हुआ था; हवा चिंघाड़ रही थी; खिड़कियां सिर पीट रही थीं; धुंआकाश में तेज हवा घुसकर सीटियां बजाने लगती थी। बेकरी के निविड़ अन्धकार में तेल का टिमटिमाता लैम्प रोशनी पैदा करने की असफल चेष्टा कर रहा था और अंधेरा कांपता हुआ नज़र आ रहा था। सर्द हवा की लहरें कहीं से बराबर अन्दर आ रही थीं और टांगें ठण्डी बर्फ हुई जा रही थीं। मैं आटा गूंध रहा था और मालिक नांद के पास आटे के एक बोरे पर बैठा कह रहा था:

'जब तक तुम जवान हो, हर बात पर गौर करो। जब तक कोई पेशा विशेष न अपना लिया हो, हर प्रकार के काम के बारे में सोचो। हर पहलू पर दृष्टिपात करो। शायद कोई ऐसा काम सूझ जाए जो तुम्हारे लिए उचित हो। बस जरा सोच लो – ऐसी कोई जल्दी नहीं है ...'

बोरे पर बैठे हुए उसने अपने घुटने फैला रखे थे। एक पर उसने शराब का एक कनस्टर टिकाया हुआ था, और दूसरे पर गदली शराब से आधा भरा हुआ एक गिलास मैले-कुचेले फर्श पर झुके हुए उसके बेडौल चेहरे पर मैं कभी-कभी चुपके से घूर कर देख लेता और जलकर दिल-ही-दिल में सोचता:

'एक आध गिलास मुझे भी दे-दे ...।'

उसने सर उठाया, बाहर की चिंघाड़ गौर से सुनी और धीमी आवाज में पूछा:

'क्या तुम अनाथ हो?'

'यह तो पहले भी पूछ चुके हो मुझसे।'

'भगवान कसम, कितनी कर्कश आवाज है तुम्हारी!' उसने एक ठण्डी सांस भरके अपने सिर को झटका देते हुए कहा, 'आवाज तो है ही, तुम्हारी बात भी!' काम समाप्त कर चुकने के बाद, मैं अपने हाथों में चिपका हुआ सूखा आटा खुरचकर साफ कर रहा था। होंठ चाटते हुए उसने शराब पीकर गिलास खाली किया और दुबारा भरकर मेरी ओर बढ़ाया।

'लो पियो!'

'शुक्रिया।'

'हां, हां लो, पियो। मैं झट से बता सकता हूं कि काम करना कौन आदमी जानता है। और ऐसे आदमी की गलतियों को मैं अक्सर अनदेखा कर जाता हूं। अब मसलन यास्का ही को ले लो। वह मूर्ख भी है और चोर भी। लेकिन फिर भी मैं उसका आदर करता हूं। उसे अपने काम से शौक है। शहर में उससे अच्छा नाई कहीं नहीं मिलेगा। जो शख्स काम

करना पसन्द करता है, जिन्दगी में उसके साथ रियाअत करना और मरने के बाद उसका सम्मान करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। निश्चय ही!'

नांद को ढंककर मैं आग सुलगाने चला गया। मेरा मालिक कराहता हुआ उठा और एक भूरी गेंद की तरह लुढ़कता हुआ चुपचाप मेरे पास आया और बोला:

'जब कोई आदमी अच्छा काम कर रहा हो तो उसके अनेक दोष व त्रुटियां क्षम्य हैं। ... उसके अवगुण उसकी मृत्यु के साथ समाप्त हो जायेंगे किन्तु उसके गुण जीवित रहेंगे।'

तंदूर में टांगें लटकाते हुए वह धम्म से जमीन पर बैठ गया, शराब का कनस्टर अपनी बाजू में रख लिया, आग को देखने के लिए झुका और देखकर बोला:

लकड़ियां काफी नहीं हैं। देखो तो जरा।'

'बहुत है, सूखी वैसे हैं और फिर आधी उसमें चीड़ की हैं।'

'हूं ... उख ...।'

वह धीरे से कहकहा मारकर हंसने लगा और मेरे कंधे पर हाथ मारते हुए बोला, 'बड़े होशियार हो। यह न समझना कि मैंने यह देखा नहीं था। बहुत काफी है लकड़ियां! हर चीज पर नजर रखनी पड़ती है। लकड़ी और आटा, और बाकी सब कुछ!'

'और आदमी की नहीं?'

'आदमी की बात भी बताऊंगा, घबराओ नहीं। मेरी बातें जरा गौर से सुनो, तुम्हें कोई खराब बात नहीं सिखाऊंगा!'

अपने सीने पर हाथ मारते हुए, जो उसकी तोंद की तरह फूला हुआ और मोटा था, उसने कहा:

'मैं अन्दर से अच्छा आदमी हूं। मेरे सीने में भी दिल है। ऐसी बातें समझने के लिए अभी तुम बच्चे हो, और बेवकूफ भी। लेकिन फिर भी अच्छा है कि ये बातें तुम्हारे कान में पड़ जाएं! और सुन मेरे भाई, आदमी जो है ना वह किसी सैनिक की वर्दी का बटन नहीं है। आदमी विविध प्रकार से चमकता है...। और हां यह तुम्हारा मुंह क्यों उतरा हुआ है?'

'बात दरअसल यह है कि मुझे नींद आ रही है और तुम जाने नहीं देते। बड़ी दिलचस्प हैं तुम्हारी बातें भी।'

'अगर दिलचस्प हैं तो फिर मत सोओ। जब मालिक बन जाओगे तो बहुत समय मिला करेगा सोने के लिए।'

उसने एक ठण्डी सांस भरी और कहा:

'नहीं, तुम कभी मालिक नहीं बनोगे। तुम हरगिज व्यापार नहीं करोगे। आवश्यक्ता से अधिक वाचाल होना ... बातों-बातों ही में तुम अपने आप को समाप्त कर लोगे और योंही नष्ट-भ्रष्ट हो जाएगा तुम्हारा सारा जीवन। किसी को तुमसे कोई लाभ न होगा।'

अचानक उसने एक जोर की सांस खींचते हुए बहुत गंदी गाली दी। उसके चेहरे का मांस इस प्रकार थिरक रहा था जैसे फालूदे के भरे हुए प्याले को किसी ने जोर से हिला दिया हो। और गुस्से की एक रौ उसके जिस्म में दौड़ गई; उसका चेहरा और गर्दन सुर्ख

हो गए और आंखों की पुतलियां भयानक रूप धारण करके उबल पड़ीं हमारा मालिक वासिली सेम्योनोव धीरे-धीरे और कुछ विलक्षण ढंग से हुंकार रहा था। मानो बाहर भी बर्फानी तूफान आहें भर रहा था और जिसके साथ सारी धरती बड़े दयनीय ढंग से आंसू बहाती प्रतीत हो रही थी वह उसकी नकल कर रहा हो।

'अरे गोली मारो इसे! काश मेरे पास अच्छे विश्वासपात्र आदमी होते! फिर मैं तुम्हें दिखाता कि कारोबार किसे कहते हैं। सारा जिला और वोल्गा का पूरा इलाका दांतों तले उंगली दबाता! लेकिन ऐसे लोग मिलते ही नहीं। सबके सब गरीबी के कारण या अपनी व्यक्तिगत निर्बलता के कारण शराबी बन गए हैं। और अधिकारी लोग, वे मरदूद अफसर, अधिक है उन पर।'

उसने अपनी गठीली कलाइयों की मुट्ठियां मुझ पर तानकर उंगलियां खोलीं और हवा में इस तरह पंजे चलाए जैसे वह किसी के बाल पकड़कर उसे नोच-खसोट रहा हो। और इसी दौरान में वह भूखे शेर की नाईं गुर्रा-गुर्राकर और मुंह से झाग छोड़ते हुए बोलता रहा:

'बचपन ही से देखना चाहिए कि किसी की पसन्द और रुचि क्या है, यह नहीं कि किसी भी पुराने काम पर अंधाधुंध लगा दिया। इसी का तो यह नतीजा है कि आज कोई व्यक्ति सौदागर है तो कल वही भिखारी बन गया। आज नानबाई है तो एक सप्ताह बाद उसे किसी के यहां लकड़ियां चीरते हुए पाया। स्कूल खोल और हर ऐरे-गैरे-नत्थू-खैरे को घेरकर वहां ले गए कि जाओ पढ़ो। हरएक को एक ही लाठी से हांकना शुरू कर दिया। हर आदमी को मौका देना चाहिए कि वह रुझान खुद मालूम करे।'

उसने मेरा बाजू दबोचकर अपनी ओर घसीटा और बड़ी भयानक सिसियाती हुई आवाज में कहता रहा:

'यही तुम सोच रहे होगे और इसी की बातें कर रहे होगे कि हरेक को ऐसी जिन्दगी बसर करने पर मजबूर किया जाता है जो उसको नापसंद हो बल्कि इस तरह की जैसी कि बसर करने का उनके अफसर हुक्म दें। आखिर हुक्म देने का अधिकार किसको है? उसे जो काम कर रहा हो। यानी मुझे हुक्म देने का हक है। मैं खूब समझ सकता हूं कि कौन किस काम के लिए उचित है।'

फिर मुझे धक्का देते हुए उसने अपनी बेबसी प्रकट करते हुए हाथ हिलाया।

'लोगों के व्यक्तिगत मामलों में अधिकारीगण यदि हस्तक्षेप करेंगे तो उससे कोई फायदा नहीं होगा। कोई काम नहीं चलेगा। सबसे अच्छा तो यह है कि सारे बखेड़े को लात मारकर जंगल में निकल जाओ। सब कुछ छोड़कर भाग जाओ।'

अपने गोल-मटोल जिस्म को इधर-उधर झुलाते हुए उसने धीरे-धीरे और चबा-चबाकर कहना शुरू किया:

'एक आदमी तक नहीं मिलता। सब चापलूस और जी हजूरी करने वाले हैं, किसी में जरा भी हिम्मत नहीं। जाने के लिए कहो तो वह गया और रुकने को कहो तो फौरन रुक गया। ठीक वैसे ही जैसे रंगरूट करते हैं। और जब कोई शरारत करने की सूझती है तब भी रंगरूटों की-सी हरकत करते हैं और असल में इससे मिलता-जुलता खाक नहीं। और सच कहता हूं मैं तुमसे भगवान आसमान पर बैठा-बैठा ये सब झाड़े-टंटे देखता रहता

है। और आप ही आप सोचा करता है – अरे मूर्खो! भर पाया मैं तुमसे! ... दुनिया के किसी मसरफ के भी नहीं हो तुम।'

'तो तुम अपने आप को दुनिया के किसी मसरफ का नहीं समझते क्यों?'

अब भी वह पहले की तरह अपने शरीर को झुलाता रहा और फौरन जवाब न दिया।

'मेरे ... मेरे बारे में कह रहे हो तुम ... हर चिंगारी तो ज्वाला नहीं बन जाती, सम्भव है कि करछे में चमककर रह जाये। मुझे कहते हो तुम, मैं तो चालीस से कुछ ऊपर हूंगा और जल्दी ही शराब की लत मेरा काम तमाम कर देगी। और शराब की लत पड़ती है जिन्दगी की उलझनों और परेशानियों से। और परेशानियां ... अब देखो क्या मैं सिर्फ इसी काम के लायक हूं? मैं तो दस हजार आदमियों के किसी कारोबार को चलाने की योग्यता रखता हूं। और यदि ऐसा हो जाता तो मेरा सारा काम इस खूबसूरती के साथ चलता कि देश के सारे बड़े-बड़े गवर्नर हक्का-बक्का रह जाते।'

उसने शान में आकर अपनी मंजरी आंख चमकाई और फुल्ली आंख मलिनता से आग के शोलों को घूरती रहीं फिर उसने अपने हाथ तेजी से आगे को फूंकते हुए कहा:

'क्या महत्व है इसका मेरे लिए? इससे अधिक उपयोगी तो चूहेदान होता है। एक आधे दर्जन आदमी दो मुझे – ईमानदार आदमी। अच्छा, चलो ईमानदार न सही चोर-बालक तो हों। और मैं तुम्हें दिखा दूंगा कि क्या हूं मैं! ... और काम? अरे ऐसा शानदार कारोबार कायम करूं कि जो देखे चकरा जाए। और फिर काम भी ऐसा-वैसा नहीं, जोरदार!'

थक-हारकर वह उस गंदे फर्श पर ही लेट गया। उसने एक लम्बी अंगड़ाई ली और नाक से सूं-सूं करते हुए, अपने पांव तंदूर के मुंह में लटका दिये जो भड़कते-लपकते शोलों की रोशनी से दमक रहा था।

'औरतें भी!' वह सहसा गुर्राया।

'औरतों का क्या जिक्र?'

कोई एकाध मिनट तक छत को घूरते रहने के बाद मालिक निरुत्साह व उदासी भरे स्वर में कहते हुए बैठ गया:

'काश स्त्री बस यह समझ ले कि पुरुष किस तरह उसके बिना एक कदम नहीं बढ़ सकता! कारोबार में वे कितनी बड़ी भूमिका अदा कर सकती हैं यह वे समझ ही नहीं सकती। कोई बेचारा अकेला है। यह तो भेड़िये का-सा जीवन हुआ न! जाड़ा हो, अंधियारी रात हो, जंगल हो और बर्फ गिर रही हो पर वह एक भेड़ जरूर हजम कर जायेगा! लेकिन फिर? क्या फायदा हुआ? पेट भर लेने पर भी इसकी हालत वहीं दयनीय बनी रही। वह बैठकर मनहूस आवाज में रोयेगा, अपनी तकदीर को कोसेगा!'

सर्दी से उसके शरीर में झरझरी पैदा हुई, उसने झट तंदूर के अन्दर झांका घूरकर मेरी ओर फिर फौरन ही मालिक की-सी रोबदार आवाज बनाकर गुर्राया:

'कोयले झाड़ो, खड़े देख क्या रहे हो? खड़े-खड़े कान फटफटा रहे हो?'

तंदूर में से उठकर वह ऊपर आया और बड़ी देर खड़ा खिड़की से बाहर देखता और अपनी पसलियां खुजाता रहा। शीशों के बाहर सफेद भंवर पटाख-पटाख की आवाज़ निकाल रहे थे। दीवार पर लगे हुए लैम्प की लौ, धुएं से भरी चिमनी में बिल्कुल ही

छिप-सी गई थी। और वहां से लौ के भड़कने और चटखने की आवाज आ रही थी।

मालिक 'हे भगवान, हे भगवान!' बड़बड़ाता हुआ, भारी-भारी कदमों से बिस्कुटों की बेकरी में चला गया और जाते हुए वह ऐसा लगा मानो अंधकारपूर्ण मेहराब ने उसे निगल लिया हो। जब वह चला गया तो मैंने तंदूर में डबलरोटियां जमानी शुरू की और फिर ऊंघते-ऊंघते सो गया।

'देखो, दिन चढ़े तक मत सोते रहना।' मेरे सिर के ठीक ऊपर से किसी की जानी-पहचानी आवाज आई।

मालिक पीठ पर अपने हाथ बांधे खड़ा था। उसका चेहरा तर था और कमीज सीली हुई।

'बड़ी बर्फ पड़ रही है। ढेर-के-ढेर लगे हुए हैं। सारा आंगन बर्फ से पटा पड़ा है।'

उसने अपने होंठ फैलाकर लटका लिए और कुछ देर यों ही चुपचाप खड़ा मेरा मुंह चिढ़ाता रहा। फिर आहिस्ता से बोला:

'एक दिन ऐसा आयेगा कि ऐसी ही बर्फबारी पूरे हफ्ते, पूरे महीने सारे जाड़ों और सारी गर्मियों होती रहेगी।... और धरती की हर चीज उसके नीचे दब जायेगी। ... बेलचों से बर्फ कितनी ही क्यों न हटाओ कुछ फायदा न होगा। ... हां-हां ख्याल कुछ बुरा नहीं है। तमाम बेवकूफों का एकदम खात्मा हो जायेगा ...।'

झूमता-झामता वह दीवार के पास पहुंचकर कुछ हिचकिचाया और फिर अंधेरे में गायब हो गया।

हर रोज सुबह पौ फटते ही ताजा डबलरोटियों की एक टोकरी लेकर मुझे कारखाने की एक दुकान पर जाना पड़ता था। और मालिक की तीनों रखैलों से मेरी जान-पहचान हो गई थी।

उनमें से एक नौजवान, घुंघराले बालों और भरे जिस्म वाली दर्जिन थी जो एक औसत दर्जे का चुस्त व सफेद गाउन पहने रहती थी। संसार को वह अपनी मुर्दा, मलिन और खाली-खाली, निराशामय आंखों से देखा करती थी। और उसके पीले चेहरे पर वैधव्य का-सा गम छाया रहता था। मालिक के पीठ पीछे भी वह उसका जिक्र बड़े डरते-डरते और दबी हुई आवाज में करती थी; उसका नाम और प्यार का नाम लेकर याद करती। और जो चीजें लेकर जाता उन्हें वह एक अजीब घबराहट के साथ लेती और जांचती, मानों वह कोई चोरी का माल ले रही हो।

'हाय कितनी प्यारी-प्यारी डबलरोटियां हैं? नन्हीं-नन्हीं!' वह बड़ी मधुर आवाज में कहा करती।

दूसरी एक ऊंची, साफ-सुथरी, कोई तीस वर्षीय स्त्री थी – देखने में बहुत स्वस्थ व हृष्ट-पुष्ट तथा नेक नज़र आती थी। उसकी कीली आंखें सदा झुकी रहती थी और उसकी

वाणी में बड़ा माधुर्य व विनम्रता थी। चीजें वसूल करते समय गिनती में वह मुझे ठगने की कोशिश किया करती थी और मुझे पूरा विश्वास था कि एक-न-एक दिन यह स्त्री अपने दुबले-पतले और प्रकट रूप में ठण्डे जिस्म पर जरूर कैदियों के धारीदार कपड़े पहनेगी। जेलखाने का सफेद रंग का लबादा उसके कंधों पर होगा और बालों पर सफेद रूमाल बंधा होगा।

उन दोनों को देखकर घृणा का एक तूफान मेर दिल में उमड़ पड़ता जो किसी हाल रोके न रुकता था। और मैं हमेशा यह कोशिश किया करता था कि मैं तीसरी औरत के पास सामान लेकर जाया करूं। उसकी दुकान आम रास्ते से जरा ज्यादा हटकर थी। और इस अजीब औरत के पास जाने का सुखद अवसर दूसरे लड़के मुझे खुशी से दे दिया करते थे।

उसका नाम सोफिया पलाखिना था; शरीर भारी और गाल गुलाब के-से थे! और कुल मिलाकर वह एक विलक्षण-सी बेडौल औरत थी, मानों किसी ने इधर-उधर से बचे-खुचे टुकड़े जमा करके और जल्दी-जल्दी में जोड़-जाड़ कर गढ़ दिया हों उसके बाल लहरिये और झबरे थे, काले भंवर जैसे, जैसे किसी यहूदन के हों और वह हमेशा उलझे रहते थे। फले हुए गुलाबी गालों के बीच में तोते के चोंच की तरह खमदार नाक थी और आंखें भी साधारण रूप में सुन्दर थीं। गहरी, सुर्खी मायल, बादामी रंग की पुतलियां साफ-सफ्फाफ ढेलों पर अजीब तरह से तैरती हुई नजर आती थी। और उनमें बच्चों की-सी मस्ती-भरी चमक थी। उसका मुंह भी बच्चों का-सा ही था – छोटा-सा और सिकुड़ा हुआ। उसकी ठोस मोटी ठोढ़ी एक हृष्ट-पुष्ट स्त्री की बदनुमा, उभरी हुई छातियों पर धरी रहती थी। अपने फूहड़पन के कारण सदा एक मैला-कुचैला, बदबूदार ब्लाउज पहने मिलती थी जिसमें एक बटन भी न होता था। नंगी टांगे और पैर में स्लीपर। देखने में तीस वर्ष की स्त्री मालूम होती थी। हालांकि यह थी केवल अठारह वर्ष की। जैसा कि उसने मुझे अपनी टूटी-फूटी रूसी भाषा में बताया था। उसे यहां एक अनाथ समझकर नैरोस्क से लाया गया था और उसके मालिक ने उसे वेश्यालय में पहुंचा दिया था जहां से उसने अपना रास्ता तलाश कर लिया। वह कहा करती:

'ऐसा हुआ कि जिसकी कोख से मैं पैदा हुई थी वह मेरा मां मर गया, और बाबा एक जर्मन औरत से शादी कर लिया और वह भी मर गया। उधर जर्मन औरत एक जर्मन मरद के साथ शादी कर लिया। इस तरह मेरा एक और मां और एक और बाबा हो गया। पर उन दोनों में से मेरा कोई भी नहीं। वो दोनों खूब दारू पीता था। जब मेरी उमर तेरह वर्ष का हो गया तो उस जर्मन मरद ने मुझे सताना शुरू करा इस वास्ते कि मैं शुरू से मोटी थी। वह मुझे खूब मारता, पीठ पर घूंसे लगाता फिर वो मेरे साथ रहने लगा और मेरा पेट रह गया। फिर तो वह सब घबरा गया और घर छोड़कर भाग गया। सब कुछ खत्म हो गया और कर्जे में घर बेच दिया और मैं औरत के साथ जहाज में बैठकर यहां आया पेट गिरवाने। फिर मैं ठीक हो गई और उन लोगों ने मुझे एक रण्डीखाने में दे दिया। वो बड़ा गंदा, भयंकर! बस मेरे को तो जहाज में अच्छा लगता था।'

ये सब बातें उसने मुझे उस समय बताई जब हम आपस में दोस्त बन गए थे और जिस

तरह हमारी दोस्ती हुई वह भी अजीब थी।

उसका बेजोड़ चेहरा, उसकी टूटी-फूटी बातें, उसकी सुस्ती और उसका असह्य घमण्ड और बड़बड़िया बातें, मुझे ये कुछ भी पसन्द न था। दूसरी बार जब मैंने सामान उसको दे दिया तो उसने कहकहा लगाकर कहा:

'कल मैंने मालिक को घर से निकाल दिया और उसका मुंह नोच लिया। तुमने देखा?'

देखा तो था मैंने। एक गाल पर तीन खराशें पड़ी थीं और दूसरे पर दो। लेकिन उससे बात करने को मेरा जी न चाहा और मैं खामोश रहा।

'बहरे हो तुम?' उसने पूछा, 'या गूंगे हो?'

मैंने कोई जवाब न दिया। फिर उसने मेरे पर जोर से फूंक मारी और कहा:

'उल्लू!'

बस उस मरतबा सिर्फ इतना ही हुआ। अगले दिन जब मैं अपनी टोकरी पर झुका हुआ खुश्क और फफूंदी हुई रोटियां, जो बिकी नहीं थीं, छांट रहा था तो वह आकर मेरी पीठ पर सवार हो गई। उसने अपने छोटे-छोटे नर्म बाजुओं से मेरी गर्दन कस ली और चिल्लाई:

'चड्ढी दो, मुझे चड्ढी!'

मुझे बड़ा तैश आया और मैंने उससे कहा, 'मुझे छोड़ दो!' लेकिन वह और भी बोझ डालकर लटक गई और कहने लगी:

'चलो-चलो मुझे पीठ पर लेकर चलो!'

'हट जाओ वरना मैं तुम्हें पटखी दे दूंगा।'

'नहीं!' उसने बहस शुरू की, तुम मुझे नहीं पटख सकते। मैं नारी हूं और तुम्हें एक नारी की बात माननी चाहिए। चलो!'

उसके चिकटे हुए बालों में से तेल की ऐसी बदबू आ रही थी कि दिमाग फटा जाता था और वह खुद भी उस तेज और चिकटी हुई बू में बसी हुई थी। जैसे कोई पुरानी प्रिंटिंग मशीन हो।

मैंने एक झटका देकर उसे अपने सिर के ऊपर उसे इस तरह उछाला कि उसके पांव दीवार से जाकर टकराए। उसने बच्चों की तरह आहिस्ता-आहिस्ता बिसूरकर रोना और कराहना शुरू कर दिया।

मुझे उस पर तरस भी आया और अपनी उस हरकत पर शर्म भी। फर्श पर मेरी ओर पीठ किए बैठी झूम-झूमकर वह अपनी चिकनी-चिकनी खुली हुई टांगें अपने दामन में छिपा रही थी और उसकी नग्नता में कुछ ऐसी बेचारगी थी जो दिल पर असर करती थी। विशेषतया अपने नंगे पांव के अंगूठों को जिस तरह बल दे रही थी क्योंकि गिरते समय उसके पांव के स्लीपर फिसल कर गिर पड़े थे।

'मैंने पहले ही कह दिया था।' मैं गड़बड़ाकर बड़बड़ाया और उसे उठाकर खड़ा करने लगा। उसने मुंह बनाया और कराहते हुए कहा:

'हाय, हाय ... गुस्ताख लड़के!'

और अचानक फर्श पर जोर से पांव पटखते हुए उसने खुशमिजाजी से कहकहा लगाते हुए कहा:

'जा जहन्नुम में जा! चल भाग यहां से।'

मैं दौड़कर बाहर गली में आ गया। मुझे बड़ी शर्मिन्दगी थी और मैं अपने आपको बुरी तरह कोस रहा था। छतों के ऊपर रात का जमा हुआ मटियाला कुहरा जो बाकी बचा था, वह भी पिघल गया था और धुंधली सुबह रंगती हुई शहर पर छा रही थी। लेकिन सड़क की लालटेनों की पीली रोशनियां अभी गुल नहीं हुई थीं और सन्नाटे पर पहरा दे रही थीं।

'सुनो!' लड़की ने सड़क की तरफ का दरवाजा खोलकर मुझे आवाज देते हुए कहा, 'डरना नहीं, मैं मालिक से कुछ भी नहीं कहूंगी!'

दो दिन बाद उसके यहां सामान ले जाने का मुझे फिर मौका मिला। उसने बड़ी सुखद मुस्कान के साथ मेरा स्वागत किया, फिर एकदम किसी सोच में पड़ गई और पूछा:

'तुम्हें पढ़ना-लिखना आता है क्या?'

और नकदी रखने की दराज खोलकर उसने उसमें से एक खूबसूरत बटुआ निकाला और कागज का एक पुर्जा खींच लिया।

'इसे पढ़ो तो जरा!'

मैंने कविता के दो पद पढ़े जो बड़े सुन्दर लेखन में थे:

चंदा खा जाने में पिताजी हैं बड़े बदनाम
कम-से-कम भी वह चुरा बैठे हैं शायद एक लाख

'उफ कैसा जानवर है!' वह चिल्लाई और कागज का पुर्जा उसने मेरे हाथ से छीन लिया। फिर जल्दी-जल्दी और गुस्से में कहने लगी:

'एक उल्लू के पट्ठे ने लिखकर दी है यह कविता। वह है तो बड़ा उद्दण्ड लेकिन अभी विद्यार्थी ही है। मुझे विद्यार्थियों से बड़ी दिलचस्पी है। वे भी फौजी अफसरों की तरह होते हैं और वह तो मुझसे इश्क लड़ा रहा है। अपने बाप के बारे में ऐसी ही बातें किया करता है उसका बाप कोई बड़ा आदमी है। बड़ा-बूढ़ा है, सीने पर तमगे लगाये कुत्ते को साथ लिए फिरा करता है। हाय हाय, मुझे कितनी घृणा होती है जब कोई बूढ़ा आदमी कुत्ते साथ लिए फिरे। कोई और नहीं मिलता उन्हें साथ ले जाने को? इधर उसका बेटा उसे बुरा-भला कहता है, चोर कहता है, यहां तक कि लिख भी दिया – यहां!'

'तुम्हें उनकी क्या परवाह?'

'ओह!' उसने कहा और उसकी आंखे दु:खी होकर फटी-की-फटी रह गयीं। 'अपने बाप को बुरा-भला नहीं कहना चाहिये। और उसे खुद को तो देखो दुश्चरित्र स्त्रियों के साथ चाय पीने जाता है।

'कौन है वह?'

'क्यों मैं जो हूं! ' उसने अचम्भे और क्रोध मिश्रित आवाज में झल्ला कर कहा। 'कितने बुद्धू हो तुम ?'

एक विचित्र प्रकार की कहना चाहिये जबानी जान-पहचान हममें पैदा हो गयी थी हम हर मसले पर बातचीत करते थे। लेकिन यह बात संदिग्ध है कि हम एक-दूसरे के स्वभाव को बिल्कुल समझ सके हों। कभी-कभी तो वह बड़ी गम्भीरता के साथ लड़कियों की बातें

बड़े राजदराना अंदाज में मुझे बताती और आप ही आप मेरी निगाहें झुक जातीं और मैं सोचने लगता:

'कहीं वह मुझे औरत तो नहीं समझती?'

लेकिन असल में यह बात नहीं थी। जबसे हमारी दोस्ती हुई थी वह मेरे सामने मैली-कुचली पोशाक में कभी न आती थी। उसके ब्लाउज के बटन लगे हुए होते, बगलों के नीचे फटी हुई आस्तीनों की सिलाई की हुई होती। यहां तक कि वह लम्बे मोजे भी पहन लिया करती थी। मेरे सामने वह दयापूर्ण मुस्कान अपने चेहरे पर बिखेरे आती और ऐलान करती:

'मैंने समोवार गर्म कर दिया है।'

अल्मारी के पीछे हम चाय पिया करते थे जहां उसकी एक छोटी चारपाई बिछी हुई होती थी। दो कुर्सियां, एक मेज और कपड़ा रखने की पुरानी बदनुमा अल्मारी जिसके नीचे की दराज बंद ही न होती थी। आते-जाते सोफिया की पिंडलियां उस दराज से अक्सर टकराती रहती थीं। और जब कहीं उसे वह जोर से लग जाती – और खाल छिल जाती – तो वह पांव को सहला-सहलाकर, मुंह बनाकर बुरा-भला कहने लगती थी :

'भोंदू कहीं की, मूर्खा! ऐसी ही जैसे सेम्योनोव है। थलथल, घृणित और मूर्ख! '

'तो क्या तुम्हारे ख्याल में मालिक मूर्ख है।'

उसने आश्चर्य प्रकट करते हुए अपने कंधे उठाये और उसके बड़े-बड़े कान भी साथ ही थिरकते हुए उठ गये।

'निश्चित रूप से।'

'क्यों ?'

'इसलिए कि वह है ! '

'नहीं, लेकिन क्यों ?'

अब चूंकि वह जवाब न दे सकी तो उसे गुस्सा आ गया :

'क्यों, क्यों इसलिए कि वह बेवकूफ है। हर तरफ से बेवकूफ है ! '

लेकिन एक दिन उसने मुझे समझाया और समझाते हुए कुछ नाराज-सी हो गयी:

'क्या तुम समझते हो, वह मेरे साथ रहता है ? बस दो बार वह मेरे साथ रहा। उन दिनों मैं वेश्यागृह में थी। लेकिन यहां ऐसी कोई बात नहीं है। मैं उसके घुटनों तक पर बैठती थी और वह मुझसे थोड़ी देर तक तो छेड़छाड़ करता और फिर कहता, 'भाग जाओ!' वह तो उन दोनों के साथ रहता है। मुझसे न मालूम वह चाहता क्या है ? उस दुकान से कोई आमदनी नहीं होती, मैं अच्छी दुकानदार भी नहीं और न ही मुझे यह पसन्द है। न जाने क्या मसलेहत है ? मैं पूछ लेती हूं कभी तो वह चीख पड़ता है, 'इससे तुम्हे काई मतलब नहीं! ' ऐसी-ऐसी हजारों बेवकूफियां गिन लो! '

आंखे बन्द किये हुए उसने अपना सिर हिलाया और उसका चेहरा बिल्कुल खाली-खाली सा लगा जैसे कि लाश का।

'उन दोनों को जानती हो तुम?'

'क्यों नहीं। जब वह पिये हुए होता है तो उनमें से किसी एक को मेरे यहां लाता है

और पागलों की नाईं चीखता है,' लगे एक उसके लाल-लाल मुंह पर! 'छोटी वाली को तो मैं हाथ नहीं लगाती, तरस आता है उस पर। वह हमेशा थर-थर कांपने लगती है। लेकिन दूसरी – उसे एक बार मैंने मारा था। मैं खुद भी नशे में थी और मैंने उसे मारा। मुझे फूटी आंख नहीं भाती वह! और फिर मेरी तबियत बड़ी खराब हो गयी। और मैंने उसके भी खूब निहट्टे मारे!'

अपने विचारों में वह गुम हो गयी, मूर्तिवत् अकड़ी हुई बैठी रही। फिर उसने धीरे-धीरे कहना शुरू किया:

'उसे मारने का मुझे जरा भी अफसोस नहीं ...सूअर कहीं का! लेकिन फिर भी वह धनवान है। अच्छा होता कि वह भिखारी या बीमार होता। मैं कहती हूं उससे, अरे मूर्ख! तुम इस तरह कैसे रह सकते हो? किसी-न-किसी तरह अच्छी जिन्दगी बसर करो। अब क्यों नहीं तुम किसी अच्छी औरत से शादी कर लेते कि बच्चे हों।'

'लेकिन वह तो शादीशुदा है।'

सोफिया ने कंधे सिकोड़ कर सादगी से कहा:

'उसने क्या किसी को जहर दे कर नहीं मारा? अपनी पत्नी को भी वह जहर दे सकता है। अब तो वह बेकार सी बुढ़िया है न! 'वह तो बिल्कुल पागल आदमी है। न वह कुछ चाहता ही है।'

मैंने उसे समझाना चाहा किसी को जहर देना अच्छी बात नहीं लेकिन उसने बड़े इत्मीनान और सुकून के साथ जवाब दिया:

'मगर यह तो होता ही रहता है।'

उसके कमरे की खिड़की में से गुलमेंहदी का पौधा दिखायी देता था खूब फूल आये हुए थे। एक दिन उसने बड़े गर्व से पूछा:

'कितना सुन्दर है यह सूरजमुखी?'

'हां, खासा है। लेकिन यह सूरजमुखी तो नहीं है।'

उसने अपना सिर हिला कर बहुत जोर से इन्कार कर दिया!

'नहीं, नहीं यह ठीक नहीं। मामूली फूल तो वही होता है जो छींट पर छपा होता है। लेकिन सूरजमुखी तो देवता का फूल होता है। सूर्य देवता का! ये सब सूरजमुखी के फूल होते हैं। फर्क सिर्फ रंगो का होता है। गुलाबी, नीले, लाल – सब रंगो की मुझे पहचान है।'

इस प्रकार के दिखावे भरे, सादे लेकिन असल में अजीब व बहुत ही गडमड लोगों के साथ जीवन बिताना मुझे दिन-ब-दिन असह्य मालूम होने लगा था। वास्तविकता एक भयानक स्वप्न बन कर रह गयी थी। किताबों में जो बातें पढ़ीं थी उनकी आब व ताब व उनकी सुन्दरता में और भी वृद्धि हो गयी थी। और वह सदियों से तारों की तरह आकाश में दूर से दूरतर होती जा रही थीं।

एक दिन मालिक ने मेरी आंखो में अपनी मंजरी आंख डालकर जो उस समय तपे हुए तांबे की तरह धुंधली हो रही थी, मुझसे बड़े उदास स्वर में पूछा:

'मैंने सुना है कि आजकल तुम छोटी दुकान में जाकर चाय पिया करते हो?'

'हां।'

'मेरा भी यही ख्याल था। संभल जाओ तो बेहतर है।'

वह मेरे पास बैठ गया और कुछ बेखुदी के आलम में बातें शुरू कर दीं। बोलते समय उसकी आंखें पुचकारी हुई बिल्ली की तरह जल्दी-जल्दी झपक रही थीं और वह होठों को इस तरह चाट रहा था मानों एक-एक शब्द का मजा ले रहा हो।

'लड़की क्या है टमाटर है क्यों? मुझसे पूछो, मैं बताऊं। वास्तव में वह भगवान की पथभ्रष्ट सृष्टि में से नहीं है। जैसी बातें वह मुझसे करती है कोई पादरी भी क्या करेगा। हां, हां जानबूझकर, उसकी परीक्षा लेने के लिए मैं उसे धमकाता हूं, डराता हूं। अरी पगली, मैं तुझे लातें मारकर निकाल दूंगा। लेकिन वह जर्रा बराबर भी तो परवाह नहीं करती, सच्ची बात कहने में जरा भी तो नहीं हिचकिचाती।'

'सच्चाई की तुम्हें क्या जरूरत है?'

बिना सत्य के जीवन अजीर्ण हो जाता है।' उसने विस्मयपूर्ण सादगी से कहा।

फिर उसने एक गहरी सांस ली और मुझे घूरकर देखा। चिड़चिड़े अन्दाज में मानो मुझसे क्रुद्ध होकर बोला:

'तुम शायद सोचते होगे जिन्दगी बड़ी सुखद चीज है।'

'नहीं तो, और विशेषकर तुम्हारे आसपास।'

'तुम्हारे आसपास! उसने मुंह चिढ़ाया और फिर देर तक मुंह फुलाये खामोश बैठा रहा। गर्दन का ढीला-ढाला मांस इस तरह लटक रहा था जैसे गर्मी के मारे हांफते हुए कुत्ते के जबड़े। कान झुक गये थे और निचला होंठ बेजान होकर छीछड़े की तरह लटक पड़ा था। आग के शोलों के प्रतिबिम्ब ने उसके दांतों में सुनहरी चमक पैदा कर दी थी।

'मूर्ख होते हैं वे जिन्हें जीवन सुखद नजर आता है। होशियार आदमी तो वोद्का पीता है। उसको तो आस्तीनें चढ़ाकर जिन्दगी से टक्कर लेनी होती है। मुझे देखो! कभी-कभी तो मैं रात भर पड़ा रहता हूं सारी रात पड़ा रहता हूं लेकिन कमबख्त एक जूं तक नहीं काटती मुझे। जब मैं मजदूर था तो जुएं भी बड़े शौक से मुझे काटा करती थीं। दौलत की निशानी होती हैं यह हमेशा! जैसे ही मैं साफ-सुथरा रहने लगा कि उन्होंने मेरा साथ छोड़ दिया। हर चीज मेरा साथ छोड़ रही है। बस केवल घटिया, सस्ती चीजें शेष हैं – औरतें! और वह तो बहुत दुखदाई और दुश्वार होती है।'

'और क्या तुम वहीं सत्य की खोज कर रहे हो?'

उसने झल्लाकर जवाब दिया:

'तुम समझते हो कि क्या वे तुम लोगों से कम चलती हुई हैं? तुम लोगों से? कुजिन ही को देखो, भगवान से डरता है और सच बातों की खबर देना उसको अच्छा लगता है। सोचता है कि शायद मैं उसका पारिश्रमिक दूंगा। मैं तो खुद ही सड़ी-बुसी चीजें अच्छे दामों बेच डालता हूं, समझे?'

फिर उसने आग की ओर ग्लानिपूर्वक संकेत किया और बोला:

'यगोर तो कुल्हाड़ी है। उल्लू की तरह बेवकूफ! तुम भी टांय-टांय करते फिरते हो और हर घड़ी इस घात में रहते हो कि जरा कोई मौका मिले और अपने किसी साथी की गर्दन

पर सवार हुए। तुम चाहते हो सब उसी तरह रहें-सहें जिस तरह तुम कहो। और मैं यह नहीं चाहता। खुद भगवान ने मुझे बीच मंझधार में छोड़ दिया और मानों कह दिया, 'जाओ मिस्टर सेम्योनोव, जैसे चाहो जिन्दगी बसर करो मैं दखल नहीं देता। मेरी बला से जहन्नुम में जाओ तुम!'

उसका संवलाया हुआ सुर्ख चेहरा भड़कते हुए शोलों की लपेट में दमक रहा था और पसीने में तर हो गया था। उसकी आंखें ठहर गई थीं। जैसे नींद आ गई हो और जबान में लड़खड़ाहट आ गई थी।

'लेकिन सोवका तो मुंह पर कहती है तुम आवारा की-सी जिन्दगी बसर कर रहे हो! आवारा की-सी? हां और नहीं तो क्या! तुम कोई भेड़िये या सुअर नहीं हो। ... तो फिर इन्सान जिये किस तरह मूर्खा? मुझे क्या पता? वह कहती है तुम खुद ही मालूम करो। तुम काफी होशियार हो, अब बनो मत कि मुझे मालूम नहीं – लो यह है सच्चाई! जिन्दगी इस तरह बसर नहीं की जाती। मुझे मालूम नहीं कि फिर दूसरा कौन-सा रास्ता है? यह है बिल्कुल सच! और तुम, तुम ...।'

उसने एक मोटी-सी गंदी गाली दी और फिर और भी ज्यादा तैश में आकर कहने लगा:

'मैं उसे सोवा[2] कहा करता हूं। दिन के समय तो वह बिल्कुल अन्धी मूर्खा-सी लगती है हालांकि रात के समय भी वह होती मूर्ख ही है। लेकिन रात के समय कम-से-कम वह चंचल और ठीक तो होती है।

उसके स्वर में स्नेह था और आवाज में वही मिठास मालूम होती था जो मैंने पहली बार सुअर के बच्चों से उसे बातें करते समय पाया था।

'तीन रख छोड़ी है मैंने।' अब फिर उसने अपनी गाथा शुरू की। एक तो गोश्त-पोस्त के आनन्द के लिए – नादिया घुंघराले बालों वाली। शोखी और चंचलता तो उसमें कूट-कूटकर भरी है। देखने में यों लगता है जैसे वह निहायत ही डरपोक है लेकिन दरअसल है वह बिल्कुल निर्भीक। न तो भय को वह जाने कि किस चिड़िया का नाम है और न यह जाने कि अन्तःकरण क्या बला है। – बस लोभ-लिप्सा उसका अन्तःकरण है। जोंक है वह जोंक! कोई भिक्षु या साधु-संत उसे देखें तो दंग रह जाएं। दूसरी कुरोचकीना है मानसिक व्यभिचार के लिए। इसके अलावा और कोई नाम उसके लिए जंचता ही नहीं। उसका नाम तो है गलाशा, ग्लाफिरा; लेकिन कहना उसको पड़ेगा कुरोचकीना हो। ... बस यही उसकी विशेषता है। उसे सताने में मुझे बड़ा मजा आता है। मैं कहता हूं, करे जाओ पूजा, खूब कर लो, जलाए जाओ दिये, इन मूर्तियों पर लेकिन भूत तुम्हारी ही ताक में बैठे हैं। भूतों से उसे बड़ा डर लगता है, घिग्घी बंध जाती है उसकी। डर के मारे पर खोटे सिक्के खूब चलती है चुपचाप। अभी कल की बात है एक खोटा सिक्का उसने मुझे चेप दिया था – तीन रूबल का था वह और उससे पहले एक पांच रूबल वाला थमा दिया था उसने। मैं पूछता हूं कहां से आते हैं तुम्हारे पास? तो कहती है कोई आंखों में धूल झोंककर चलता बना। झूठी है वह। जालसाजों की किसी टोली से मिलीभगत है मालूम होता है शायद कमीशन तय कर लिया होगा। लेकिन भई है बड़ी घुन्नी। जब तक उसे गुस्सा न दिला दो, उसके साथ मजा नहीं आता। फिर तो उसका गरम होना देखो। कभी-कभी

2 रूसी भाषा में सोवा (सोव का संक्षिप्त) का अर्थ उल्लू होता है। – अनुवादक

तो मुझे भी फुरहरी आ जाती है। उसका बस चले तो आदमी का गला घोंटकर दम निकाल दे। एक तकिये से दम घोंट सकती है, हां-हां, सिर्फ एक तकिये से। और जब काम तमाम कर चुकेगी तो दुआ मांगेगी। हे भगवान मुझे क्षमा कर दो। तुम बड़े दयालु हो भगवान। हां-हां, वह ऐसा ही करती है।'

शोले और भी ज्यादा तेज हो गये थे, गर्मी खूब बढ़ गई थी। आग की रोशनी में उसकी बदनुमा और बदसूरत शक्ल और भी साफ नजर आने लगी थी जो घृणापूर्ण होने के साथ दुखप्रद भी थी। लपट से बचने के लिए उसने बल खाने शुरू कर दिए थे, पसीना बह निकला था और सांस के साथ सड़ी हुई, चिकटी बदबू निकल रही थी जैसे कि गर्मियों में गंदे नालों से भभक उठती है। जी चाहता था कि खूब ही तो उसे सुनाई जाएं, मरम्मत की जाए, गुस्सा दिलाया जाए ताकि वह शख्स किसी और अन्दाज में बातचीत करे। लेकिन इसके साथ ही वह उन घृणित बातों में जादूभरी दिलचस्पी लेने पर मजबूर भी कर देता। उन बातों से गंदगी टपकी पड़ती थी। लेकिन उनमें एक दर्द और एक प्रकार की चुभन का भी एहसास पाया जाता था।

'झूठ सब बोलते हैं – मूर्ख अपनी मूर्खतावश और चालाक अपनी मक्कारी के लिए। लेकिन सोवका सच बोलती है ... सच बोलती है ... अपने लिए नहीं, अपनी आत्मा के बहिष्कार के लिए भी नहीं, आत्मा, छि: बकवास! बस सच बोलती है, इसलिए कि वह सच बोलना चाहती है। मैंने सुना था कि विद्यार्थी सत्य की खोज करते हैं। इसलिए मैंने शराबखाने झांके जहां वे मस्त होकर मदिरा-पान करते हैं। कुछ भी नहीं। वे सब मनघड़न्त किस्से हैं। वे सब शराबी होते हैं, हां-हां, शराबी।'

अब वह बड़बड़ाने लगा था। मेरी मौजूदगी का उसे जरा भी भान न था। मानों मैं उसके पास बैठा हुआ ही नहीं हूं।

'कुछ लोगों के लिए सच्चाई मानो... मानो ऐसी होती है जैसे कि वह किसी ऊंचे घराने की सुन्दरी के प्रेम में बंध गया हो। एक ही नजर में जिन्दगी भर के लिए उसी का होकर रह गया हो और उस तक पहुंचा न जा सके जैसे उसे कहीं सपने में देखा हो।'

कोई कह नहीं सकता था कि मालिक नशे में है या होश में। शायद तबियत खराब हो। उसकी जबान और होंठ सुस्त थे जैसे कि वह उन संगीन शब्दों को सीधा करने का यत्न कर रहा हो। जो उसका दिमाग गढ़ रहा था। उस वक्त वह कुछ घृणित जान पड़ता था और मैं ऊंघ-ऊंघकर शोलों को घूर रहा था। अब उसकी भर्राई हुई आवाज मुझे सुनाई नहीं दे रही थी।

लकड़िया गीली थीं और तड़ख रही थीं, सनसनाकर झाग उगल रही थीं, नीला और बोझिल धुआं लगातार निकल रहा था। हल्के लाल रंग की लपटें लकड़ी के गुद्दों के इर्द-गिर्द लिपट गई थीं और भयावह आकृति बनाकर भड़क रही थीं। सांप की जबान की तरह नीची मेहराब की ईंटें चाट रही थीं। और तंदूर के मुंह की तरफ मुड़े हुए और दबे हुए थे ओर धुआं घनघोर घटा की तरह – काला और बोझिल धुआं – उन्हें छिपाये ले रहा था।

'बड़बड़िये छि:!'

'जी?'
'जानते हो मुझे तुम्हारी किस बात पर आश्चर्य हुआ?'
'बताया तो था तुमने एक बार।'
'हां।'
अब फिर वह खामोश हो गया और फिर एक भिखमंगे के-से शिकायत भरे स्वर में कहा:
'तुम्हें इससे क्या कि आया मुझे सर्दी लग जाती और मैं मर जाता या न मरता तुमने तो यों ही कह दिया था बिना सोचे-समझे। महज मजाक के लिए?'
'तुम अब जाकर सो जाओ तो अच्छा है क्यों?'
चुपके-चुपके मुस्कराते हुए उसने अपना सिर हिलाया और इसी शिकायती अंदाज से बोला:
'लो यह सुनो! मैंने तो इसके साथ भलाई की और यह है कि मुझे ही भगा रहा है।'
यह पहला मौका था कि हमारे मालिक ने सहानुभूति प्रकट की थी और मैं उसकी हमदर्दी की सच्चाई या बनावट की परीक्षा करना चाहता था।
मैंने कंटकपूर्ण मार्ग पर चलते हुए कह डाला:
'क्यों न नन्हें याश्का की कुछ मदद कर दो।'
मालिक ने भारीपन से अपने कंधे सिकोड़े और खामोश रहा।
इस बातचीत से दो-तीन दिन पहले झुनझुना बेकरी में गिर पड़ा था। उसके सिर के बाल सब जल गए थे और गंजी टांट निकल आई थीं आंखों की तरह उसका सिर भी बिलकुल शफ्फाफ हो गया था। अस्पताल में रहने से उसकी आंखें पहले से भी चमकीली और साफ हो गई थीं। उसका दागदार नन्हा-सा चेहरा दुबला गया था। नाक और भी ज्यादा ठण्डी और ऊपर को उठ गई थी। बच्चे के मुंह पर कुछ स्वप्निल मुस्कान खेलने लगी थी। कारखाने में वह कुछ अजीब चाल से चल रहा था मानों अभी लड़खड़ाकर गिरने वाला हो। उसको डर लगा रहता था कि कहीं कमीज मैली न हो जाए। और अपने हाथ साफ देखकर उसको शायद उलझन हो रही थी क्योंकि वह उन्हें अपनी नई पतलून की जेबों में हर वक्त ठूंसे रहता।
'यह सिंगार तुम्हारा किसने कर दिया?' नानबाईयों ने पूछा।
'मिथ जूलिया ने।' उसने अपनी नन्ही-सी मद्धम आवाज़ में जवाब दिया और फिर चलते-चलते रुककर और अपना बायां हाथ जेब से निकालकर हवा में नचाते हुए कहा:
'डाक्टरनी है वह! कर्नल की बेटी। तुर्कों ने उसके पिता की टांगें काट डालीं – घुटनों तक, मैंने भी उसको देखा है। थाफ गंजी टांट है उसकी। और वे कहते रहते हैं – कुछ नहीं, कुछ नहीं। उससे क्या होता है।'
'वाह, वाह! भाइयों, अस्पताल में तो बड़ा मजा है। और पूछो भई और कुछ पूछो।' दाहिने हाथ में तुम्हारे क्या है?'
'कुछ नहीं।' उसने झट से जवाब दिया और बेकसी के आलम में उसकी निगाहें चारों तरफ जा रही थीं।

'झूठ! लाओ, लाओ हमें भी तो दिखाओ।'
बेचारा घबरा गया। उसने अपना हाथ जेब में और भी अन्दर ठूंस लिया। और खुद भी दुहरा हो गया। अब तो लोगों को और भी उत्सुकता हुई और जेबों की तलाशी लेने का फैसला हुआ। सबने लपककर उसे दबोच लिया और थोड़ी देर की कशमकश के बाद उसकी जेब से बीस कोपेक का एक नया और चमकदार सिक्का तथा एक मूर्ति 'मां' व 'बच्चे' की निकली। सिक्का तो फौरन ही याश्का को वापस कर दिया गया और मूर्ति हाथों हाथ घूमने लगी। पहले तो बच्चा अपना नन्हा हाथ फैलाए और खिंची हुई मुस्कान के साथ मूर्ति वापस मांगता रहा। फिर उसे गुस्सा आ गया और फिर रफ्ता-रफ्ता वह भी जाता रहा। जब सैनिक मिलोव ने मूर्ति वापस की तो याश्का उसे लापरवाही से जेब में डालकर कहीं गायब हो गया। रात को खाने के बाद वह उदास व मलिन चेहरा लिए जगह-जगह गीले आटे के लोदे चिपकाये और खुश्क आटे का उबटन मले मेरे पास आया। लेकिन उसकी वह पुरानी जिंदादिली कहीं नजर न आई।
'अच्छा तो लाओ देखें क्या भेंट लाये हो?'
उसकी नीली आंखें कहीं और देख रही थीं।
'मेरे पास नहीं है!'
'फिर कहां गया?'
'खो गया।'
'सचमुच खो गया क्या?'
याश्का ने एक लम्बी सांस ली।
'वह कैसे?'
'फेंक दिया।' उसने मरी हुई आवाज में कहा।
मेरी शक्ल देखकर वह समझ गया कि मुझे विश्वास नहीं हुआ, इसलिए उसने अपने सीने पर क्रास बनाते हुए कहा:
'भगवान मेरा साक्षी है। तुमसे मैं झूठ हर्गिज नहीं बोलूंगा। उसे मैंने आग में फेंक दिया। पहले तो वह लाख की तरह पकने लगा, फिर जलकर खाक हो गया।'
फिर वह एकदम सिसकियां ले-लेकर रोने लगा और मेरे दामन में मुंह छिपाकर और हिचकियां ले-लेकर कहने लगा:
'थूअर कहीं का नहीच! ... हमेशा हर चीज झपट लेता है ... वह ... फौजी ने ऐसी उंगलियां गड़ाई कि उथकी एक किरच उखड़ गई। गल जायें उंगलियां इथकी। मिथ जूलिया ने जब वह मूर्ति मुझे दी थी तो पहले उथको चूमा था और बाद में मुझे भी कहा था, 'लो यह तुम्हारी है। यह तुम्हारे ... काम आयेगी।'
मारे सिसकियों के जी उसका हलकान हो गया और बड़ी देर तक मैं उसे चुप न कर सका। मैं नहीं चाहता था कि बेकरी के नानबाई उसको रोता देख लें और उसके दर्दनाक माने समझ जाएं।
अचानक मालिक ने पूछा, 'वह याश्का वाली क्या बात थी?'
'वह बहुत कमजोर है और बेकरी में तो वह वैसे भी काम करने योग्य नहीं है। उसे

तो कहीं दुकान पर काम करने को लगा दिया जाय।'

मालिक किसी सोच में पड़ गया और होंठ चबाते हुए बड़ी गम्भीरता के साथ बोला: 'अगर कमजोर है तो दुकान पर भी किस काम का? वहां ठण्ड है उसे सर्दी लग जायेगी और गारास्का भी उससे दुर्व्यवहार करेगी। सोवका वाली दुकान पर भेज दो तो अच्छा है। वह है भी फूहड़। सारी दुकान धूल में अटी रहती है। वहां जाकर उसका हाथ बटाए। यह कोई सख्त काम नहीं है।'

तंदूर के अन्दर अंगारों के सुनहरी ढेर पर नजर डालकर उसने गढ़े में से पांव निकाल लिये।

'राख झाड़ो, बस अब वक्त हो गया।'

मैं लम्बी छड़ तंदूर में डालकर राख झाड़ने लगा और उसने धीरे-धीरे जैसे ख्वाब में बड़बड़ाते हुए कहा:

'तुम भी हो बुद्धू! देखो तो सही तकदीर खड़ी तुम्हारी राह देख रही है। जो चाहे बन जाओ। और तुम हो कि ... ऊंह ... हमारी बला से, अजीब आदमी है।'

पुराने, टूटे-फूटे मकानों के गहरे सायों वाली संकीर्ण एवं अंधियारी गलियों में मार्ग का सूर्य बड़ी सतर्कता के साथ जरा नाक-भौं चढ़ाकर झांक रहा था। सुबह-सबेरे से रात गये तक शहर के बीचोंबीच अंधियारे तहखाने में कैद रहने के कारण हमें वसंतागमन का अनुभव सील पैदा हो जाने से होता, जो दिन-ब-दिन बढ़ती चली जाती।

दोपहर के बाद कोई बीस मिनट के लिए सूर्य की एक किरण कारखाने की आखिरी खिड़की में से अन्दर झांकती ओर मुद्दतों का मैला व गंदा शीशा कुछ देर के लिए खूबसूरत और चमकदार दिखाई देने लगता। छोटे से रोशनदान में से बिना पहियों की गाड़ी चलाने वाले घोड़ों की टापों की आवाज सुनाई देने लगती क्योंकि अब बर्फ पिघलने से सड़क के पत्थर उभर आते। बाजार का कोलाहल भी अब पहले से तेज और ज्यादा सुनाई देता।

बिस्कुटों वाली बेकरी में गानों की आवाज लगातार गूंजती रहती। लेकिन अब उनमें जाड़ों की-सी बात न रही थी। समूहगान मंद पड़ गये, हर व्यक्ति अपनी पसन्द के गीत अपनी-अपनी पसन्द की लय में गाने लगता। बार-बार धुनें व तर्जें बदली जातीं, मानों बसन्त के उस दिन की आत्मा के साथ एक सुर होने वाला कोई गीत ही न मिल रहा हो।

छोड़कर मुझको विरह में प्रियतमे

तंदूर के पास से बंजारे ने गाना शुरू किया और वानुक ने अगली पंक्ति मानो बड़े यत्न से पूरी की:

मेरे चरणों में पड़ा है मेरा यह निराश जीवन

गीत उसने अधूरा ही छोड़ दिया और जिस सुर में गा रहा था उसी सुर में बोला: 'दस दिन और है फिर हमारे गांव में लोग हल चलाना शुरू कर देंगे'

शातुनोव अभी आटा गूंधकर उठा था। उसके नग्न शरीर पर पसीना चमक रहा था, और अधखुले नेत्रों से खिड़की को निर्निमेष देखते हुए वह अपने बालों को छाल के एक फीते से बांध रहा था।

उसकी उदास वाणी बड़े मन्द स्वर में गरजी:

भगवान के ये नन्हें, ये कोमल यात्री अग्रसर हैं,
बोलते कुछ भी नहीं चुपचाप चले जा रहे हैं।

आर्तेम एक कोने में बैठी फटी हुई बोरियों की मरम्मत कर रहा था और सुरिकोव की एक कविता-जो उसे कंठाग्र थी वह जनानी आवाज में खांस-खासकर गाता जा रहा था:

तू हमारे अभिन्न हृदय मित्र
लकड़ी के संदूक में पड़ा चुपचाप
सिर से पैर तक कफन में ढंका
पीला चेहरा लिए पड़ा बेहोश

'हकथू!' कुजिन ने उसकी तरफ थूकते हुए कहा, 'क्या निकाला है गीत कब्र में से खोदकर ... उल्लू कहीं का, गधा ... अरे शैतान! हजार बार तुमसे कहा।'

'हे भगवान!' बंजारा गाना अधूरा छोड़कर चीखा।

'मजा आने वाला है इस दुनिया में अब!'

अपने पांव से ताल देते हुए उसने ऊंचे सुरों में गीत शुरू किया:

एक मदमस्त सुन्दरी आ रही है
दूर ही से मुस्काती फूल बरसाती हुई
यह वही गुड़िया तो है जिस पर
मेरा सर्वस्व न्यौछावर है आज

अगली पंक्ति उलानोव गाता है:

है वही गंभीर मेरी प्यारी ऐन
जिसने सारे कबीले को वश में किया
जब यहां आता है मौसम बसंत का
वह हरेक चीज में जादू भर देती है

इन क्रमहीन गीतों और छीना-झपटी की बातचीत में बसंत की मस्तियों और नवीनता की तड़पती हुई उम्मीदों का अनुभव होता। भांति-भांति के गीतों और तरह-तरह के गानों का अन्तहीन क्रम जारी रहा। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि ये सब लोग किसी समूहगान का अभ्यास कर रहे हों। जिस बेकरी में मैं काम कर रहा था वहां विविध प्रकार की इन आवाज़ों का मानों एक धारा बहता हुआ आ रहा था। सब आवाजें एक-दूसरे से कितनी भिन्न थीं किन्तु अपने लुभा लेने वाले आकर्षण में कितनी समान थीं।

और चूंकि मेरे मस्तिष्क पर भी बहार छाई हुई थी इसलिए मेरी कल्पना में एक ऐसी स्त्री थी जो पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु से अपार प्रेम करती थी अत: मैंने यास्का को सम्बोधित करते हुए बुलन्द आवाज में कहा:

है वही गम्भीर ...

शातुनोव ने मैली-कुचैली खिड़की की तरफ से मुंह मोड़ लिया और बंजारे के जवाब को अपनी पाटदार आवाज में गुम करते हुए गाने लगा:

और मंजिल सख्त ...

तख्ते की दीवार की दरार में से मालिक के कमरे में से बूढ़ी मालकिन की आपत्तिपूर्ण और भिखारिन की-सी आवाज आई:

'वासिली प्यारे, वासिली जानी!'

एक हफ्ते से भी ज्यादा हो गया था कि मालिक बुरी तरह पी रहा था। लेकिन अब भी मदिरा-पान का यह दौरा थमता नजर न आता था। नशे में वह इस हद तक चूर हो गया था कि जबान से एक शब्द भी स्पष्ट नहीं निकलता था। हल्कों में उभरी हुई आंखें धुंधली और अप्रतिभ-सी हो गई थीं क्योंकि वह अन्धे आदमी की नाईं तनकर और सीधा होकर चलने लगा था। उसका सारा जिस्म इस तरह फूला हुआ और नर्म था जैसे अभी-अभी नदी में से घसीटकर निकाला गया हो। उसके कान पहले से बड़े लगने लगे थे और खड़े हुए मालूम देते थे। होंठ पिचक गये थे और चेहरा वैसे ही इतना भयंकर हो गया था कि खुले हुए जबड़ों में से नजर आते हुए दांत फालतू मालूम देते थे। कभी-कभी वह अपनी छोटी-छोटी टांगों को लड़खड़ाता ख्वामख्वाह भारी-भारी कदम रखता हुआ अपने कमरे से बाहर आता और जो भी कोई उसके रास्ते में आता उसी पर बुरी तरह ढह पड़ता। और अपने अप्रतिम नेत्रों से उसे ऐसे भयानक ढंग से घूरता कि मतली आने लगती। उसके पीछे वोदका से भरी हुई एक सुराही और एक गिलास अपने बड़े-बड़े पंजों में दबोच और नशे में उसी कद्र मदमस्त येगोर आता उसके चेचक भरे चेहरे पर लाल और सफेद धब्बे होते। बोझिल आंखें अधखुली होतीं और मुंह इस तरह खुला होता जैसे कि किसी ने अपने जिस्म पर चहका लगा लिया हो और सांस लेने के लिए बेदम होकर मुंह फाड़ रखा हो।

मुंह खोले बिना ही वह मुंह ही मुंह में बड़बड़ाता।'

हटो, हटो रास्ता दो। मालिक आ रहा है।'

और सबसे आखिर में बूढ़ी मालकिन सिर झुकाए आती। उसकी आंखों से पानी इस कदर रिसता होता मानो अब फौव्वारा छूटा। और जो ट्रे उसके हाथ में है उसको भरना शुरू किया। ट्रे के अन्दर रखी हुई नीली रकाबियों में मछली के कबाब और इसी किस्म के खाद्य बिखरे हुए होते।

कारखाने पर मौत का-सा सन्नाटा छा गया था। मालूम होता था कि यहां दम घोंट रात ने डेरे डाल दिए हैं। खामोश मतवालों की यह टुकड़ी अपने पीछे तीखी और असह्य दुर्गन्ध के भभके छोड़ जाती। उन्हें देखकर भय और ईर्ष्या मिश्रित भाव उत्पन्न होते और जब वे दरवाजे में से अदृश्य हो जाते तो दो-तीन मिनट तक कारखाने में भयावह निस्तब्धता छाई रहती।

फिर दबी-दबी आवाज में व्यंग्य कसे जाने लगते:

'पी-पीकर मर जायेगा।'

'वह? तुम्हारे जीते जी तो मरता नहीं'

'ऐ लड़को! तुमने देखा कितने कबाब थे?'

'खुश्बू बड़े मजे की थी ...।'

'अपने को तबाह कर रहा है वासिली सेम्योनिच ...।'

'कितनी बोतलें पी जाता है गिने तो मजा आये!'

'अरे तुम तो उतनी एक महीने में भी न पी सको।'

'तुम क्या जानो?' सैनिक मिलोव ने कहा। उसकी आवाज़ में यद्यपि विनम्रता थी पर साथ ही अपनी शक्ति पर विश्वास भी। जरा आजमा कर देखो। एक महीना अपने पास से पिलाकर देख लो।'

'अरे दीवाने हो जाओगे।'

'चलो अच्छा है। जब तक दीवानगिरी रहेगी तब तक की मौंज ही सही।'

मालिक को देखने के लिए मैं कई बार उठकर बाहर बरामदे में गया। येगोर ने बाहर आंगन में एक पुराना पीपा उलटकर धूप में रख दिया था जो दूर से ताबूत मालूम होता था। मालिक नंगे सिर था और बीच में बैठ गया था। उसके दाहिनी तरफ कबाबों वगैरह की ट्रे रखी हुई थी और बाईं तरफ सुराही। मालकिन भी इठलाकर नीचे के एक कोने में बैठ गई। येगोर मालिक के पीछे उसकी बगलों में हाथ डाले और पीठ को अपने घुटनों का सहारा दिये उसको सम्हाले हुए खड़ा था। खुद मालिक ने अपना सारा बोझ पीछे की तरफ डाल रखा था। और बड़ी देर से पाला खाये हुए पीले आकाश को टिकटिकी लगाए घूर रहा था।

येगो ... क्या तुम सांस ले रहे हो?'

'जी हां।'

'क्या हर सांस भगवान की महिमा प्रकट नहीं करती? हम पूछते हैं नहीं प्रकट करती क्या?'

'नहीं, नहीं, जरूर करती है।'

'ग्लास भरो।'

मालकिन ने एक भयभीत मुर्गी की तरह फड़फड़ाते हुए वोद्का का एक गिलास अपने पति के हाथ में थमा दिया। उसने गिलास अपने मुंह में पैवस्त कर लिया और चुसकियां ले-लेकर पीने लगा। मालकिन ने बड़ी फुर्ती के साथ क्रास के छोटे-छोटे चिन्ह बनाये और होंठ इस तरह सिकोड़े जैसे चुम्बन लेने के लिए। यह दृश्य दुखद भी था और हास्यास्पद भी।

फिर उसने आहिस्ता-आहिस्ता मिनमिनाना शुरू किया:

'येगोर प्यारे! हाय इस तरह तो यह शराब इनकी जान ले लेगी।'

'तुम मत घबराओ मां। भगवान की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता।' येगोर ने ऐसी आवाज़ में कहा जैसे मूर्छा में हो।

वसन्त ऋतु का सूरज बड़ी आव व ताव में चमक रहा था। बाहर गढ़ों में पानी की सतह और पत्थरों का प्रतिबिम्ब चमचमा रहा था।

एक दिन मालिक ने आकाश और मकानों की छत जांचते हुए इतने जोर की झोंकी

ली कि औंधे मुंह गिरते-गिरते बचा फिर संभलकर पूछा:

'यह किसका दिन है?'

'भगवान का।' येगोर ने बड़ी कठिनता से उत्तर दिया। क्योंकि अभी वह मालिक को गिरते-गिरते बचा ही रहा था। सेम्योनोव ने अपनी टांग दिखाते हुए पूछा:

'यह टांग किसकी है?'

'तुम्हारी'

'झूठा। मैं किसका हूं?'

'सेम्योनोव का।'

'झूठा!'

'भगवान का।'

'ह: ह: ह:।'

मालिक ने पांव उठाया और कीचड़ में जोर का छपका दिया। कीचड़ की छींटें उड़कर उसके सारे चेहरे और सीने पर आईं।

'येगोरी' बुढ़िया गुनगुनाई।

येगोर ने उंगली से इशारा करते हुए कहा, 'मैं मालिक की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता मां।'

मालिक ने आंखें झपकाते हुए और अपने चेहरे से कीचड़ की छींटें पोंछने की परवाह किये बिना ही पूछा:

'क्या उसकी इच्छा के बिना एक बाल भी नहीं गिर सकता?'

'हां अगर उस परम पिता की इच्छा न हो तो।'

'लाओ इधर लाओ।'

येगोर ने अपने झबरे बालों वाला सिर मालिक के आगे झुका दिया। मालिक ने उस कोसेक के घुंघराले बालों को एक गुच्छा अपनी मुट्ठी में दबोचकर कई बाल नोच लिये। रोशनी में उन्हें बड़ी गौर से देखकर अपना हाथ येगोर के सामने कर दिया।

'छिपा लो इन्हें कहीं गिर न पड़े।'

येगोर ने सावधानी से तमाम बाल अपने मालिक की मोटी-मोटी उंगलियों में से चुन लिए और हथेली पर रखकर दोनों हाथों को मलकर उनकी एक गोली-सी बना ली और अपनी ढीली-ढीली वास्कट की जेब की तह में कहीं ठूंस दी। उसके चेहरे को देखकर हमेशा ही से ऐसा मालूम होता था जैसे लकड़ी की तलाशी हुई कोई मूर्ति है। उसकी आंखें मुर्दा थीं। जब वह टटोल-टटोलकर कंपकंपाते हुए एक-एक चीज देखता तो पता चलता कि पीने-पिलाने के मामले में वह और भी बदतर है।

'होशियारी से रखना।' मालिक हाथ का इशारा करते हुए बड़बड़ाया।

'हर बात के लिए उत्तरदायी होना पड़ता है। हरेक बात के लिए।'

मालूम होता था कि वे ये सब हरकतें पहले भी कर चुके हैं। उनके सारे क्रिया-कलापों में एक यांत्रिकता नजर आती थी। ऐसा लगता था कि मालकिन को उससे कोई भी दिलचस्पी नहीं है सिर्फ उसके काले और लाल होंठ निरन्तर हिल रहे थे।

'गाओ!' सहसा मालिक की भर्राई हुई आवाज आई।

'येगोर ने अपनी टोपी पीछे खिसका ली और बड़ा ही भयावना चेहरा बना लिया। और मालिक के पास बैठते हुए मोटी आवाज में गाना शुरू किया:

देखो लड़के आ रहे हैं डान के ...

मालिक ने अपना हाथ फैला दिया जैसे कोई भिखारी भीख मांग रहा हो।

हो तरुण कोसेक तुम हो शूर-वार ...

मालिक ने अपना सिर उठाया और हुंकारने लगा। और उसके भयावने अप्रतिभ मुख पर बहते हुए आंसुओं की लड़ियां देखकर ऐसा जान पड़ता था कि बस अब वह पिघलने ही वाला है।

इन्हीं तमाशों के दौरान में एक बार ओसिप ने जो मेरे पास ही बरामदे में खड़ा था, आहिस्ता से मुझसे पूछा:

'देखा कुछ?'

'अच्छा फिर?'

उसने मेरी ओर देखा और फिर मुस्कराने लगा। यह मुस्कान बड़ी दयनीय और निराशाजनक थी। कुछ दिनों से वह बड़ा ही निढाल दिखाई देने लगा था। उसकी मंगोलियन आंखें मालूम होता था जैसे बड़ी हो गई हैं।

'हैं, यह क्या?'

ओसिप ने झुककर मेरे कान में कहा:

'मालदार है, क्यों है ना? सुख चाहिए? लो यह है सुख। याद है वह ...

जब मालिक का शराबनोशी का दौर चल रहा होता तो क्लर्क साश्का भी कारखाने में इस तरह लड़खड़ाता फिरता जैसे कि वह भी नशे में हो। उसकी आंखें थरथराती और झपकती रहतीं। हाथ लटकते रहते जैसे टूट गये हों। और उसकी सुर्ख लटें चपचपाती हुई माथे पर थिरकती रहतीं। साश्का के चौट्टपन के बारे में कारखाने में हरेक कोई खुले बन्दों बातें करता और स्वीकार सूचक मुस्कराहट से उसका स्वागत करता।

कुजिन तो और भी चिकनी-चुपड़ी बातें मिलाकर क्लर्क के गुण गाता।

'अरे वह? वह तो बाज की तरह है बाज की तरह। और देख लेना यह हमारा अलेक्जान्द्र पेत्रीव कितनी ऊंची उड़ान मारता है लिख के रख लो यह बात।'

हर शख्स ने अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार चोरी की। चोरी की और वह भी बड़ी शान व लापरवाही के साथ। और यह आमदनी फौरन शराबखोरी पर खर्च हो गई। तीनों की तीनों बेकरियां नशे में मस्त थीं। ऊपरी काम करने वाले छोकरों को जब शराबखानों से वोद्का लेने भेजा जाता तो वे भी कुछ बिस्कुट अपनी कमीजों में छिपाकर ले जाते और उनके बदले में कहीं से मिठाई की गोलियां ले आते।

'इस तरह से तुम लोग सेम्योनोव का जल्दी ही दीवाला पीट दोगे।' मैंने एक दिन बंजारे से कहा। वह अपने खूबसूरत सिर को हिलाते हुए बोला:

'अरे भैया, मेरे हर रूबल के पीछे वह तो 36 कोपेक कमाता है।'

वह तो इस तरह बातें करने लगा जैसे उसे अपने मालिक के कारोबार का पूरा-पूरा

और ठीक-ठीक ज्ञान हो।

मैंने कहकहा लगाया। पाशा ने मुझे इस तरह घूरा जैसे उसे मेरा कहकहा अच्छा न लगा हो और फिर मुंह बनाकर बोला:

'तुम्हें तो छोटी-मोटी बातों की फिक्र हो जाती है। यह क्या हो गया है तुम्हें?'

'अरे भई, फ्रिक हो जाने की बात नहीं। लेकिन यहां की गड़बड़ मेरी समझ में तो खांक नहीं आती।'

'अरे भई जब गड़बड़ी है तो फिर समझ में क्या आयेगी?' शातुनोव ने विस्मित होकर कहा। सारा कारखाना हमारी बातचीत बड़ी गौर से सुन रहा था।

'तुम ही मालिक की बड़ाई करते हो कि बड़ा होशियार आदमी है। इतना बड़ा कारोबार संभाले हुए है। केवल तुम्हारी मेहनत के बल पर, समझे? लेकिन फिर भी तुम्ही हर मुमकिन कोशिश उसे तबाह करने की कर रहे हो।'

कई आवाज़ों ने एक साथ जवाब दिया:

'उसे तबाह करना असम्भव है!'

'जो हाथ लगे हड़प कर जाओ। बस यही बेहतर है!'

'हम तो खुलकर सांस ही उस घड़ी ले सकते हैं जब वह शराब के नशे में धुत्त हो।'

मेरी बातचीत का साश्का को फौरन पता चल गया और वह लपका हुआ बेकरी में आया। वह हल्के कत्थई रंग का सूट पहने हुए बड़ा जंच रहा था। दांत निकालकर गुर्राते हुए बोला:

'मेरी नौकरी पर दांत हैं तुम्हारे, क्यों? कोई डर नहीं। हो तो तुम बड़े चालाक पर अभी कच्चे हो ज़रा।'

हर शख्स भूखे शेर की तरह इस ताक में था कि उस पर टूट पड़े और उससे एक झड़प हो जाय। साश्का मुस्तैद तो था पर साथ ही सावधान भी। उसकी निरंतर छेड़छाड़ और व्यंग्य से तंग आकर एक दिन मैंने उससे साफ कह दिया था कि वह अपनी इन हरकतों से बाज आ जायें वरना मैं अच्छी तरह मरम्मत कर दूंगा। एक बार छुट्टी के दिन शाम के वक्त का जिक्र है। सब लोग चले गये थे। मैं और वह आंगन में अकेले रह गये।

'आ जाओ तो फिर!' उसने अपना कोट उतार कर बर्फ पर फेंक दिया और ललकार कर कहा। आस्तीनें चढ़ाईं और लड़ने को तैयार हो गया। हो जाये आज। मुंह पर मारने की नहीं है बस सिर्फ बदन पर। यह मुंह तो मुझे कारखाने के लिए चाहिए तुम तो जानते ही हो।'

और अन्त में हारा हुआ साश्का ही मुझसे गिड़गिड़ाकर कह रहा था, 'देखना मेरे अच्छे भैया, किसी और से मत कहना कि तुम मुझसे ज्यादा ताकतवर हो। मैं तुम्हारा बड़ा आभारी हूंगा। तुम तो यहां पर अस्थायी रूप से काम कर रहे हो – उड़ती चिड़िया हो – आज यहां हो कल कहीं और चले जाओगे। लेकिन मुझे तो इन्हीं लोगों के साथ रहना है। समझ गये मेरा मतलब? खूब! धन्यवाद! चलो आओ अन्दर चलकर एक प्याला चाय का पिएं।'

उसके छोटे-से कमरे में हम दोनों किवाड़ बन्द किये बैठे चाय पी रहे थे तो वह एक-एक शब्द जमा-जमाकर और समझा-समझाकर कह रहा था:

'अरे यार तो ... हां यह तो बिल्कुल ठीक है जरा यों समझ लो कि हाथ की सफाई खूब जानता हूं। भई, मैं भी इन्सान, तुम भी इन्सान। ठण्डे दिल से तमाम हालात पर गौर तो करो।' और मेज पर झुककर उसने जोर देते हुए इस अन्दाज में कहा जैसे गीत गा रहा हो। उसकी आंखें पता दे रही थीं कि वह चोट खाया हुआ है।

'क्या सेम्योनोव से भी बुरा हूं? उससे कम चालाक हूं? क्या मैं नौजवान नहीं, खूबसूरत नहीं, चुस्त व चालाक नहीं? अरे मुझे कहीं भी पांव टिकाने को मौका दे दो। कोई बहुत ही छोटा-सा कारोबार मेरे सुपुर्द कर दो। फिर मैं सब कुछ संभाल लूंगा। दिखा दूंगा तुमको कि मैं क्या हूं! और देखकर अगर मुंह चाटते न रह जाओ तो मुझसे कहना। मेरी यह शक्ल व सूरत है, क्या इस पर भी मैं किसी धनवान विधवा से शादी नहीं कर सकता? क्यों? या किसी तरुण श्रीमंत घराने की लड़की से जो भारी दहेज लेकर आये। क्या मैं उस लायक भी नहीं? मैं तो सैकड़ों आदमियों का पेट पाल सकता हूं। सेम्योनोव की क्या हस्ती है? अरे उसे तो देखकर कै आती है। अजीब भोंदू-सा शख्स है। देखो तो भला यहां मौज करता है। पड़ा होता कहीं दलदल में तो अच्छा भी लगता। इस हालत में तो वह मुझे बड़ा खटकता है।'

उसका लाल लालची मुंह गोल हो गया – बटुए के मुंह की तरह और उसमें से सीटी की-सी आवाज़ निकली।

'हां तो यार मेरे! ईमानदार की जिन्दगी अगर किसी की हो सकती है तो यह पादरी है। लेकिन हर शख्स जानता है कि पादरी हमेशा कुछ सुस्त-सुस्त और उदास रहते हैं। और उनका शरीर भी दुर्बल होता है। थाने के मुहर्रिर को जानते हो? वह लोश्नि? उसी ने लिखी है वह कविता जिसका शीर्षक है 'पादरी गाथा'। बड़ा ही विद्वान व्यक्ति है। हालांकि है पक्का शराबी। खैर तो उस किस्से में पादरी ने साफ कहा है, 'हे भगवान तू भी बड़ा अन्यायशील है। चोरी बिना जीवन बिता देना भी संभव ही नहीं।'

यह चुस्त व सुडौल जिस्म और उस पर सुर्ख सिर मुझे प्राचीन भाले का-सा नज़र आ रहा था। एक अग्निवाण की भांति कोई वस्तु जो रात्रि के समय मृत्यु और सर्वनाश का अपना कार्य सम्पन्न कर रहा हो।

मालिक की शराबनोशी के इन दिनों में याश्का के हाथ की सफाई पूरी तीव्रता के साथ जारी थी। छोटे-छोटे परिन्दों पर झपटते हुए शिकरे की तरह उसे दौड़ते और रूबल एकत्र करते देखकर बड़ी घृणा होती थी। पर साथ ही वह दृश्य आकर्षक भी होता था।

अब तो यहां जेलखाने का-सा वातावरण पैदा हो गया है।' शातुनोव ने एक दिन मेरे कान में कहा: 'जरा बचकर रहना, कहीं तुम भी लपेट में न आ जाओ।'

अब दिन-ब-दिन वह मेरा ज्यादा ख्याल रखने लगा था। और मेरा काम करने के लिए हर वक्त मेरे इर्द-गिर्द ही घूमता रहता जैसे कि मैं कोई लंगड़ा-लूला या अपंगु हूं। कभी आटा लिये चला आ रहा है तो कभी मेरे वास्ते लकड़ियां ला रहा है और कभी आटा गूंधने पर जिद कर रहा है।

'आखिर मतलब क्या है तुम्हारा?'

मुझसे निगाहें चुराकर, बड़बड़ाते हुए उसने कहा:

'कोई हर्ज नहीं, तुम्हारी ताकत कहीं और अधिक और उपयोगी बातों में काम आयेगी। तुम्हें इसका ध्यान रखना चाहिए। अच्छी सेहत इन्सान को जिन्दगी में बस एक बार मयस्सर होती है।'

फिर सदा की भांति उसने दबे स्वर में पूछा:

'मुहावरे का क्या अर्थ है?'

या फिर वह कोई अजीब-सी बात कह देता:

'खिलिस्ती सम्प्रदाय के लोग ठीक कहते हैं कि हमारी मां (ईसामसीह की मां मरियम) एक नहीं बल्कि कई हैं।'

'क्या मतलब?'

'उसके अर्थ पर न जाओ बस।'

'लेकिन तुम खुद ही तो कहते हो कि भगवान सबका एक है?'

'सो तो है ही। लेकिन लोग तो विभिन्न हैं। वे उसको अपनी आवश्यकतानुसार बना लेते हैं। उदाहरण के लिए तातारी, मोर्डवीनियर! बस यही पाप है।'

एक बार रात को वह मेरे पास तंदूर के सामने बैठा हुआ था कि बोला:

'क्या ही अच्छा हो कि एक बाजू टूट जाय! या टांग टूट जाये। या कोई ऐसी बीमारी हो जाय जो दिखाई दे।'

'वह क्या?'

'मेरा मतलब है किसी प्रकार का कोई ... लंगड़ा-लूला होना ... समझे?'

'दिमाग तो ठीक है तुम्हारा?'

'बिल्कुल!'

चारों ओर दृष्टि डालकर उसने अपने कथन की व्याख्या आरम्भ की, 'मेरा ख्याल था कि मैं जादूगर बनूंगा। मुझे बड़ा ही शौक था उसका। मेरे नाना जादूगर थे और पिता के चाचा भी। हमारे गांव में उनके चाचा मशहूर जादूगर थे। और गांव में झाड़-फूंक और इलाज भी किया करते थे। शहद की मक्खियां भी पाला करते। जिले का हर आदमी उनको जानता था। यहां तक कि तातारी और चूवाशी और चेरेमेसी भी उनका लोहा मानते थे। अब वह कोई सौ से भी ऊपर है। कोई सात वर्ष हुए उन्होंने एक नौजवान लड़की रख ली थी — एक अनाथ तातारी लड़की। और उससे उनके सन्तान भी हुई। अब और शादी वह नहीं कर सकते। तीन शादियां उनकी पूरी हो चुकीं।'

एक गहरी सांस लेकर उसने आहिस्ता-आहिस्ता और सोच-सोचकर फिर बयान करना शुरू किया:

'भला बतलाओ, तुम उसे ढोंग कहते हो! सौ बरस तक कोई ढोंग नहीं रचा जा सकता ढोंग तो कोई भी कर सकता है लेकिन उससे आत्मा सन्तुष्ट नहीं होती।'

पर सुनो तो, लंगड़ा-लूला क्यों बनना चाहते हो तुम?'

'हां-हां, जी तो किसी ओर लगा हुआ है। मैं दुनिया भर की सैर करना चाहता हूं। एक-एक कोना छानना चाहता हूं। देखना चाहता हूं कि आखिर दुनिया की क्या हालत है। कैसी जिन्दगी वह बसर करती है, क्या-क्या उसकी उम्मीदें हैं। हां, मगर मुझ जैसा

हट्टा-कट्टा आदमी क्या बहाना बना सकता है तीर्थ यात्रा को जाने का। लोग कहेंगे क्या बात है? क्यों मारे-मारे फिर रहे हो? क्या बहाना बना सकता हूं कुछ भी नहीं। इसलिए अब मैं सोच रहा था कि मेरा बाजू कट कर गिर गया होता या फोड़े पक-पककर नासूर हो गये होते तो ... नासूर तो और भी बुरे हैं, लोगों को उनसे घृणा होती है।'

वह अचानक खामोश हो गया, उसकी तिरछी आंखें आग को घूर रही थीं।

'तो तुम उसका पक्का निश्चय कर चुके हो?'

'अगर निश्चय न कर चुका होता तो मैं उसका जिक्र ही न करता' उसने एक कश लेते हुए कहा, 'वह जो कहते हैं ना कि निर्णय किये बिना कहते फिरना खाली-खूली रौब जमाना है, वैसे ही ...।'

उसने मायूसी के आलम में अपने हाथ हिलाये और खामोश हो रहा।

आर्तेम जम्हाइयां लेता और मुस्कराता हुआ और अपने झाड़-झंखाड़ बालों वाले सिर को खुजाता दबे पांव हमारे पास आया।

'मैंने सपने में देखा है कि मैं नहा रहा हूं और नदी में गोते मारने वाला हूं। दो-चार कदम पीछे गया और लगा दी छलांग ... बड़ांग! और मेरा सिर दीवार से टकरा गया! मेरी आंखों से सुनहरे आंसू बहने लगे।'

और वास्तव में उसकी आंखें डबडबाई हुई थीं।

कोई दो दिन बाद रात के वक्त जब मैं तंदूर में रोटियां रखकर मीठी नींद सो चुका था तो किसी की डरावनी चीखों ने मुझे जगा दिया। बिस्किट की बेकरी की ड्योढ़ी की महराब में मालिक खड़ा गंदी-गंदी गालियां बक रहा था। गालियां उसके मुंह से ऐसे निकल रही थीं जैसे फटे हुए बोरे में से चने के दाने। वह भी एक से एक बढ़कर गंदा।

उसी क्षण मालिक के कमरे का दरवाजा भी एक झटके के साथ खुला और क्लर्क साश्का दरवाजे की चौखट पर घिसटता हुआ आ पड़ा। मालिक उस पर बुरी तरह पिला हुआ था, कभी सीने पर कभी पसलियों में लात और घूंसे इस तरह लगातार पड़ रहे थे जैसे यह उसका काम है जिसे वह एकाग्रचित्तता के साथ पूरा कर रहा है।

'हाय! तुम तो मुझे मार डालोगे!' लड़का बुरी तरह चीख रहा था।

सेम्योनोव बड़े सन्तोष के साथ लात रसीद करता और फिर इत्मीनान के साथ हुंकारता। इतनी देर में साश्का जमीन पर दुहरा पड़ा लुढ़कता रहता लेकिन जब भी कभी वह उठकर खड़े होने की कोशिश करता वह उसे वहीं उठाकर जमीन पर पटक देता।

सब मजदूर बिस्कुटों की बेकरी से निकलकर दौड़े हुए पहुंचे और खामोशी के साथ एक गुट सा बनाकर खड़े हो गये। सुबह तड़का था और उस सुरमई रोशनी में किसी के चेहरे साफ नजर नहीं आ रहे थे। लेकिन उनमें एक सनसनी और भय उत्पन्न हो जाने का आभास जरूर मालूम होता था। साश्का हांफता-कराहता उनके कदमों में जा पड़ा।

'भाइयो! वह तो मुझे मार डालेगा!'

वे सब के सब पीछे हट गये जैसे आंधी के एक झोंके में सूखी हुई टहनियों की बाड़ झकोला खाकर गिर पड़े। इतने ही में अचानक आर्तेम भीड़ को चीरता हुआ बाहर आया और मालिक के मुंह के ठीक पास जाकर बोला:

'बस, बस बहुत हो चुकी!'

सेम्योनोव ठिठक गया। मौका पाते ही साश्का मछली की तरह फड़का और भीड़ में गायब हो गया।

एकदम सन्नाटा छा गया। कई सेकेन्ड तक भयानक निस्तब्धता छाई रही। और कोई फैसला न कर सका कि जीत किसकी – इन्सान की या हैवान की।

'कौन है?' मालिक ने भर्राई हुई आवाज में पूछा और हाथ उठाकर आर्तेम को गौर से देखने लगा। इस अर्से में उसका हाथ सिर से ऊंचा उठ गया था।

'मैं हूं!' आर्तेम ने आवश्यकता से अधिक जोर लगाकर कहा और एकदम पीछे हट गया। मालिक ने उस पर भी हाथ छोड़ा लेकिन ओसिप फौरन ही लपककर आगे बढ़ा और उसने मुक्का अपने मुंह पर रोक लिया।

'देखो!' उसने बड़े इत्मीनान के साथ अपने सिर को एक झटका देकर कहा, 'बस करो, लड़ो मत!'

और उसी क्षण सैनिक याश्का पतला-दुबला लापतेव और निकिता कोई पीठ पर हाथ बांधें, और जेबों में ठूंसे मालिक को घेरने के लिए आगे बढ़े। सभी के सिर झुके हुए थे मानों उसे टक्कर मारने जा रहे हों। सब के सब एक साथ हमेशा के विपरीत जोर-जोर से चीख रहे थे।

'बस हो चुकी बहुत! हमें क्या तुमने खरीद लिया? वाह, वाह! अब हम आगे सहन नहीं कर सकते!'

मालिक निश्चल व निस्पन्द खड़ा था मानों कीड़ा खाए और टूटे-फूटे फर्श में पैवस्त हो गया हो। उसके हाथ पीठ पर बंधे थे। सिर एक ओर को झुका हुआ था मानो गडमड आवाजों को सुनने और समझने की कोशिश कर रहा हो। जैसे-जैसे आदमियों का काला जमघट उसके चारों तरफ बढ़ता गया, कोलाहल में वृद्धि होती गई। दीवार पर लगे हुए लैम्प का पीला प्रकाश उस अन्धकार के विरुद्ध असफल चेष्टा कर रहा था। लेकिन जब कोई सख्त दांत निकाले उसके ठीक सामने आ जाता वही हिस्सा प्रकाश में जाकर ऐसा लगने लगता जैसे कि जिस्म के बाकी हिस्से से कटकर अलग हो गया हो। सबके-सब चीख-चीखकर आसमान सिर पर उठाए हुए थे। मगर फिर भी निकिता की आवाज उन सबमें बुलन्द थी।

'तुमने मेरी सारी शक्ति चूस डाली। भगवान के सामने क्या मुंह लेकर जाओगे? हाय रे इन्सान, हाय!'

गालियां बढ़ते-बढ़ते बहुत ही गन्दी हो गई थीं और कभी-कभी तो लोग घूंसे तान-तानकर सेम्योनोव को धमकियां देते और वह तो मालूम होता था जैसे खड़े-खड़े ही सो गया हो।

'तुम्हें धनवान किसने बनाया! हमने?' आर्तेम चिल्लाया। और बेचारा किताब खोलकर पढ़ने लगा।

'याद रखो, हम सात बोरे आटे के हर रोज बिस्कुट बनाने के लिए हरगिज तैयार नहीं हैं।

आखिरकार मालिक मुड़ा और अजीब अन्दाज में सिर को हिलाता हुआ खामोशी के साथ चला गया।

बिस्कुट की बेकरी में शांतिपूर्ण किन्तु उत्साह भरे उत्सव का दृश्य उपस्थित था। हर व्यक्ति अपने-अपने काम में संलग्न नजर आता था। और सब के सब एक-दूसरे को जैसे नयी आंखों से देख रहे थे – विश्वास नर्मदिली, और कुछ उलझन से। और बंजारा तो चहचहा रहा था।

'चलो यारो! लग जाओ काम पर कान फड़फड़ाकर।'

"चल जवान हमेशा! बिल्कुल ठीक-ठीक ओर न्याय के साथ। हम भी दिखा देंगे कि काम किसको कहते हैं। चलो जुट जाओ काम में।"

लापतेव आटे की बोरी कंधे पर लादे कारखाने के बीचों-बीच खड़ा अपने होंठ चाट-चाटकर चूस रहा था।

'देखा क्या होता है ...जब तुम सब ऐसा कर लेते हो तो ...'

शातुनोव जो नमक तोल रहा था, हुमककर बोला:

'अरे, बच्चे एका कर लें तो अपने बाप को भी पीट सकते हैं।'

सब लोग ऐसे व्यस्त नजर आ रहे थे जैसा कि वसन्त ऋतु में शहद की मक्खियां... आर्तेम विशेषतया प्रमुख था। सिर्फ बूढ़ा कुजिन हमेशा की तरह अपनी गनगनी आवाज में कह रहा था:

'अरे शैतानो! क्या सोच रहे हो तुम, कमबख्तो।'

गिरजाघर के घन्टों, मीनारों और मकानों की छतों पर सुरमई धुंध छाई हुई थी। सारा शहर मुंडा-मुंडा सा नज़र आता था। और लोग भी दूर से ऐसे मालूम होते थे। जैसे सिर फटे फिर रहे हों। वायुमंडल पर एक सर्द-सी बौछार छाई हुई थी और सांस लेना तक मुश्किल हो रहा था। आस-पास की हर चीज पर मलगुजा-सा सफेद रंग चढ़ा हुआ था। और जहां अभी तक रात की जली हुई रोशनियां बुझाई नहीं गई थीं वहां हल्की-सी जर्दी छाई हुई थी।

पत्थर की पटरियों पर छतों से टपकता हुआ पानी उदास-उदास सी आवाज़ पैदा कर रहा था। पथरीली सड़क पर घोडे के खुरों की चाप खोखली हो-होकर गूंज रही थी। और धुंध में ऊपर कहीं से मुअज्जिन शोकपूर्ण आवाज से सुबह की नमाज के लिए लोगों को पुकार रही थी।

मैं अपनी पीठ पर बनों की एक टोकरी उठाए लिए जा रहा था। और मुझे यों महसूस होने लगा था कि मैं निरन्तर और सदा ही चलता चला जाऊंगा। उस धुंध से गुजरकर खेतों को पार करता हुआ किसी राज मार्ग पर पहुंच जाऊंगा जहां बसन्त ऋतु का चमकता-दमकता सूर्य निश्चित ही उदय हो गया होगा।

एक घोड़ा गर्दन ताने, अपनी टागें उछालता धुंध में से निकला और मेरे पास से होता हुआ गुजर गया। घोड़ा बड़ा मोटा-ताजा और कत्थई रंग का था जिस पर काले दाग पड़े हुए थे और उसकी लाल आंखों में दुख व उदासी की एक झलक। बग्घी पर गाड़ीवान की जगह पर येगोर बागें ताने ऐसा तना हुआ बैठा था जैसे कि लकड़ी पर नक्शा खुदा

हुआ हो। बग्घी के अन्दर मालिक हिचकोले खाता दिखाई दिया। उस समय वह लोमड़ी की खाल का कोट पहने हुए था जबकि गर्मी काफी हो रही थी।

यह तेज व तर्रार घोड़ा कई बार बग्घी के टुकड़े-टुकड़े कर चुका था। अभी पिछले दिनों येगोर और मालिक को कीचड़ और खून में लथपथ घर लाया गया था। पसली की हड्डियां चुर्र-मुर्र हो गई थी लेकिन फिर भी दोनों को इस मोटे-तोजे जानवर से बड़ी मुहब्बत थी।

एक बार जब येगोर घोड़े को साफ कर रहा था जिसने अभी एक मिनट पहले ही उसके कंधे पर काट खाया था, तो मैंने सलाह दी कि अच्छा तो यह हो कि इस जानवर को तातारियों के हाथ बेच दिया जाय ताकि वे उसे जिबह कर डालें! यह सुनते ही येगोर तनकर खड़ा हो गया और भारी खरेरे से मेरे सिर को निशाना बांधते हुए धमकाकर बोला:

'भाग जाओ!'

वह शख्स मुझसे फिर कभी न बोला और अगर मैंने उससे बातचीत शुरू करनी भी चाही तो वह बैल की तरह सिर झुकाकर एक तरफ चल दिया सिर्फ एक बार उसने अचानक पीछे से आकर मेरा कंधा दबोच लिया और झिंझोड़ते हुए बोला:

'अरे बुद्धू! मैं तुमसे कई गुना ज्यादा ताकतवर हूं तुम जैसे तीन से निपट सकता हूं और तुमसे तो सिर्फ एक हाथ से। समझे? बस मालिक सिर्फ ...'

वह बातचीत उसने बड़े भावुक ढंग से की और उसका इस पर इतना असर हुआ कि वह वाक्य तक पूरा न कर पाया उसकी कनपटियों पर नीली रगें उभर आईं और माथा पसीने से तरबतर हो गया।

जबानदराज नन्हा याश्का उसके बारे में कहा करता था:

'हाथ तो उसके तीन जरूर हैं मगर खुद वह बोंगा है।'

सड़क और भी तंग होती गई। हवा और ज्यादा नम हो गई थी मुअज्जिन की अजान भी खत्म हो गई थी। घोड़े की टापों की आवाज दूर जाकर गुम हो गई थी और हर चीज एक आशाजनक स्तब्धता में छिप गई।

नन्हा याश्का साफ-सुथरी लाल कमीज पहने और सफेद एप्रन बांधे दरवाजा खोलने आया और टोकरी उतरवाते हुए उसने मुझे चुपके से सावधान किया:

'मालिक ...'

'मुझे मालूम है।'

'गुस्से में है ...'

उसी दम अल्मारी के पीछे से गुर्राने की आवाज़ आई।

'बड़बड़िये, यहां आओ।'

वह पलंग पर बैठा हुआ था और उसका एक तिहाई हिस्सा घेरे हुए था। अर्धनग्न सोफिया करवट लिए लेटी थी। उसने अपने हाथ सरहाने रखे हुए थे। एक टांग अन्दर को सुकेड़ रखी थी और दूसरी जो नंगी थी वह उसने मालिक के घुटनों पर डाल रखी थी। उसने मुस्कराते हुए अपनी उन विचित्र-सी साफ शफ्फाफ आंखों से मुझे देखा। नजर आ रहा था कि आका आकर उसके कार्य में बाधक हुआ है। उसके घने बाल आधे तो चोटी

में गुंथे हुए थे और बाकी आधे एक लाल और मसले हुए तकिये पर बिखरे पड़े थे। लड़की को छोटा-सा घुटना अपने हाथ में लेकर दूसरे से उसके पांव की उंगलियों के लाल नाखूनों को भींचा।

'बैठ जाओ! ... अच्छा तो आज हम गंभीरता से बात कर लें।'

सोफिया के पांव को थपथपाते हुए उसने आवाज दी:

'याश्का, समोवार! चलो सोवा उठ बैठो।'

उसने जम्हाई लेते हुए धीरे से कहा:

'मेरा तो जी नहीं चाहता।'

'आओ, चलो उठ भी जाओ।'

उसने उसकी टांग अपने घुटनों पर से सरका ली और आहिस्ता से खांसते हुए कहा:

'बाज बातें ऐसी हैं जो हमें करना ही पड़ती हैं चाहे हमें अच्छी लगें या न लगें। खुद ज़िन्दगी ही हमारे स्वभाव के विपरीत गुजरती है।'

सोफिया बेढंगेपन से फिसलकर फर्श पर लेट गई और उसकी टांगें घुटनों से ऊपर तक खुल गई। मालिक ने उसे डांटते हुए कहा:

तुम्हें इतनी भी शर्म नहीं आती, सोवा?'

उसने अपने बाल संवारने शुरू कर दिये और जम्हाई लेते हुए बोली:

'तुम्हें मेरी शर्म की क्या परवाह?'

'अकेला तो नहीं हूं मैं ही? सामने लड़का बैठा है।'

'उससे मेरी जान-पहचान है।'

गंभीर भाव-भंगिमा लिए, भवें सुकेड़े और गाल फुलाये हुए याश्का समोवार लेकर अन्दर दाखिल हुआ। समोवार देखने में बिल्कुल याश्का जैसा ही था वैसा ही छोटा-सा साफ-सुथरा और ठस्सेदार!

'उंह नालायक!' सोफिया ने झटके के साथ अपनी चुटिया खोलकर और सामने लहरियेदार बाल कंधे पर डालते हुए कहा और सिंगार मेज के सामने बैठ गई।

'खैर तो...' मालिक ने कहना शुरू किया। इस समय उसकी तेज वाली मंजरी आंख अधखुली और दूसरी मुर्दावाली आंख बिल्कुल बंद थी।

'तो यह झगड़ा-फसाद करने की शै तुमने ही दी थी?'

'तुम्हें तो मालूम ही है!'

निश्चित रूप से। पर तुम क्या कहते हो? क्या कारण है उसका!'

'बड़ी मुसीबते झेलनी पड़ती हैं बेचारों को।'

'बहुत खूब! मगर ऐश कौन कर रहा है?'

'तुम्हीं उनसे अधिक सुख-चैन से हो।'

'वाह-वाह!' उसने खिल्ली उड़ाते हुए कहा, 'खूब समझते हो! सोवा! चाय दो इनको। नींबू है? मैं नींबू डालूंगा!'

ऊपर रोशनदान वाली खिड़की में, जो मेज के ऐन ऊपर थी, एक जंगदार पंखा गुनगुना रहा था। समोवार भी सनसना रहा था। मालिक की बातचीत के बावजूद ये तमाम आवाजें

सुनाई दे रही थीं।

'चलो छोड़ो। बात को क्या खींचना। अगर तुम्हारे आदमी गड़बड़ करते हैं तो भई, गड़बड़ को खत्म तो करना ही होगा। क्यों ठीक है ना? वरना तो तुम किस काम के? क्यों सोवा, मैं कुछ गलत कह रहा हूं?'

'मैं क्या जानूं? मुझे क्या वास्ता?' उसने इत्मीनान के साथ जवाब दिया मालिक एकदम बिगड़ पड़ा:

'किसी से कुछ वास्ता ही नहीं, मूर्खा कहीं की। मैं पूछता हूं तुम आखिर गुजारा कैसे करोगी?'

'मैं तुमसे कुछ नहीं सीखूंगी, खातिर जमा रखो।

वह अपनी कुर्सी पर आराम से लेटी हुई थी। चाय की एक छोटी-सी नीली प्याली में पांच डलियां शकर की डालकर मजे से घुला रही थी। उसकी सफेद चोली सामने से खुल गई थी और बड़ी-सी सुडौल छाती नजर आने लगी थी जिसकी नीली-नीली नसों में रक्त-संचार तेज मालूम होता था। उसके मूर्खतापूर्ण चेहरे से नींद के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे थे। या फिर मालूम होता था कि वह किसी गहरे सोच में है। होंठ उसके इस तरह खुले हुए थे जैसे किसी बच्चे के।

'अच्छा तो खैर!' मालिक ने बातचीत का क्रम जारी रखते हुए कहा और उसकी चमकदार आंख मेरे चेहरे के भाव टटोलने लगी।

'मैं तुम्हें याश्का की जगह लगाना चाहता हूं, क्यों?'

'धन्यवाद! पर मैं कर नहीं सकता वह काम।'

'नहीं क्यों?'

'वह उचित नहीं है मेरे लिए।'

'मगर कैसे, कुछ बताओ तो सही।'

'यों ही, मेरा दिल नहीं चाहता उस काम के करने को।'

'फिर वही दिल!' उसने एक ठण्डी सांस खींचते हुए कहा और बड़े ही सुन्दर शब्दों में दिल, जान और आत्मा को भला-बुरा कहकर वह जरा जोश में आ गया और चीखते हुए उसने बोलना शुरू किया:

'हाय, कहीं यह आत्मा मुझे देखने को मिल जाय एक बार फिर जरा अपने नाखून से कुरेदकर देखूं भला काहे की बनी हुई है। यह सब खब्तीपन नहीं तो और क्या है? जिसे देखो वही इसकी बात करता है! मगर देखा किसी ने नहीं कभी। मूर्खता के अतिरिक्त और तो कुछ नजर आता नहीं। उफ्फो! अगर कहीं कोई ऐसा आदमी मिल भी जाय जिसमें ईमानदारी जर्रा बराबर भी हो तो अवश्य ही वह मूर्ख निकलता है।'

सोफिया ने आहिस्ता-आहिस्ता अपनी पलकें उठाईं। भवों के साथ-साथ व्यंग्यपूर्ण ढंग से मुस्कराई और पूछा:

'आश्चर्य है, कभी तुम्हें कोई ईमानदार आदमी भी मिला?'

'मैं खुद ईमानदार था अपनी जवानी में!' उसने कुछ अनजानी सी आवाज में कहा और अपने सीने पर जोर से हाथ मारा। फिर लड़की के कंधे थपथपाये।

'अच्छा अब तुम्हीं ईमानदार हो लेकिन भला इससे क्या फायदा?' तुम ठहरी बेवकूफ! अब बताओ क्या हो?

उसने जोरदार कहकहा लगाया, 'तो यह बात। ... बस तुमने सब मेरे ही जैसे लोग देखे हैं। ... खूब ढूंढी ईमानदार औरत तुमने।'

अब वह तैश में आकर चीखने लगा उसकी आंखें शोले बरसा रही थीं।

'मैं खुद काम किया करता था और जिस कद्र बन पड़ता दूसरों की मदद भी किया करता। सच जानो दूसरे की सहायता करके मुझे बड़ी ही खुशी और इत्मीनान हुआ करता था। मैं यह भी चाहता था कि मेरे साथी भी, और मुझसे मिलने-जुलने वाले भी अच्छी तरह रहें और वातावरण जरा सुखद बन जाए। लेकिन मैं अन्धा नहीं हूं। कोई क्या करे? जिसको देखो वही चीलर की तरह खून चूसने को चिपटा करता है।'

उदासी व विषाद इतना कष्टकर था कि रोने को जी चाहता था व्यर्थ ही दिल भारी-भारी सा रहता, एक टीस सी उठती। क्या इन्हीं लोगों के साथ जीवन व्यतीत करूं? साफ मालूम होता था कि ये लोग एक स्थायी विपदा में फंसे हुए हैं। उनके दिल व दिमाग में कोई बुनियादी कमजोरी है, उनको देखकर अफसोस होता, दिल कटने लगता उनकी मदद करने की कोई सूरत न देखकर तबियत निढाल होने लगती और खुद भी इस बेनाम रोग का असर होने लगता।

'बीस रूबल बुढ़ापे तक -- है मंजूर?'

'नहीं।'

'पच्चीस? बोलो! मौज करना, लड़कियां मिलेंगी और हर तरह के ऐश रहेंगे।'

जी चाहा कि मैं किसी सूरत से उसे यह समझाऊं कि हमारा साथ-साथ रहना मिल-जुलकर काम चलाना कितना असम्भव है। लेकिन मुझे समुचित शब्द ही न मिल सके और उसकी भारी उत्सुक एवं अविश्वसनीय आंखों की ताब न लाकर मैं कसमसा रहा था।

'छोड़ो भी बेचारे को।' सोफिया ने प्याली में चीनी ढालते हुए कहा। मालिक ने सिर का इशारा करते हुए कहा:

'अब चीनी क्यों ठूंसे जा रही हो इतनी?'

'तुम क्यों जलते हो?'

'अरी मूर्खा। यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। देखो तो कैसी फूलती जा रही हो? ... अच्छा तो हां, हमारी तुम्हारी निभ नहीं सकती।'

'तुम हमेशा के लिए मेरे खिलाफ हो गये?'

'मैं चाहता हूं कि तुम मुझे बर्खास्त कर दो।'

'हूं, हूं ... ठीक है।' मालिक ने चुटकी बजाते हुए और कुछ सोचते हुए कहा, 'अच्छा

चलो चाय तो पियें। ... मिले थे तब तो कोई खुशी न हुई अब बिछुड़ रहे हो तो लड़-झगड़ कर नहीं।'

बड़ी देर तक खामोशी के साथ हम चाय पीते रहे। समोवार एक संतुष्ट फाख्ता की भांति गुड़गुड़ाता रहा और हवा निकलने का पंखा किसी बूढ़ी भिखारिन की तरह गनगनाए गया। सोफिया किसी गहरे सोच में पड़ी मुस्कराती रही और अपने प्याले में घूरती रही।

'सोवा, क्या सोच रही है? छोड़ भी इस फिक्र को।'

उसने गर्दन उठाई और फिर ठण्डी सांस भरकर आहिस्ता-आहिस्ता बेसुरी आवाज़ में– एक बहुत ही बीमार औरत की आवाज़ में – वे शब्द कहे जो हमेशा-हमेशा के लिए मेरे हृदय पर अंकित हो गये।

'मैं सोच रही थी निकाह के बाद दुलहन और दूल्हा को गिरजे में एक साथ और अकेले बंद करके ताला लगा दिया जाना चाहिए। बस यही करना चाहिए।'

'हक थू!' मालिक ने जोर से थूका।' क्या फिजूल बातें सोचा करती है ये!'

'हां!' उसने भवें सुकेड़कर और जोर देते हुए कहा, 'मैं शर्त लगाती हूं रिश्ता तब ही मजबूत होगा ... तब तुम जैसे सड़ियल ...।'

मेज को जोर से धक्का देते हुए, मालिक कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ।

'बन्द करो यह बकवास। फिर वही रट लगानी शुरू कर दी?'

वह फिर खामोशी में खो गई। और चाय के बर्तन उठाने लगी। मैं उठ खड़ा हुआ।

'अच्छा अब चल दो।' मालिक ने रुखाई के साथ कहा, जाओ अच्छा हुआ।'

बाहर गली अब भी कुहरे में लिपटी हुई थी। मकानों की दीवारों से गंदले आंसू बह रहे थे। अंधियारी परछाइयां भीगे हुए अंधेरे। अकेली भटक रही थी। कहीं दूर लोहारखाने में काम हो रहा था 'वहां हथौड़ों की आवाज एक बंधे हुए वक्त के साथ लगातार सुनाई दे रही थी। और यह पूछती हुई मालूम दे रही थी, क्या ये लोग इन्सान है। क्या इसी का नाम ज़िन्दगी है?'

मैंने अपनी आखिरी तनख्वाह शनिवार को ली। और इतवार के दिन सब लड़कों ने मिलकर विदाई पार्टी का आयोजन किया। एक गंदे किन्तु आरामदायक और गर्म मयखाने में शातुनोव, आर्तेम, बंजारा, नाजुक मिजाज लापतेव, सैनिक मिलोव, निकिता और वानुक उलानोव एकत्र हुए। उलानोव एक सस्ते मगर भड़कीले कपड़े का पतलून पहने था, लम्बे जूतों में पांयचे दबे हुए थे और नई कमीज पर बड़ी भड़कीली बास्कट थी जिसमें कांच के बटन लगे हुए थे। उसकी पोशाक की भड़क और नयेपन ने उसकी बेशर्म आंखों की उद्दण्डता और कर दी थी। उसके मुर्झाए हुए छोटे-से चेहरे पर कायरता के भाव अंकित थे। और उसकी एक-एक हरकत से सावधानी और घबराहट के लक्षण दिखाई देते थे। मानों उसे हर वक्त डर लगा हुआ हो कि कहीं उसके कपड़े खराब न हो जाये या कोई वास्कट उतरवाकर न ले जाय।

एक रोज पहले शाम को सबने स्नान किया था और आज बालों में खूब तेल लगाकर आये थे इस वजह से त्योहार की सी रौनक हो गई थी।'

बंजारे ने उस पार्टी का सारा प्रबन्ध सम्भाल लिया था और नीलाम में बोली देने वाले

खरीदार की तरह जल्दी-जल्दी आर्डर दे रहा था।

'बाय थोड़ा गरम पानी और।'

हम एक सांस में चाय भी पी रहे थे और वोद्का भी। और इसी कारण हम सब पर एक घटे-दबे नशे की हालत छाई हुई थी। लापतेव ने अपने कंधे से मुझे टहोका दिया और दीवार पर धकेलते हुए आग्रह किया:

'जाने से पहले हमें कुछ उपदेश देते जाओ, ऐसे कि आंखें खुल जाये। ... तुम तो जानते ही हो हमें कितनी सख्त जरूरत है। ... सीधी-सादी और सच्ची बातें बताना, हां।'

शातुनोव ने, जो मेरे रूबरू बैठा हुआ था निगाहें नीची करके मेज के नीचे देखते हुए निकिता को समझाया:

'इन्सान तो आने-जाने वाली चीज है।'

'कहां जाये कोई?' निकिता ने ठंडी सांस भरकर कहा, 'कैसे जाय कोई?'

इनमें से हरेक मुझे इस तरह देखे जा रहा था कि मुझे उलझन-सी होने लगी और तबियत बड़ी उदास हो गई। शायद मैं दूर कहीं बहुत दूर चला जाऊं और फिर उन लोगों की सूरत भी कभी देखना नसीब न हो जो आज इस कदर अजीब तरीके से मेरे नजदीक हैं और मुझे प्रिय है।'

'लेकिन मैं तो यहां शहर में रहूंगा। मैंने उनको बार-बार याद दिलाया। 'हम तो मिलते रहा करेंगे।'

लेकिन बंजारे ने अपनी स्याह लटों को झटका देते हुए और साथ ही साथ इस बात का ध्यान रखते हुए कि चाय जो वह बना रहा है सब प्यालियों में एक सी बने, खांस-खखारकर और गला साफ करके कहा:

हालांकि रहोगे तो तुम इसी शहर में लेकिन अब तो हमारे खटमल तुम्हारे खून में हिस्सा न बटा सकेंगे।'

आर्तेम ने बड़ी मृदुल मुस्कान के साथ दबे स्वर में कहा:

'अब तुम हमारे गीत में बोल नहीं रहे।'

शराबखाने में गर्मी हो रही थी। स्वादिष्ट पदार्थों की खुशबुएं नथुनों में घुसी चली आ रही थीं और तम्बाकू का धुंआ नीली-नीली धुंधली लहरों में तैरता फिर रहा था। कोने वाली खिड़की में से बसन्त के साफ दिन की बुलन्द आवाजें अन्दर स्पष्टतया सुनाई दे रही थीं और रंगबिरंगे फूलों से लदी हुई डालियां मस्त होकर झूम रही थी।

मेरे सामने दीवार पर एक दीवार-घड़ी लगी हुई थी। उसका पेण्डुलम मानों थक-हारकर रुक गया था। सुईयां गायब थीं और घड़ी का डायल शातुनोव के चौड़े-चकले चेहरे की तरह मालूम हो रहा था जो आज हमेशा से कहीं अधिक मलिन व उदास था।

'इन्सान मैं कहता हूं आनी-जानी चीज है।' उसने अपना आग्रह दोहराया। 'इन्सान अपने रास्ते तक आता है और गुजर जाता है।'

उसके चेहरे पर जर्दी-सी आ गई थी। एक मुस्कराहट के साथ उसकी आंखें आहिस्ता-आहिस्ता बन्द हो गईं।

शाम के समय बाहर दरवाजे पर आकर बैठना और राहगीरों का सूरतें देखना मुझे बड़ा

अच्छा लगता है। अनजान लोग किन्हीं अज्ञात मंजिलों की ओर लपके चले आ रहे हैं। ... और उनमें से शायद कई ऐसे होंगे... जो नेक दिल भी हों। भगवान भला करे उनका।'

उसकी आंखें डबडबाई और पलकों में दो छोटे-छोटे आंसू झिलमिलाने लगे और फौरन ही गायब हो गये वैसे उसके तमतमाए हुए चेहरे पर पड़ते ही भाप बन गये हों। उसने भर्राई हुई आवाज में फिर कहा।

भगवान इन पर दया करे। और आओ अब हम दोस्ती, प्रेम और घनिष्ठता के लिए मदिरापान करें।'

हमने प्याले टकराये और पी गए। फिर एक-दूसरे को हवाई चुम्बन दिये और इस दौरान में मेज पर रखी हुई तमाम चीजों को गडमड कर दिया। मेरे सीने के अन्दर बुलबुले चहचहाने लगी और दिल में एक तीव्र वेदना अनुभव करते हुए मुझे उन तमाम लोगों पर बड़ा प्यार आया। बंजारे ने अपनी मूंछ पर हाथ फेरा और साथ ही हल्की सी व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट भी जो उसके होठों पर खेल रही थी, मिट गई। और उसने भी इसी तरह एक भाषण आरम्भ कर दिया:

भगवान की कसम कभी-कभी तो भाइयो, अपना दिल भी इतनी शानदार लय निकालता है कि जैसे कोई मार्डविनियन बाजा बजा रहा हो। अब वही दिल याद कर लो जब हम सब सेम्योनाव के खिलाफ उठ खड़े हुए थे। और आज ... यहां अब ... कोई कर ही क्या सकता है।' बस जी भर आता है। कोई अच्छी बात कहने को जी चाहता है। लेकिन हम अभागे कह नहीं सकते कि क्या हमारा जी चाहता है। भगवान साक्षी है मैं भले मानुसों का-सा जीवन बिताऊंगा और किसी से जरा नहीं दबूंगा। तुम्हारा जो जी चाहे कहो। साफ-साफ कहो! कोई कुछ मेरे विरुद्ध शिकायत हो मुंह से कहो। मैं जरा भी बुरा न मानूंगा यकीन ही न करूंगा, इसीलिए मैं नाराज नहीं होऊंगा। और मैं जिन्दगी का सन्मार्ग जानता हूं ... ओसिप! तुमने लोगों के बारे में जो कुछ कहा था वह बिल्कुल सही है मैं सोचा करता था भाई कि तुम कूड़मगज हो लेकिन यह मेरी भूल है। तुम ठीक कहते हो हम सब अच्छे और योग्य लोग हैं।'

निकिता ने भरी हुई आवाज में उस रोज पहली बार बोलते हुए कहा:

'हम सब ... बहुत ही नाखुश और बेजार हैं।'

जहां आनन्द-मग्न हो लोग हंसी-दिल्लगी कर रहे थे वहां उन शब्दों पर किसी ने भी ध्यान न दिया जैसे खुद यह बात कहने वाला उन सब लोगों में दिखाई ही नहीं दे रहा था। अब उसकी हालत बहुत ही खराब और खस्ता हो चुकी थी और वह एक तरफ बैठा ऊंघे जा रहा था, उसकी आंखें बुझ गई थीं। उसका झुर्रियोंदार चेहरा मुर्झाई हुई जर्द पत्ती की तरह नजर आ रहा था।

'शक्ति तो मित्रता में है!' लापतेव आर्तेम से कह रहा था।

शातुनोव ने मुझसे कहा:

'ध्यान से सुनते रहो सब बातें और याद भी रखना। शायद इन्हीं से वह कविता बनती हो!'

'मुझे मालूम कैसे होगा कि कविता इन्हीं से बनती है?'

'पता चल ही जायेगा तुम्हें तो।'

'और अगर इससे कोई और ही कविता बनी तो?'

'कोई और?'

आसिप ने मुझे संदेहपूर्ण दृष्टि से देखा और फिर क्षण भर संकोच करने के बाद कहा:

'और कोई कविता हो ही नहीं सकती। लोगों की खुशी व खुशहाली के लिए एक ही कविता है, कोई और है ही नहीं।'

'लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि यह वही है?'

उसने निगाहें नीची कर ली और कुछ रहस्यमय ढंग से मुझसे कहा:

'देख लेना, फौरन पहचान जायेंगे सब!'

वानुक अपनी कुर्सी में कसमसाया और उत्सुकतापूर्ण दृष्टि से उसने पूरे कमरे को जांचा जो अब खचाखच भर चुका था। वह बोला:

'खिखी! क्या ही अच्छा हो अगर हम अब कोई गीत छेड़ दें!'

फिर अचानक गड़ाप से अपनी कुर्सी में धंसते हुए उसने बड़ी घबराई हुई आवाज में कहा:

'शिश ... मालिक ...'

बंजारे ने वोद्का की भरी हुई बोतल उठाकर झट मेज के नीचे छिपा दी। लेकिन फिर फौरन ही वापस मेज पर जमाकर रखते हुए झल्लाकर बोला:

'यह तो है ही शराबखाना!'

'है तो सही!' आर्तेम ने जरा जोर से कहा और फिर सब यों खामोश होकर बैठ रहे मानो किसी ने भीमकाय मालिक को मेजों के दरम्यान से बच-बचकर निकलते और हमारी महफिल की तरफ रोबदार ढंग से बढ़ते हुए देखा ही न हो। आर्तेम ही ने सबसे पहले आंखें चार कीं। और अपनी कुर्सी से उठते हुए बहुत ही तपाक से कहा:

'नमस्कार, वासिली सेम्योनिच!'

दो चार कदम के फासले पर रुकते हुए सेम्योनोव ने खामोशी के साथ हमारे समूह को अपनी मंजरी आंख से जांचा। सब आदमियों ने भी चुपचाप सिर के इशारे से उसे सलाम किया।

'कुर्सी!' उसने धीरे से कहा।

सैनिक उछलकर खड़ा हो गया और उसने अपनी कुर्सी पेश की।

'वोद्का पी रहे हो?' उसने कुर्सी पर बैठकर एक लम्बी सांस लेते हुए कहा:

'चाय पी रहे हैं।' याश्का ने दांत निकोसते हुए कहा।

'बोतलों में से निकालकर?'

सारे कमरे में एक सन्नाटा-सा छाया हुआ था जैसे कि अब किसी भी क्षण तू-तू, मैं-मैं शुरू हुई। लेकिन ओसिप शातुनोव ने उठकर अपना ग्लास वोद्का से भरा और मालिक को पेश करते हुए बहुत ही नम्रता से कहा:

'हमारे साथ हमारे स्वास्थ्य के लिए पियो, वासिली सेम्योनिच।'

मालिक ने धीरे-धीरे और सोच-सोचकर अपना छोटा-सा बोझिल हाथ उठाया। हम

सबकी तबियतें बोझिल हो रही थीं। किसी को यकीन न था कि यह हाथ जो उठ रहा है वह ग्लास को झटककर फेंकने के लिए है या उठाने के लिए।

'क्यों नहीं?' आखिरकार उसने ग्लास को अपनी उंगलियों के सहारे उठाते हुए कहा: 'और हम आपके स्वास्थ्य के लिए पियेंगे!'

मालिक ने अपनी मंजरी आं ख से ग्लास को गौर से देखा और अपने होंठ चूसते हुए कहा:

'क्यों नहीं, अच्छा ... तो फिर पियो!'

उसने अपने मुंह के मेंढक जैसे सूराख में वोद्का उड़ेल ली। याश्का का काला चेहरा दागदार सा हो गया। कंपकंपताते हुए हाथों से जल्दी-जल्दी ग्लास भरते हुए उसने पाटदार आवाज में कहा:

'बुरा न मानना वासिली सेम्योनिच, हम भी आखिर इन्सान हैं, तुम तो जानते ही हो। तुम खुद भी तो मज़दूर थे, तुमको तो मालूम होना चाहिए।'

'बस-बस, ज्यादा चालाक न बनो!' आका ने बात काटते हुए गमनाक लहजे में कहा बारी-बारी हममें से हरेक के चेहरे को उसने गौर से देखा और फिर मेरे चेहरे पर नजरें जमाकर ग्लानिपूर्वक कहा:

'इन्सान! ... तुम लोग इन्सान नहीं हो। तुम तो जेलखाने के पक्षी हो। लो अब आओ पियें।'

रूसी सुस्वभाव जो चालाकी से खाली नहीं होता उसकी आंख में टिमटिमा रहा था। और उस झिलमिलाहट ने हमारे दिलों में शोले भड़का दिये थे। हल्की-सी मुस्कराहट सबके चेहरों पर प्रकट हुई और उनकी आंखों में लज्जा व पश्चाताप एक परछाईं की नाईं थिरकने लगा।

हमने ग्लास टकराए और पी गये। बंजारा फिर फट पड़ा:

'मैं सच बोलना चाहता हूं।'

'बस-बस, ज्यादा हाय-हाय न करो!' हमारे मालिक ने रूखा मुंह बनाकर उसे रोकते हुए कहा। 'कान के पर्दे फाड़े देता है। और तेरे सच की जरूरत किसे है? काम प्यारा है काम। ...'

'जरा ठहरिए। – दिखा नहीं दिया अपना काम मैंने कल-परसों?'

'सुनी-सुनाई बातें न दोहराओ। जरा अपने दिमाग पर भी जोर दो।'

'नहीं मैं तो कहता हूं, बताओ मैंने काम करके नहीं दिखाया?'

'बस ऐसा ही होना चाहिए।'

'और ऐसा ही होगा भी।'

हमारे आका ने एक निगाह ही में सबको भांपा और सिर हिलाते हुए फिर वही बात दोहराई।

'बस ऐसा ही होना चाहिए। मैं तो और कुछ नहीं कहता। अच्छी बात अच्छी है। ऐ सिपाही बच्चे, एक दर्जन बियर का आर्डर दो।'

यह आर्डर मानो विजय का नारा था। महफिल की जिन्दादिली और भी बढ़ गई। हमारे

मालिक ने अपनी आंखें बन्द कर ली और बोला:

'अजनबियों के साथ तो मैंने वोद्का की नदियां पी डालीं, लेकिन खुद अपने भाई-बन्दों के साथ महफिल का रंग जमता देखे जमाना बीत गया।'

हमदर्दी के भूखे दिलों, जिन्दगी की खुशियों से वंचित दिलों पर तो इस वाक्य ने आग पर तेल का काम किया। सब के सब एक-दूसरे से और भी सटकर बैठ गये। शातुनोव ने एक आह भर कर मानो सबकी ओर से कहा:

'हम तो तुम्हें जरा भी नुकसान नहीं पहुंचाना चाहते थे मगर आखिर करते क्या? तंग आ गये दे जिन्दगी से। पिछले जाड़े बड़ी मुसीबत से कटे। बस यही वजह है।'

मैंने महसूस किया कि मिलाप के इस उत्सव में मेरी उपस्थिति खटकती है और मेरे ही कारण दृश्य कुछ असहाय सा होता जा रहा। शराब फौरन ही उन लोगों के सिर पर सवार हो गई और वे मालिक के तांबे जैसे चेहरे को देख-देखकर मस्त हुए जा रहे थे और मुझे तो यह चेहरा भी कुछ असाधारण-सा प्रतीत हो रहा था। मंजरी आंख में दयालुता, विश्वास और बुद्धिमता की चमक दिखाई दी।

वह बड़े धीरे-धीरे और लापरवाही से बोल रहा था जैसे वह आदमी जिसे मालूम हो कि उसका मतलब फौरन समझ लिया जायेगा। और वह बैठा अपनी घड़ी की चांदी की जंजीर अपनी उंगलियों में लपेट रहा था।

'यहां कोई अजनबी नहीं है ... हम सब हमवतन हैं। मेरे ख्याल में सबका वतन एक ही है।'

'सो तो है ही। हमवतन!' लापतेव ने खुशी में कांपती हुई आवाज में कहा।

'भेड़ियों की सी आदत के कुत्ते कौन-कौन चाहेगा? ऐसा कुत्ता घर में रखने योग्य तो होता नहीं।'

सैनिक ने अपनी पूरी आवाज से चीखते हुए कहा:

'ख-ब-र-दा-र! सुनो!'

बंजारे ने आंख बचाकर अपने मालिक की तेज आंखों में झांककर कहा:

'तुम समझते हो कि मैं कुछ नहीं समझता?'

महफिल का रंग और भी जम गया। बियर की एक दर्जन बोतलों का और आर्डर दिया गया। ओसिप ने मेरी तरफ झुककर लड़खड़ाती हुई जबान में कहा:

'हमारा मालिक पादरी है। बिल्कुल लाट पादरी। ... लाट पादरी मठाधीश होता है।'

'यहां बुलाया किसने उसे? कमबख्त ने सारा मजा किरकिरा कर दिया।' आर्तेम ने जरा आवाज़ को दबाकर कहा।

हमारा मालिक मशीन की तरह बियर के ग्लास हलक में उड़ेलता रहा और बड़ी खामोशी के साथ। कभी-कभी बीच में बड़े रौब के साथ खखारकर गला साफ कर लेता जैसे अभी कुछ कहने ही वाला है। उसने मेरी मौजूदगी पर कोई ध्यान नहीं दिया। कभी-कभी जब उसकी उचटती हुई नजर मेरे चेहरे पर पड़ती तो खाली-खाली आंखों को जैसे कुछ दिखाई ही न देता।

मैं चुपके से उठकर बाहर खिसक आया। लेकिन आर्तेम लपककर मेरे पीछे आया।

वह खूब डटकर पिये हुए था। फूट-फूटकर रोने लगा और सुबकियां लेते हुए बोला:
'हाय भाई। ... मैं तो अकेला रह गया अब। ... बिल्कुल अकेला! ...'

राह चलते मालिक से कई बार भेंट हुई। हमने एक दूसरे को सलाम किया। अपने मोटे से हाथ से अपनी गरम टोपी उठाकर वह बड़ी संजीदगी के साथ कहता:

'जिन्दा हो?'

'जी हां, जिंदा हूं'

'बस यही चाहिए!' वह इस तरह कहता जैसे मंजरी दे रहा है। और मेरे कपड़ों का एक आलोचक की हैसियत से जांचते हुए अपने भारी-भरकम जिस्म को लुढ़काता आगे बढ़ जाता।

ऐसी ही एक मुलाकात एक बार शराबखाने के सामने हुई और उसने सुझाव दिया:

"कहो बियर पियें तो कैसी रहे?"

हम तीन सीढ़ियां उतरकर तलघर नुमा कमरे में पहुंचे। उसने वहां सबसे ज्यादा अन्धियारा कोना तलाश करके, एक भारी से स्टूल पर बैठकर चारों तरफ नजर दौड़ाई जैसे मेजें गिन रहा हो। हमारी मेज के अलावा वहां पांच मेजें और थीं। सब पर मटियाले-से लाल रंग के फटे-पुराने मेजपोश बिछे थे। एक ठिगनी सी बूढ़ी औरत काली शाल ओढ़े शराबखाने के मालिक की जगह बैठी मोजे बुन रही थी।

सफेद पत्थर की दीवारों पर तस्वीरों के चौखटे सजे हुए थे एक में भेड़िये के शिकार का दृश्य था और दूसरी में जनरल लोरिस मेलिकोव का कनकटा चेहरा, तीसरी में येरूशलम का एक दृश्य था और चौथी में दो नग्न लड़कियों की तस्वीर थी। इनमें से एक लड़की की चौड़ी छाती पर बड़े स्पष्ट शब्दों में यह इबारत लिखी हुई थी: 'वीरा गालानोवा, विद्यार्थियों की प्रेमिका, मूल्य 3 कोपेक' और दूसरी लड़की की आंखें किसी ने खोद ली थीं। उन बेहूदा और बेमौके तस्वीरों ने जो सारे वातावरण पर धब्बों की तरह पड़ी हुई थीं, तबियत को उदास कर दिया।

दरवाजे के शीशे में से एक नई इमारत की हरी छत के ऊपर शाम के समय का निर्मल आकाश दिखाई दे रहा था। और बहुत ऊपर असंख्य कौवों की डारें उड़ती चली जा रही थीं।

मालिक ने हांफ-हांफकर सांस लेते हुए उस असुंदर भोंडे स्थान को जांचा और जम्हाइयां लेते हुए सवाल शुरू कर दिये कि मेरी क्या आमदनी है अपनी नौकरी से खुश भी हूं या नहीं। उसकी तबियत दरअसल बातें करना न चाहती थी और खास रूसी किस्म की बेजारी और उकताहट उसके सिर पर सवार थी। आहिस्ता-आहिस्ता चुस्कियां लेकर उसने बियर पी और खाली ग्लास मेज पर रखकर अपनी उंगली से एक ऐसा झटका दिया कि अगर मैं न थाम लूं तो ग्लास फर्श पर गिरकर चकनाचूर हो जाय।

'क्यों पकड़ा?' मालिक ने शांतिपूर्ण स्वर में पूछा, 'गिर जाने दिया होता। ... छन्न से गिरकर टूट जाता। मैंने दाम दे दिये होते! ...'

गिरजाघर की घंटियां शाम की नमाज के लिए जोर-जोर से बजने लगीं और आसमान में उड़ते हुए कौवों की पंक्तियों में खलबली सी मच गई।

'मुझे ऐसी ही जगह पसन्द है।' सेम्योनोव ने बातचीत जारी करते हुए कहा 'यहां सुकून है। और मक्खियां भी नहीं हैं मक्खियां धूप और उसकी गर्मी पसंद करती हैं।'

अचानक उसने घृणापूर्ण ढंग से मुस्कराते हुए कहा:

'वह मूर्खा सोवका चली गई। अब उसने एक छोटे पादरी से इश्क कर लिया है। सिर गंजा, मैले-कुचैले, फटे कपड़े – यह है हुलिया उसका और शराबी पक्का है। वैसे विधुर है। उसे मन्त्र सुनाया करता है। और वह बच्चों की तरह फूट-फूटकर रोया करती है।... मुझ पर अब चीखती-चिल्लाती है। ... लेकिन मैं ... मुझे क्या परवाह? मुझे उसी में मजा आता है।'

कोई शब्द उसके गले में आकर फंस गया और उसकी आवाज़ रुक गई। फिर उसने झटके ले-लेकर बयान शुरू किया:

'मेरा विचार था कि तुम दोनों की शादी करा दूं – तुम्हारी सोफिया के साथ। ... न जाने तुम दोनों की गृहस्थी कैसी होती?...'

इस बात से तो मुझे भी बड़ा आनन्द आया और मेरी हंसी पर उसने भी फुदक-फुदककर कुछ छोटे कहकहे लगाये।

'शैतान!' उसने अपने कंधे फुदकाकर गुर्राते हुए कहा, 'पावन शैतान। हमारे भगवान के बनाये हुए नहीं ... छि ...।'

उसने अपनी रंगबिरंगी आंखों के छोटे-छोटे आंसू अपनी उंगली से पोंछ डाले।

'ओसिप के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है? याद है ना वह? नौकरी छोड़ दी उसने, गधा कहीं का ...'

'गया कहां वह?'

'कहते हैं तीर्थ-यात्रा को गया है। ... जितना अनुभव उसे है और जो उम्र उसकी है – अब तक वह नानबाई हो गया होता कभी का। अच्छा कामगार है वह। अपना काम खूब अच्छी तरह जानता है। ...'

सिर हिलाकर उसने चन्द घूंट बियर के पिये और आंखों पर हाथ का साया करते हुए बाहर देखकर बोला:

'देखो तो कितने कौवे हैं। शादी के दिन हैं – अच्छा भाई बड़बड़िये कौन-सी चीज़ फिजूल है और कौन सी वास्तव में जरूरत की? कोई नहीं जानता भाई, ठीक-ठीक कोई नहीं जानता ... छोटे पादरी ने कहा था, जरूरत की सब चीजें आदमियों के लिए हैं और फालतू चीजें भगवान के लिए। ... वह पिये हुए था उस वक्त। अपनी बात न्यायोचित ठहराने के लिए सब कोई-न कोई बहाना ढूंढ ही लेते हैं। ... देखो तो सही शहर में कितने फालतू लोग हैं। सब खा भी रहे हैं पी भी रहे हैं। लेकिन वह खाना-पानी है किसका, क्यों? ... हां और यह सब आता कहां से है?'

वह हड़बड़ाकर एकदम उठ खड़ा हुआ। एक हाथ जेब में डाला और दूसरा मेरी तरफ बढ़ाया। वह कुछ खोया-खोया सा नजर आता था! और उसकी आंख किसी फिक्र में सिकुड़ी हुई थी।

'अब चलना चाहिए, अच्छा नमस्ते।'

उसने एक भारी-सा बटुआ निकाला और उसके अन्दर उंगलियों को चलाते हुए इत्मीनान के साथ कहा:

'अभी पिछले दिनों पुलिस इन्सपेक्टर तुम्हारे बारे में मुझसे पूछताछ कर रहा था।'

'चाहता क्या था वह?'

मालिक ने अपनी सिकुड़ी हुई भवों में से देखते हुए लापरवाही के साथ कहा:

'तुम्हारे चाल-चलन और तुम्हारी जबान के बारे में पूछ रहा था। मैंने कह दिया कि तुम्हारा चालचलन खराब है और जबान कैंची की तरह चलती है! अच्छा, चल दिये!'

दरवाजा पूरा खोलकर और अपनी हाथी जैसी टांगें सीढ़ियों पर जमाकर रखते हुए उसने अपनी तोंद बाहर बाजार में धकेल दी।

उसके बाद फिर मेरी उससे मुलाकात नहीं हुई। मगर दस वर्ष बाद – मुझे योंही संयोगवश मालूम हुआ कि उसकी कारोबारी जिन्दगी किस तरह खत्म हुई। सन्तरी (मैं उन दिनों राजनैतिक कैदी था) मेरे लिए कुछ सौदा अखबार में लपेटकर लाया और उस पुर्जे में मैंने यह खबर पढ़ी:

'गुड फ्राइडे के त्योहार पर हमारे शहर में एक बड़ी ही विचित्र घटना घटी। वासिली सेम्योनाव 'बन' और बिस्कुटों की बेकरी का मालिक जो क्षेत्रों में बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति रूआंसी सूरत बनाये शहर में अपने ऋणदाताओं के घरों पर गया और उसने रो-रोकर उन्हें विश्वास दिलाना चाहा कि वह बिल्कुल तबाह हो गया है और उसने उनसे प्रार्थना की कि वे उसे जेल भिजवा दें। उस व्यक्ति के कारोबार से जो खूब चलता था, सभी लोग किसी ने भी उस पर विश्वास न किया। और त्योहार के दिन जेलखाने में गुजारने की उसकी बेमौके इच्छा से लोगों ने बड़ा आनन्द लिया। इस अद्भुत स्वभाव वाले व्यक्ति के सनकीपन से सभी परिचित थे। लेकिन चन्द ही दिनों बाद शहर भर के व्यावसायिक वर्ग में बड़ी खलबली मच गई क्योंकि पता चला कि सेम्योनाव कोई पचास हजार रूबल का कर्जा छोड़कर लापता हो गया है और अपनी हरेक बिकाऊ चीज ठिकाने लगा गया है। निस्संदेह उस पर धोखेबाजी से दिवालिया हो जाने का मुकदमा कायम होगा।'

इसके बाद फिर दिवालिया भगोड़े की विफल तलाश की परेशानी और सेम्योनोव की विभिन्न विचित्र हरकतों का ब्योरा दिया गया था। मैंने कागज के इस मैले-कुचैले और चिकने पुर्जे को पढ़ा और खिड़की के सामने जाकर विचारों के तूफान में खो गया। धोखेबाजी, अदूरदर्शी एवं दुर्भाग्यपूर्ण दीवालियापन की घटनाएं जीवन से पलायन, कायरता और अकर्मयता के अनुभव की घटनाएं रूस में बहुत आम थीं।

क्या परेशानी है यह, कैसी मुसीबत है?

एक आदमी है जो जिंदा है और कुछ सृजन करना चाहता है अपनी कामनाओं और अपने विचारों की रौ में। और सैकड़ों लोगों का दिमाग ख्वाहिश और मेहनत शामिल करता

है, जबरदस्त इन्सानी मेहनत हजम कर जाता है फिर अचानक और धोखा देकर सब कुछ अधूरा और अपूर्ण छोड़ देता है और अक्सर खुद अपने आप भी जिंदगी की हलचल से निकल भागता है। और इस प्रकार इन्सान के गाढ़े पसीने की मेहनत बरबाद हो जाती है। उसका नामोनिशान तक बाकी नहीं रहता। और अक्सर दुख, दर्द भरी मेहनत व मशक्कत की कली बिना खिले ही मुरझा जाती है।

जेलखाने की दीवार पुरानी और नीची है और भयावनी भी नहीं है! इस दीवार के बाहर, करीब ही बसन्त ऋतु के आनंददायक नीलाकाश में लाल ईंटों का एक ऊंचा अम्बर नजर आता है। जो शराब के कारखाने के मालिक और इजारेदार की मिल्कियत है। उसके समीप ही बल्लियों में और ऊंचे-ऊंचे मचानों के झाड़-झंकाड़ के दरम्यान मकानों की एक नई इमारत बन रही है जो किराये पर उठाई जाएगी।

इससे भी आगे एक मैदान फैला हुआ है जहां कहीं-कहीं गहरी लीकें हैं जिनके किनारों पर सब्जा उग आया है। और इधर दाहिनी ओर एक खंदक के ऊपर झुकी हुई चट्टान पर यहूदियों का कब्रिस्तान है जिसके पास ही दरख्तों के एक अंधियारे झुण्ड पर मुर्दनी छाई हुई है। मैदान में सुनहरी रंग के फूल झूम-झूमकर आपस में सरगोशियां कर रहे हैं। एक मोटी-सी काली मक्खी खिड़की के मैले-कुचैले शीशे से अपना सिर टकरा-टकराकर दीवानी हो रही है और मुझे मालिक का साधारण सा वाक्य याद आता है:

'मक्खियां धूप पसन्द करती हैं, उसकी गर्मी। ...'

सहसा शराब खाने का अन्धकारमय तहखाना मेरी आंखों में फिर जाता है जहां खूबसूरत और शोख रंगों की बेजोड़ तस्वीर लगी हुई थी – भेड़िये के शिकार का दृश्य, येरूशलम का शहर, वीरा गालानोव मूल्य तीन कोपेक और कनकटा जनरल।

'मैं इस किस्म की जगह पसन्द करता हूं।' मालिक ने ऐसे स्वर में कहा था जिसमें इन्सानी ईमानदारी की आवाज थी।

मैं उसके बारे में सोचना न चाहता था। इसलिए मैंने खिड़की से बाहर मैदान में पार नीलमूं जंगल को घूरना शुरू कर दिया जिसके आखिरी सिरे पर महान वोल्गा नदी बहती है – ऐसा मालूम होता है कि वह आत्मा को परिष्कृत करती हुई, निरर्थक भूत के चिन्ह धोती हुई बहती चली जा रही है।

'कौन सी चीज़ फिजूल है और कौन सी जरूरत की?' मालिक का यह वाक्य मेरे दिमाग पर आरे चला रहा था।

मेरी आंखों में उसका भारी-भरकम जिस्म बग्घी की गद्दी पर लोटता-पोटता, उछलता-थिरकता फिर रहा है। और वह गाड़ी में से जिन्दगी की तेज धार को अपनी मंजरी और चमकीली आंख से देखता नजर आ रहा है। योगोर लकड़ी की भांति मूर्ति बना हाथ फैलाए रास पकड़े बैठा है और अक्कड़ मिजाज कत्थई घोड़ा अपनी मजबूत टांगें झटकाता और सड़क के ठण्डे पत्थर पर अपने सुमों को खटपटाता चला जा रहा है।

'येगो, ... मैं किसका हूं? ... एक भेड़ निगल जाता है। ... तोंद भर लेता है – लेकिन कसम भगवान की वह फिर भी मुसीबत में ही रहता है।'

सीने में किसी चीज के उठने से दम घुटने का सा एहसास हो रहा था जैसे किसी

व्याकुल व पीड़ित भावना के कारण कलेजा मुंह को आ रहा हो उस शख्स के लिए जो नहीं जानता कि अपना क्या बनाये जो संसार में अपना कोई स्थान ही तलाश नहीं कर पाता। केवल किसी 'रंगरूट' के आलस्य और दासतापूर्ण चुहलों ही से नहीं बल्कि शायद शक्ति की हद से ज्यादा बहुतायत के कारण भी।

चाहे कोई हो ऐसी हालत में गिरफ्तार होकर बहुत ही तकलीफ होती है। और तरस आता है। अन्धी शक्ति के सर्वनाश पर दया आती है। वह बहुत ही तीव्र और परस्पर विरोधी भावनाओं को उकसाता है जैसे कोई नटखट बालक अपनी मां के दिल में। अगर अनिच्छा से बालक को कभी प्यार करना पड़े तो उसके बजाय वह उसे सजा देना बेहतर समझी है।

नई इमारत के सुर्ख ढेर के चारों ओर बल्लियों और मचानों के झाड़-झंखाड़ पर राज-मज़दूर चींटियों की तरह रेंगते नजर आ रहे हैं। इमारत की दीवारों की चोटियों पर छोटी-छोटी शहद की मक्खियों की भांति चिपटे हुए हैं। और इमारत को दिन-ब-दिन ऊंची करते जा रहे हैं।

और मज़दूरों और उनकी व्यस्तताओं की इस धमाधमी को देखते-देखते मुझे यह विशाल और पेचीदा संसार की भूल-भुलैयों के घने जाल में एक अकेला मुसाफिर ओसिप शातुनोव आनंदमग्न हो चलता, अविश्वस्त निगाहों से चारों ओर घूरता और हर बात को शौक से और पूरे ध्यान से सुनता नजर आता है कि शायद कहीं वे शब्द मिल जाएं जो 'जन-साधारण की खुशी' की कविता रचें।

मानव सृजन की सभी अभिव्यक्तियाँ उनके लिए अमूल्य थीं, सारा जीवन उनके लिए एक अनवरत सृजन था, लोगों के हित में निज नये मूल्यों के निर्माण की प्रक्रिया था, और उन्हें हर तरह का श्रम प्रिय था — चाहे वह साहित्यकार का हो, या खरादी का, या चित्रकार का, या बढ़ई का। आदमी के काम के मुताबिक ही वह उसकी कद्र करते थे।

—मिखाइल स्लोनीक्स्की



परिकल्पना ISBN 81-87425-47-4